गाछ

THE LITERATURE OF TREES

VAIBHAV DWIVEDI

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Vaibhav Dwivedi 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRoseONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7139-306-5

Cover design: Harpriya Singh
Typesetting: Namrata Saini

First Edition: November 2025

Acknowledgment

चिरंजीव वैभव की यह दूसरी पुस्तक है। पहली पुस्तक थी, The Window। जो विशुद्ध कल्पनाशील थी। वह उनकी किशोरावस्था में उमड़ने वाले विचारों से उपजी कल्पना, कल्पनाओं की उड़ान थी। कल्पनाएं जो आभास कराती थीं, उनका आख्यान था। उसकी पृष्ठभूमि में एक सीमित भौगोलिक स्पेस, किंतु व्यापक कैनवस वाली दुनिया थी। बनारस में गंगा तट पर प्रख्यात दार्शनिक जे. कृष्णमूर्ति के हाथों स्थापित एक बोर्डिंग स्कूल। उस बोर्डिंग स्कूल का एक छोटा सा कमरा। उस कमरे में रहने वाला एक प्रिहाईस्कूल का छात्र। जो उस कमरे की एक खिड़की से दिखने वाली दुनिया को देखता है। उस खिड़की से उसे जैसी दुनिया दिखी, उसे उसने अपनी कल्पना की बाहों में समेट कर The Window में उड़ेल दी। The Window में दर्शन है, उसके लेखन का अंदाज फिलास्फराना है। जाहिर है, एक दृढ़ दार्शनिक की स्थापना के परिसर में दार्शनिक वातावरण की सरसराहट तो रहती ही होगी। वैभव की पहली पुस्तक में हम उस दार्शनिकता की सरसराहट को अनूभूत कर सकते हैं। -यह जो दूसरी पुस्तक है, गाछ, यह शोध आधारित यथार्थ है, संवादशील कथावस्तु है, कथानक है। जिसकी विषयवस्तु सृष्टि की प्रत्यक्ष रचना है, जो दृष्टव्य है, दृष्टिगोचर है। हमारे आस-पास उपस्थित एवं दूरस्थ, अनेकानेक प्रजाति, प्रवृत्ति के वृक्ष, जो प्रकृति के वास्तविक प्रतिनिधि हैं। जो हमें प्रकृति के होने का प्रामाणिक आभास कराते हैं, जो धरा के भूषण हैं, हमारी प्राणवायु के सर्जक हैं, संवाहक हैं। यह पुस्तक एक पहलू से The Window का अनुवर्तन है, फालोअप। इसमें भी दर्शन है। इसमें विचार हैं, चिंतन भी है। तभी हम लेखक के शोधन से अनेक वृक्षों का कैरीकेचर देख पाते हैं। यह कैरीकेचर त्रिआयामी है, जो प्रसंग में आये वृक्ष के अस्तित्व में आने के बारे में बताता है, वृक्ष में निहित आत्मिक-सौंदर्य का बोध कराता है और उसकी सांसारिक उपयोगिता से भी अवगत कराता है। हम वैभव के लेखन कौशल से प्रत्येक वृक्ष को एक जीवंत प्राणी की तरह देख सकते

हैं और उन वृक्षों से मित्रता भी स्थापित कर सकते हैं, संभवतः इस पुस्तक का एक उद्देश्य यह भी है।

-वैभव, अब तरुण हैं, युवा हैं। किशोरावस्था में उन्होंने अपने छात्रावास के कक्ष की खिड़की से झांकते हुए एक दुनिया सोची, वह एक अलग दुनिया थी। तरुणाई में अब वह एक दूसरी दुनिया दिखा रहे हैं, जिसका फलक पहले से व्यापक है, गहरा है और खुले आसमान तले है। पहले वाली दुनिया अधिकतर बंद आंखों से सोची गई, यह जो दुनिया है, वह अधिकतर खुली आंखों से देखी गई। दोनों में ही दार्शनिकता से पुष्ट वैचारिक अंतर्दृष्टि की प्रभावी उपस्थिति है। इस सांसारिक जगत की रीति है कि युवावस्था में मन इंद्र हो जाता है, चित्त की चंचलता कभी-कभी अनियंत्रित हो जाती है। बरसात के बादल की भांति अनिर्णय का शिकार रहता है कि इस छत को भिगोयें या उस छत को। किंतु वैभव इस अवस्था में ध्यानस्थ हैं, साधनारत हैं, लक्ष्यकेंद्रित हैं, हैं। निश्चित रूप से उनके इस भाव-स्वभाव के मूल में अन्नपूर्णे वत्सला मां के संस्कार एवं उद्यमशील पिता की प्रेरणा है। वह खूब पढ़ें, खूब लिखें और निरंतर अपना लिखा हुआ समाज को पढ़ायें। -यह वैभव अभी और विराट होगा।

Credits to “Mr.Vishnu Tripathi

(Executive Editor, Dainik Jagran Group)

Expert Comments

इस उम्र में इतना परिपक्व लेखन चौंकाता है. क्योंकि..

'गाछ'—कहानियों का वह मनोरम वृक्ष है, जिसकी जड़ों में इतिहास, शाखों में शोध और पत्तों में हमारी लोक संस्कृति के पौराणिक संदर्भ सांस ले रहे हैं. इसकी छांव में बैठकर परंपरा और आधुनिकता एक साथ आपसे गुफ़्तगू कर रही हैं. हर कथा में समय की गहराई और संवेदना की सच्चाई साथ-साथ बह रही हैं. सहजता और गहनता की परतों से बुनी भाषा की पगडंडी पर वृक्षों की आत्माएं आपके साथ चल रही हैं. और, इन सबके बीच से छनकर आ रही है युवा लेखन के वैभव की ताज़ी बयार, जो आने वाले समय का वादा भी है और उसके सरोकारों को गंभीरता से रचने का आह्वान भी.

By Neeraj Gupta (Journalist UP TAK)

हर वृक्ष का अपना एक चरित्र होता है! पीपल की कांपती पत्तियां उसकी चंचलता दर्शाती हैं, तो वहीँ बरगद एक बूढ़े बाबा जैसा बाहें फैलाये बच्चों को अपने पास पुकारता है! ताड़ का पेड़ देखने में तो घमंडी लगता है, पर तूफ़ान आने पर वही एक पेड़ है जो गिरता नहीं क्यूंकि वह हवाओं के साथ झुकना और झूलना जानता है! वृक्ष हमारी भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग रहे हैं, हमारी नानी-दादी की कहानियों में उनका बसेरा हैं! हमारे वेद-पुराणों में उनका उच्च स्थान रहा है! गौतम बुद्ध की ज्ञान प्राप्ति हो या फिर लंका में सीता की अशोक वाटिका, वृक्षों ने हमेशा अपनी महत्वता बनाए रखी है! हम आज भी वृक्षों की पूजा करते हैं, और वृक्ष का ब्याह भी रचाते हैं! मुझे बहुत ख़ुशी है कि हमारे देश के युवा वैभव दिवेदी ने अपनी पुस्तक में हमारे वृक्षों की सांस्कृतिक धरोहर को इतनी सरलता से सहेजा है! हमारी युवा पीढ़ी को इसे पढ़ना चाहिए और वृक्षों से जुड़ना चाहिए!

By Nidhi Jamwal (Environmental Journalist)

महान वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बोस जब छोटे थे तो एक दिन रात ढलने के बाद अपने घर के बगीचे में एक पेड़ पर से अपनी गेंद उतारने की कोशिश कर रहे थे। तभी उनकी मां ने कहा कि बेटा सुबह अपनी गेंद उतारना। रात हो गई है, पेड़ पौधे भी सो गए हैं। बोस का बाल मन सोचने लगा कि क्या पेड़ पौधे भी सोते हैं, तो क्या उनके भी जान होती है। क्या वो भी खुश होते हैं, वो भी उदास होते हैं। इस सोच ने बालक जगदीश चंद्र बोस को वैज्ञानिक बनने की प्रेरणा दी। वैभव द्विवेदी ने साहित्यिक अंदाज में पेड़ों की आत्मकथा लिख दी है। इनकी किताब को पढ़ने से लगता है कि पेड़ पौधे भी हम इंसानों की तरह ही अपने अतीत से जुड़े होते हैं और वर्तमान को सींच कर बेहतर भविष्य का निर्माण करते हैं। वैभव की इस किताब को आप एक बार पढ़ना शुरु करेंगे तो यकीनन आखिर तक पढ़ जाएंगे लेकिन इसमें उनकी जिंदगी की कहानी है, जिनकी छांव में हमारी जिंदगी पलती है।

By Vichitramani Rathore (Writer/Journalist NDTV)

बचपन में स्कूल से जब लौटती थी तो घर घुसने के पहले अपने बागान के अमरूद के पेढ़ पर चढ़कर कुछ वक्त जरूर बीताती थी। बिना स्कूल के कपढ़े बदले । बिना खाना खाए। माँ चिढ़ जाती थी। लेकिन पश्चिम बंगाल के आसनसोल के उस घर का वो पेढ़, वो बेहद ख़ास था। जिस दिन किसी वजह से उसे काटने की नौबत आई लगा बचपन का एक धागा टूट गया। आज गाछ पढ़कर वो यादें फिर ताज़ा हो गईं। आज एक गुलमोहर है जो बेहद खास है। भागम भाग की इस ज़िंदगी में जहां सुबह से लेकर रात तक हम किसी ना किसी बुरी ख़बर को पढ़ रहे होते हैं, सुन रहे होते हैं.. वहाँ गाछ एक स्थिरता , कुछ सुकून का एहसास है। आप थमकर सोचते हैं कि आपकी जड़ें कितनी मज़बूत है॥ ज़िंदगी की कौन सी शाखाएँ आपको कहाँ लेकर गईं हैं। किसी पेढ़ का समाज के बदलाव के साथ कितने गहरे रिश्ते हो सकतें हैं जिनके बारे हम कभी सोचते भी नहीं। हर पेढ़ का अपना इतिहास है ...उसमें कभी ख्याल ही नहीं आया कि हम झंक कर देखेंगे तो कुछ सीख पाएंगे। एक पेढ़ ने, किसी गाछ ने कितना कुछ देखा है... उसकी यादों के साए हमें छांव देती हैं...वैभव ने सरल भाषा में

एक बहुत अलग तरीक़े की किताब लिखी है जो सामाजिक बदलावों को पर्यावरण और पेढ़ों के नज़रिए से उकेरती हैं। अपने फोन कंप्यूटर को कुछ देर अलग रखें और गाछ को महसूस कीजिए।

Smita Sharma (Journalist)

“Special Thanks to Miss Aashika Singh.”

अनुक्रमणिका

Introduction 1
महानायक अशोक 8
रणभूमि का अर्जुन 24
अमलताश : प्रकृति की मुस्कान 42
अस्तित्व का अखंड स्तंभ: बनयान 59
चिलकती चिलबिल 73
बबूल का विरह 91
कान्हा का कदंब 108
प्रेम का महुआ 127
देव वृक्ष: देवदार 147
कड़वी छाँव का पीपल 165
आग वन पलाश 176
गाछ : पीड़ा, प्रेम, पुनर्जन्म और पूजा – बंगाल की आत्मकथा 196

Introduction

गाछ : एक जीवित आत्मा की कहानी

कहानियों का भी आकार होता है. वे केवल शब्दों का खेल नहीं होतीं, बल्कि अपने भीतर जीवन की धड़कनें, लोक का संगीत और समय का इतिहास सँजोए रहती हैं. पेड़—या **गाछ**, जैसा कि बंगाल में कहा जाता है—हमेशा से कहानियों का हिस्सा रहे हैं. पेड़ केवल छाया नहीं देते, वे हमारी स्मृतियों को थामे रहते हैं. उनका तना समय की लकीरों की तरह होता है, उनकी शाखाएँ उम्मीदों की तरह फैलती हैं और उनके फूल जीवन की क्षणभंगुर सुंदरता का रूप होते हैं.

इस किताब का नाम **"गाछ"** रखना केवल एक साहित्यिक निर्णय नहीं था, यह एक आत्मिक आग्रह था. गाछ मेरे लिए शब्द से कहीं बड़ा है. यह बंगाल की संस्कृति, कोलकाता के जनजीवन और प्रकृति के उस गहन दर्शन का प्रतीक है जिसमें पेड़ केवल पेड़ नहीं, बल्कि परिवार, साथी और रक्षक माने जाते हैं.

गाछ: एक शब्द, एक दर्शन

हिन्दू पुराणों में कहा गया है कि प्रकृति में 84 लाख योनियाँ हैं, और उनमें एक योनि पेड़ों की है. यह कोई साधारण बात नहीं. पेड़ केवल जीव नहीं, बल्कि आत्मा हैं. वे बिना बोले भी जीवन का भार उठाते हैं. वे न रोते हैं, न शिकायत करते हैं, लेकिन अपनी हर साँस से हमें जीवन देते रहते हैं.

गाछ—यह शब्द बंगाली जीवन में केवल पेड़ के अर्थ में नहीं, बल्कि एक गहरे भाव में बोला जाता है. जैसे कोई माँ अपने बच्चे को गले लगाती है, वैसे ही गाछ हर प्राणी को छाँव देता है. जब भी कोई थका-हारा इंसान इसकी छाया में बैठता है, तो वह सिर्फ़ ठंडक ही नहीं, बल्कि अपनापन भी पाता है.

कोलकाता: सिटी ऑफ़ जॉय और हरियाली की गाथा

कोलकाता—वह शहर जो अपनी विनम्रता और आत्मीयता के लिए जाना जाता है. इसे *सिटी ऑफ़ जॉय* कहा जाता है, लेकिन यह केवल आनंद का शहर नहीं, बल्कि संघर्ष, स्मृतियों और लोकजीवन का अद्भुत संगम है. यहाँ की गलियों से गुजरते हुए आपको औपनिवेशिक अतीत की परछाइयाँ भी मिलेंगी और मिट्टी से जुड़ी लोककथाओं की सुगंध भी.

रेस-कोर्स से मैदान होते हुए विक्टोरिया मेमोरियल तक अगर आप पैदल चलें, तो केवल पेड़ों की कतारें नहीं दिखतीं, बल्कि ऐसा लगता है मानो आप समय के किसी पुराने गलियारे में टहल रहे हों. हर 20 मीटर पर खड़े गूलर के पेड़ (फाइकस ग्लोमेरेटा) आपको यह याद दिलाते हैं कि शहर की आत्मा केवल इमारतों में नहीं, बल्कि उन गाछों में भी बसी है जो सदी दर सदी यहाँ खड़े हैं.

मैदान और विक्टोरिया का क्षेत्र कोलकाता का सबसे बड़ा **ग्रीन अर्बन स्पेस** है. यह केवल फेफड़ा नहीं, बल्कि शहर की धड़कन है. अगर यहाँ से एक भी पेड़ काट दिया जाए, तो कोलकाता की साँसें थम जाएँगी. यही वजह है कि इस शहर में पेड़ केवल हरियाली नहीं, बल्कि जीवन का पर्याय हैं.

बोटैनिकल गार्डन: विज्ञान और संस्कृति का संगम

कोलकाता का आचार्य जगदीशचंद्र बोस इंडियन बोटैनिकल गार्डन केवल पौधों का संग्रह नहीं, बल्कि एक जीवित पुस्तकालय है. 1787 में जब अंग्रेजों ने इसकी नींव रखी थी, तब शायद उन्होंने सोचा भी नहीं होगा कि यह गार्डन भारत की प्रकृति और संस्कृति का इतना बड़ा केंद्र बन जाएगा.

यहाँ का सबसे बड़ा बरगद—जो सैकड़ों शाखाओं में फैला हुआ है—केवल पेड़ नहीं, बल्कि एक नगर है, जिसमें हर जड़ और हर शाखा अपनी अलग कहानी कहती है. बंगाल का बच्चा जब पहली बार इस बरगद के नीचे दौड़ता है, तो वह केवल खेल नहीं खेल रहा होता, बल्कि सदियों पुरानी जड़ों से जुड़ रहा होता है.

कोलकाता यूनिवर्सिटी और यहाँ के विद्वानों ने इस गार्डन से विज्ञान सीखा, पर आम लोगों ने यहाँ से जीवन का पाठ पढ़ा. यह गार्डन हमें यह याद दिलाता है कि **गाछ केवल बॉटनी नहीं, बल्कि दर्शन है.**

सुंदरबन और मैंग्रोव: जीवन की पहली ढाल

अगर आप पश्चिम बंगाल की दक्षिणी सीमा पर जाएँ, जहाँ बंगाल की खाड़ी धरती से मिलती है, तो वहाँ मिलेगा—**सुंदरबन**.- दुनिया का सबसे बड़ा मैंग्रोव वन. यहाँ के पेड़ देखने में साधारण लग सकते हैं, लेकिन ये ही बंगाल के असली रक्षक हैं.

जब समुद्र से चक्रवाती तूफ़ान उठता है, तो सबसे पहले यह मैंग्रोव उसके सामने खड़े हो जाते हैं. ये अपनी जड़ों और शाखाओं से आँधी की गति तोड़ते हैं, लहरों को रोकते हैं और धरती पर बसे लोगों को जीवन देते हैं.

तूफ़ान चाहे कितना भी भयावह हो, बंगाल की पहली ढाल हमेशा यही गाछ होते हैं.

यहाँ का जनजीवन इन पेड़ों पर टिका है. मछली पालन, शहद, लकड़ी और सुरक्षा—सबकुछ इन्हीं से आता है. सुंदरबन हमें यह सिखाता है कि कभी-कभी सबसे साधारण दिखने वाले पेड़ ही सबसे असाधारण रक्षक होते हैं.

बंगाल का जनजीवन और गाछ

बंगाल का जीवन सरल है, लेकिन उसी सरलता में उसका सौंदर्य छिपा है. एक छोटे से बंगाली घर में आँगन में नारियल का पेड़, बगल में केले का पौधा और सामने तालाब—यही उनका संसार है. यही तालाब उन्हें भोजन देता है, यही पेड़ उन्हें छाया और फल देते हैं, और यही गाछ उनकी पूजा में देवता बन जाते हैं.

दुर्गा पूजा के समय केले के पेड़ को गणेश जी की पत्नी मानकर सजाया जाता है. उसे धोया जाता है, साड़ी पहनाई जाती है और परिवार का हिस्सा बनाया जाता है. यह परंपरा बताती है कि गाछ केवल प्रकृति का हिस्सा नहीं, बल्कि रिश्तों का भी हिस्सा हैं.

हरसिंगार: त्याग और सौंदर्य की कहानी

गाछों की इन तमाम कहानियों में एक कथा बार-बार दिल को छूती है—**हरसिंगार (पारिजात)** की. समुद्र मंथन से निकला यह दिव्य वृक्ष स्वर्गलोक में था. जब सत्यभामा ने इसे पाने की इच्छा की, तो कृष्ण ने इन्द्र से युद्ध किया और इसे धरती पर ले आए.

लेकिन असली महिमा कृष्ण की नहीं, हरसिंगार की थी. क्योंकि यह वृक्ष अपने फूलों को कभी अपने पास नहीं रखता. रात भर खिलकर सुबह झर जाता है—मानो कह रहा हो कि **सौंदर्य अपने लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए होता है.** यही कारण है कि देवता, कृष्ण और रानियाँ—सभी उसे पाने के लिए लालायित थे.

हरसिंगार हमें यह सिखाता है कि त्याग ही सबसे बड़ा गौरव है. उसकी सुगंध, उसकी कोमलता और उसका झरना—जीवन का दर्शन है.

इस किताब का नाम **"गाछ"** रखना मेरे लिए केवल साहित्यिक निर्णय नहीं, बल्कि एक व्यक्तिगत यात्रा है. इस निर्णय ने मुझे बहुत कुछ दिया, शायद जब मैं कोलकाता में था और वहाँ फोर्ट विलियम से विक्टोरिया तक जा रहा था, तब मैदान में खड़े हर पेड़ मुझे कुछ न कुछ बताने की कोशिश कर रहे थे. 1973 मे सुंदरलाल बहुगुणा ने जब "चिपको आंदोलन" की शुरुआत की थी, तब उन्हें उन पेड़ों को बचाने के लिए मेहनत करनी पड़ी थी. लेकिन आज वही पेड़ जो सालों-साल एक ही जगह खड़े रहे, वह मुझसे लगातार कुछ कहने का प्रयास करते रहे, अपनी कहानी बताना उनके लिए बहुत बड़ी उपलब्धि जैसी साबित हो रही थी. मुझे यह एहसास होता है कि गाछ केवल प्रकृति नहीं, बल्कि **हमारी आत्मा का विस्तार** हैं.

हर पेड़ मुझे यह कहता हुआ लगता है— "मैं तुम्हारे साथ खड़ा हूँ. जब तूफ़ान आएगा, मैं रोकूँगा. जब धूप तपेगी, मैं छाँव दूँगा. जब तुम अकेले होगे, मैं चुपचाप तुम्हारा साथी बनूँगा. मैं गिरूँगा भी, तो भी तुम्हारी धरती को सजाने के लिए."

इसलिए यह किताब केवल पेड़ों की कहानियाँ नहीं, बल्कि उन आत्माओं की गाथा है जो बिना कुछ माँगे हमें सबकुछ देती रहती हैं.

गाछ—यह किताब, यह नाम, और यह दर्शन—दरअसल जीवन का सबसे गहरा सच है.

क्योंकि अंत में, इंसान की तरह हर गाछ भी यही कहता है—

“मेरा होना तुम्हारे होने के लिए है.”

और इसी के साथ चलिए आप मेरी और इन गाछों की यात्रा पर.

महानायक अशोक

चारों ओर घना सन्नाटा था. लंका की भूमि पर कदम रखते ही मानो प्रकृति भी थम सी गई थी. हवा की सरसराहट में एक अनकहा दुःख छुपा था, और उस दुःख का साक्षी बना था एक वृक्ष — **अशोक**.

सोने की लंका के एक कोने में थी एक वाटिका, जहाँ न स्वर्ण की चकाचौंध थी, न रावण के वैभव का घमंड. वहाँ था तो बस एक स्त्री का मौन विलाप और उसका एकमात्र सहारा — **अशोक वृक्ष**, जिसकी छाया में बैठकर माता सीता अपने राम की प्रतीक्षा करती रहीं.

क्या ये वही वृक्ष है जिसने एक देवी का दुःख अपने अंदर समेट लिया था? क्या इस वृक्ष की हर पत्ती आज भी उस वेदना की गवाही देती है?

रामायण के इस अध्याय में सीता जी की पीड़ा, उनका संयम, और उनका संकल्प अशोक वृक्ष के नीचे आकार लेता है. पर क्या यह केवल संयोग था कि रावण ने सीता को अशोक वृक्ष के नीचे रखा? या इस वृक्ष का कोई गहरा आध्यात्मिक अर्थ था?

इस अध्याय में हम उस पवित्र वृक्ष की कथा जानेंगे, जिसके नीचे बैठकर सीता जी ने न केवल अपनी मर्यादा की रक्षा की, बल्कि उस वृक्ष को भी अमरता प्रदान कर दी — एक ऐसा वृक्ष, जो भारतीय संस्कृति में **"शोकहर"** बनकर आज भी पूजनीय है.

अशोक की कहानी सिर्फ रामायण से ही प्रेरित नहीं है बल्कि इस पेड़ की कहानी का आधार है "धैर्य". वीरान उस लंका में समय का साथी कोई नहीं था. माता सीता हर पल भगवान राम का इंतज़ार करती, और हर उस कहानी में हर उस मोड़ की आशा में उन्हें भगवान राम ही आते दिखाई देते. माता सीता की कहानी धैर्य और विश्वास को सम्बोधित करता है. कहानी सिर्फ ऐसे ही नहीं आगे बढ़ी, यह कहा जाता है कि करीब एक साल से ऊपर माता सीता बंधक के रूप में रावण की लंका में थी.

कहानियों में ऐसा कहा गया है कि सीता जी अपना पूरा दिन अशोक के पेड़ के नीचे बिताया करती थी लेकिन उसमें सबसे खास बात यह थी कि उनका आत्मबल इतना मज़बूत था, वह कभी इस पेड़ के नीचे रोई नहीं. अपने भगवान से दूर इतने लम्बे समय तक हमेशा सीता जी ने इंतज़ार किया. उनकी इतनी लम्बी तपस्या ने भगवान राम को भेजा था.

अशोक वृक्ष: एक मूक साक्षी

लंका की उस अशोक वाटिका में जब माता सीता को रखा गया, तब उनके चारों ओर न रक्षक थे, न कोई सखा. पर एक सखा था, जिसने न केवल उन्हें छाया दी, बल्कि हर क्षण उनके साथ मौन रहकर उनके दुखों को साझा किया — वह था अशोक वृक्ष.

'अ' का अर्थ है **नकारात्मकता**, और **'शोक'** का अर्थ है **दुःख**. यानी अशोक वह वृक्ष है जो **दुःख का अंत करता है**. शायद यही कारण रहा होगा कि रावण ने अज्ञानता में उन्हें उसी वृक्ष के नीचे रखा, जबकि वह वृक्ष माता सीता के लिए एक आध्यात्मिक संबल बन गया.

वह वृक्ष उनके साथ तपस्या में सहभागी बना. न कोई संवाद, न कोई शब्द, बस उसकी छाया ने एक तपस्विनी का साथ दिया. दिन गुजरते, रातें बीततीं — पर वह वृक्ष स्थिर खड़ा रहा, सीता के आत्मबल और विश्वास का मौन साक्षी बनकर. कभी ऐसा सोचना ही बहुत मुर्ख जैसा लगेगा कि आखिर एक पेड़ आपकी कैसे मदद कर सकता है? वृक्ष कभी भी सिर्फ छाया ही नहीं देते हैं बल्कि यह मन की शान्ति और आपको अवसाद से दूर रखते हैं. ऐसी कई थेरेपी होती है जिसमें लोग पेड़ों से बात करके अपने मन को शान्ति प्रदान करते हैं. ऐसा मैंने भी आज़माया है और यकीनन इसका फल ज़रूर मिलता है.

अशोक वाटिका और हनुमान जी की भेंट

रामायण का एक अत्यंत मार्मिक प्रसंग है जब **हनुमान जी लंका पहुँचते हैं** और माता सीता से पहली बार अशोक वाटिका में मिलते हैं. हनुमान जी को देखकर जब माता सीता को विश्वास हुआ कि यह प्रभु राम के दूत हैं, तो उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह चली.

हनुमान जी ने राम की अंगूठी उन्हें दी, और सीता जी ने चूड़ामणि देकर राम तक संदेश भेजा. यह सारी घटना भी **अशोक वृक्ष की छाया में ही घटित हुई**. हनुमान जी का वहां पहुँचना इस वृक्ष के महत्व को और बढ़ा देता है — यह केवल एक वृक्ष नहीं, बल्कि **राम-भक्ति की धरती बन गया था**.

वृक्षों के पास बैठने या उनके नीचे समय बिताने से मस्तिष्क की **तनाव पैदा करने वाले हार्मोन (जैसे कोर्टिसोल)** कम हो जाते हैं. हरे रंग की प्राकृतिक छटा आंखों को **ठंडक और आराम** देती है. पत्तियों की सरसराहट और हवा की हलचल जैसे **प्राकृतिक संगीत** मन को शांत करते हैं — यह ध्यान (मेडिटेशन) जैसा प्रभाव देता है. कहानी कुछ ऐसी ही नहीं होती है बल्कि कहानियों में होता है रस, भाव और इन्हीं कहानियों में होती भावनाओं का समंदर जोकि हमेशा से ज़्यादा लोगों को मदद करने का बल रखता है. अशोक के पेड़ की कहानी में वह बल है, उस पेड़ की कहानी में वह आत्मा है जो लोगों को उनके स्वछंद भाव में रहने के लिए मदद करता है. तो अब मैं असल कहानी की शुरुआत करता हूँ.

सबके शोक को हरने वाला

भारतीय संस्कृति में अशोक की पेड़ की बहुत मान्यता है. यह पेड़ बहुपयोगी तरीकों से लोगों के दुखों को हरता है और मनुष्य को उनके जीवन में हर्षोउल्लास का माहौल देता है. अशोक के पेड़ को सिर्फ रामायण में ही नहीं बल्कि आयुर्वेद, भारतीय संस्कृति और वास्तुशास्त्र में भी विशेष स्थान प्राप्त है. इसे शोकहर कहाँ गया है, यानी वह चीज़ जो मनुष्य के दुःख को हरता है. आयुर्वेद में अशोक की छाल का प्रयोग स्त्री रोगों की चिकित्सा में किया गया है. विवाह स्त्रीसम्मान से जुड़ी कई भारतीय परम्पराओं में अशोक के पेड़ की पूजा की जाती है. यह वृक्ष मंगलकारी, शुद्ध और सकारात्मक ऊर्जा देने वाला माना जाता है. वास्तुशास्त्र के हिसाब से इस पेड़ को घर में लगाने से घरों में बैठी नकारात्मकता दूर भागती है.

जिस अशोक वृक्ष के नीचे माता सीता ने धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा की, वह आज भी हमारे जीवन में प्रतीकात्मक रूप से उपस्थित है. जब भी कोई विपत्ति आती है, जब जीवन में अकेलापन महसूस होता है, तब मन उसी वृक्ष की शरण चाहता है — जहाँ आश्रय मिले, शांति मिले, और भीतर से शक्ति मिले. अशोक वृक्ष मात्र एक पेड़ नहीं, बल्कि **आत्मबल का प्रतीक है.**

असली अशोक और नकली अशोक में फर्क

अशोक का पेड़ बहुचर्चित पेड़ है. सबके घर में आस-पास या घर में लोगों ने अशोक का पेड़ ज़रूर लगाया होगा. लेकिन आजतक हम ये नहीं जान पाए कि जो अशोक का पेड़ हमलोग देखते हैं, वह असल अशोक नहीं है. भारत में आमतौर पर जो पेड़ "अशोक" के नाम से लगाए जाते हैं, वे वास्तव में **"पॉलीअल्थिया लोंगिफोलिया" (False Ashoka)** होते हैं, जिसे **झूठा अशोक** कहा जाता है. असली अशोक वृक्ष (Saraca asoca) और नकली अशोक एक जैसे दिखते हैं, लेकिन असली अशोक बहुत धीरे-धीरे बढ़ता है और खास जलवायु में ही पनपता है. इसी कारण आम लोग नकली अशोक को लगाना आसान मानते हैं.

असली अशोक वृक्ष मुख्यतः **घने और नम जंगलों** में पाया जाता है, खासकर **पश्चिमी घाट**, **पूर्वी भारत** और कुछ भागों में **दक्षिण भारत** में. शहरीकरण, वनों की कटाई, और औद्योगीकरण की वजह से ऐसे प्राकृतिक आवास लगातार नष्ट हो रहे हैं. जिससे अशोक जैसे विशेष पर्यावरण की मांग करने वाले पेड़ों की संख्या कम हो रही है. अशोक वृक्ष **धीरे-धीरे बढ़ता है** और इसकी **प्राकृतिक पुनरुत्पत्ति (natural regeneration)** की प्रक्रिया भी जटिल होती है. इसके बीजों से नए पौधे उगाना आसान नहीं है, और उन्हें खास देखभाल की ज़रूरत होती है. इसलिए किसान या बागवानी करने वाले इसे लगाने से बचते हैं.

अशोक के पेड़ का फैलाव ज़्यादा होता है और इसे लगाने के लिए बड़ी जगह चाहिए. शहरों में **स्पेस की कमी** और जल्द बढ़ने वाले सजावटी पौधों की मांग के कारण लोग अशोक वृक्ष की बजाय छोटे पौधों को प्राथमिकता देते हैं.

आइये मैं आपको अशोक के पेड़ से जुड़ी कुछ कहानियां सुनाता हूँ, जिससे इस पेड़ के बारे में याद करना और इसे पहचानना आपके लिए आसान हो जाएगा.

अशोक वृक्ष और महाप्रजापति गौतमी

महामाया देवी जोकि सिद्धार्थ गौतम बुद्ध की माँ थी, उनका निधन गौतम बुद्ध के पैदा होने के कुछ दिन बाद ही हो गया. तब गौतम बुद्ध की सौतेली माँ महाप्रजापति गौतमी जोकि महामाया देवी की बहन थी, उन्होंने ही सिद्धार्थ गौतम का लालन-पालन किया. **महाप्रजापति गौतमी** को इतिहास में पहली महिला बौद्ध भिक्षुणी (संघ में प्रविष्ट महिला) होने का सम्मान भी प्राप्त है.

समय बीतता गया. सिद्धार्थ बुद्ध बने और अपने ज्ञान का प्रचार करने लगे. हजारों शिष्य उनके अनुयायी बने. लेकिन महाप्रजापति गौतमी की आत्मा तब तक अशांत थी, क्योंकि वे स्वयं भी **आध्यात्मिक मुक्ति** की चाह रखती थीं. उन्होंने कई बार बुद्ध से निवेदन किया कि उन्हें भी **संघ (बौद्ध भिक्षुणियों के संघ)** में स्थान मिले. प्रारंभ में बुद्ध ने यह निवेदन स्वीकार नहीं किया.

लेकिन गौतमी का संकल्प अडिग था.

कहा जाता है कि एक दिन, जब बुद्ध एक बाग में ध्यानरत थे, उसी स्थान पर **एक सुंदर अशोक वृक्ष** खिला हुआ था.

महाप्रजापति गौतमी उसी वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गईं.

उनका मन अत्यंत शांत था, पर भीतर एक पीड़ा और खोज थी — **ज्ञान, मुक्ति और आत्मा की पूर्णता की खोज**.

उस अशोक वृक्ष के नीचे बैठकर उन्होंने गहरे ध्यान की स्थिति में प्रवेश किया.

ध्यान के दौरान उन्हें **तीन अनुभव** हुए:

1. **करुणा** – उन्होंने संपूर्ण जगत के दुःख को महसूस किया.
2. **त्याग** – उन्होंने अपने समर्पण को बुद्ध और धर्म के चरणों में अर्पित किया.

3. **शांति** – अंततः उनके भीतर एक गहन शांति उतरी, जैसे कि सारा जीवन अब समझ में आ गया हो.

यह स्थान उनके लिए केवल एक वृक्ष की छाया नहीं, बल्कि **एक आत्मिक प्रकाश की अनुभूति** बन गया.

महाप्रजापति गौतमी ने अशोक वृक्ष के नीचे ध्यान करने के बाद फिर से बुद्ध से निवेदन किया.

इस बार बुद्ध ने उनकी **अटल तपस्या और दृढ़ निष्ठा** को देखकर उन्हें संघ में प्रवेश दे दिया.

यहीं से **भिक्षुणी परंपरा की शुरुआत** मानी जाती है.

बौद्ध इतिहास में यह एक ऐतिहासिक मोड़ था — महिलाओं को भी आध्यात्मिक अधिकार मिलना शुरू हुआ.

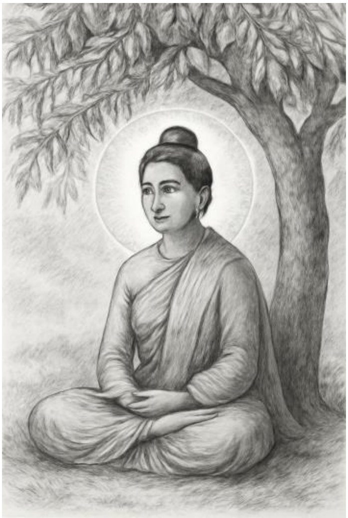

अशोक की कहानी से प्रेरित किस्से हमेशा से लोगों के लिए प्रेरणास्रोत बने रहे हैं. सिर्फ भिक्षाणु परंपरा की शुरुआत ही अशोक के पेड़ को महत्त्व नहीं दिलाती है बल्कि कई ऐसी कथाएं हैं, कई ऐसी कहानियां हैं जो यह साबित कर देती है कि अशोक का पेड़ एक संकल्प के तौर पर लोगों के

जीवान में हमेशा जीवित रहेगा. मान्यता है कि जब कोई स्त्री इसे अपने पैर से स्पर्श करती है, तो यह **फूलने लगता है** — जिससे यह वृक्ष **नारी शक्ति** से गहराई से जुड़ा हुआ है.

श्री लंका की अशोक वाटिका

महापुराण और रामायण की कहानी में अशोक वाटिका का ज़िक्र बहुत बार हुआ है. इसका सिर्फ एक कारण है. माता सीता अशोक वाटिका के नीचे ही भगवान् राम का इंतज़ार किया करती थी. रावण की लंका अब श्री लंका के नाम से जानी जाती है, यह एक देश है जोकि भारत से बहुत नज़दीक है. श्रीलंका एक द्वीप है जिसके मध्य भाग में ऊँचे पहाड़ हैं. श्रीलंका को राज्यों के बजाय प्रांतों में विभाजित किया गया है. कुल मिलाकर नौ प्रांत हैं और मध्य प्रांत में सुंदर पहाड़ियाँ हैं. इस क्षेत्र में 'नुवारा एलिया' नाम का एक शहर है जो समुद्र तल से 6200 फीट की ऊँचाई पर स्थित है. 'सीता एलिया' गाँव यहाँ से 5 किलोमीटर दूर है. यहाँ सीता नदी बहती है जिसके तट पर राम, लक्ष्मण और सीता की 3000 साल पुरानी मूर्तियाँ हैं. यह मंदिर बाद में बनाया गया था. राम लक्ष्मण और सीता के मंदिर के पीछे बहुत ही घना एक जंगल है, जहाँ पर आम आदमी आसानी से नहीं जा पाता है. यह जंगल अशोक वृक्ष का है, जिसे लोग अशोक वाटिका कहते है.

इस कहानी में सबसे ख़ास बात यह है कि अशोक वाटिका की मिट्टी काले रंग की है. इसके पीछे भी एक मान्यता जुड़ी हुई है, चूँकि महाबली हनुमान ने रावण की लंका में आग लगाई थी जिसकी वजह से यहाँ की मिट्टी आज तक काली ही रह गई. यह सिर्फ अशोक वन की ही मिट्टी के साथ है, अशोक वन के सामने की मिट्टी लाल रंग की है. इस वाटिका में जाने पर अशोक वृक्ष ध्यान आकर्षित करते हैं. इसके पत्तों में शिराएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं. इसके पत्ते को हाथ में लेने पर पूरे शरीर में चैतन्य का प्रवाह महसूस होता है. इस वृक्ष पर वर्ष में दो बार लाल फूल खिलते हैं. इसे 'सीता फूल' कहते हैं. इस वृक्ष ने माता के समान प्रेम देकर सीता का शोक दूर किया था, इसलिए इसे 'अशोक वृक्ष' कहते हैं.

एक श्लोकी रामायण

<u>आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं काञ्चनं</u>

<u>वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसम्भाषणम् .</u>

<u>वालीनिर्दलनं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनं</u>

<u>पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननमेतद् धि रामायणम् ॥</u>

अर्थ: राम का तपोवन जाना, तत्पश्चात स्वर्ण मृग का वध, जटायु का यज्ञ, राम-सुग्रीव का मिलन, वालि का वध, सेतु का निर्माण, लंका दहन, तत्पश्चात रावण और कुंभकर्ण का वध, यह रामायण की घटनाओं का क्रम है. यह कहानियां हमें पुराण से जोड़ती है, हमें उनकी कहानी से रूबरू कराती है जो अब पुरानी तो ज़रूर हो चूँकि है लेकिन आज भी उन्हें जीवित रखा गया है. अशोक का पेड़ सिर्फ धार्मिक इतिहास में ही सर्वोपरि नहीं है बल्कि इनकी कहानी के और भी विशेषताएं हैं जिसके बारे में जानना बेहद ज़रूरी है. आयुर्वेद में अशोक के पेड़ की बहुत सारी चर्चाएं हैं.

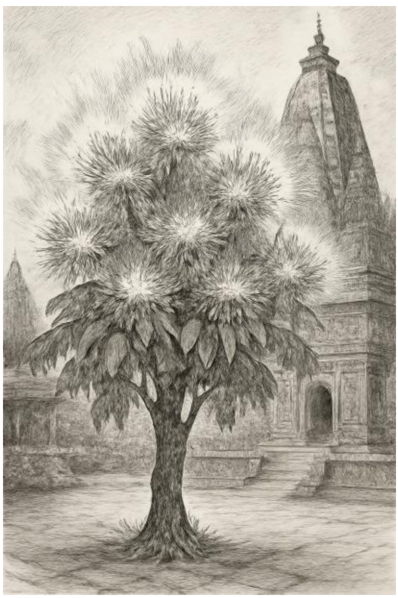

आयुर्वेद का अशोक

आयुर्वेद में, अशोक वृक्ष अपने आध्यात्मिक गुणों के साथ-साथ शरीर के लिए कई स्वास्थ्य लाभों के लिए भी जाना जाता है. अशोक वृक्ष की छाल मुख्य रूप से महिलाओं में मासिक धर्म संबंधी समस्याओं, जैसे कष्टार्तव, पेट दर्द और गर्भाशय की ऐंठन के इलाज के लिए फायदेमंद होती है. अशोक वृक्ष की छाल में टैनिन, फ्लेवोनोइड्स और ग्लाइकोसाइड्स प्रचुर मात्रा में होते हैं जो मिलकर गर्भाशय टॉनिक का काम करते हैं. अशोक वृक्ष की जड़ें और बीज मुँहासे, सोरायसिस और डर्मेटाइटिस जैसी त्वचा संबंधी समस्याओं का इलाज करते हैं.

अशोक वृक्ष से बने उत्पादों का नियमित सेवन आपकी बुद्धि को बेहतर बनाने में मदद करता है. अशोक की छाल और ब्राह्मी चूर्ण को बराबर मात्रा में मिलाएँ और इस मिश्रण का एक-एक चम्मच दिन में दो बार एक कप दूध के साथ सेवन करें.

अशोक वृक्ष की जड़ी-बूटियों का सेवन हमारे रक्त से विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने में मदद करता है और इस प्रकार हमारी त्वचा के लिए उत्कृष्ट लाभ प्रदान करता है. अशोक वृक्ष की जड़ी-बूटियाँ रक्त को शुद्ध करने और एलर्जी व अन्य त्वचा विकारों को रोकने में मदद करती हैं. अशोक वृक्ष के अर्क का उपयोग करके जलन और त्वचा की जलन का भी इलाज किया जा सकता है.

कहानियों का अंदाज़ होता है, और किस्सों का रूप, इन दोनों को जब एक साथ जोड़ा जाता है तब बनती है एक मुकम्मल दास्ताँ. अशोक की कहानी में सबसे बड़ा रोल था माता सीता का. उनकी कहानी सार बनाता है यह अशोक का पेड़. मैं अपनी व्यक्तिगत कहानी बताता हूँ. मेरे स्कूल में अशोक के पेड़ बहुत सारे थे, लेकिन वह अशोक असली नहीं बल्कि नकली अशोक थे. लेकिन वह अशोक भी थे बहुत सुन्दर. वह हमेशा स्कूल की बाउंड्री के पास लगाए जाते थे. उनकी खासियत यही थी की वह लम्बे और तिकोने शेप में लगे रहते थे. मुझे हमेशा से वह पसंद आते थे, उनकी लम्बी और तिकोनी पत्तियां बहुत मुलायम हुआ करती थी.

स्कूल में गार्डनिंग क्लास हुआ करती थी. उस क्लास में बहुत सारे सवालों के साथ जब हम पहुंचा करते थे तब हमारे सर बहुत खुश हुआ करते थे. एक दिन सवालों में मैंने उनसे पूछ लिया कि आखिर यह अशोक के पेड़ में फूल क्यूँ नहीं खिलते है? तब उस दिन हमें सच्चाई पता चली कि यह जो अशोक के पेड़ है यह नकली अशोक है. असली अशोक के पेड़ का वैज्ञानिक नाम Saraca Asoca होता है. अशोक के फूलों का रंग बहुत आकर्षक होता है. यह नारंगी, या गहरे नारंगी रंग के होते है. जब ये खिलते हैं, तो पूरा वृक्ष मानो **लाल-नारंगी ज्वाला** में सजा हुआ प्रतीत होता है. फूलों का गुच्छा बहुत घना और सघन होता है, जिससे एक ही शाखा पर कई फूल एक साथ खिलते हैं.

सबसे ख़ास बात यह है कि इन फूलों की खुशबु बेहद मीठी होती है, और जब यह खिलते है तब मानों आस-पास का पूरा वातावरण इनके मीठी खुशबु से सुगन्धित हो उठता है. यही कारण है कि प्राचीनकाल से ही इन फूलों का उपयोग **स्त्रियों के श्रृंगार**, **पूजा**, और **आयुर्वेदिक औषधियों** में होता रहा है. इस पेड़ के फूल फरवरी और अप्रैल के बीच में खिलते हैं, यानी यह वसंत ऋतू का सबसे मनमोहक फूल होता है. हिन्दू धर्म में अशोक के फूलों को शुद्धता और प्रेम का प्रतीक माना गया है. इन फूलों का उपयोग **दुर्गा, लक्ष्मी और पार्वती** जैसी देवियों की पूजा में किया जाता है.

अशोक के पेड़ पर लोकगीत बहुत सारे बने हैं और इनका बनना इस वजह से भी महत्त्व है क्योंकि यह राम और सीता के विरह से जुड़े हुए है. एक ऐसा ही लोकगीत मुझे भी मिला है जोकि पूर्वांचली बोल में है.

अशोका के फूलवा ललका-ललका रे,
सीता मैया रोइली ओकर तलवा रे.

रावण ले गइल लंका के डेरा,
फूलवा झर गइल बनि के सवेरा.

हनुमान आयल पातवा हिलाइ के,
राम के अंगूठी दे गइल बताइ के.

हे फूल अशोक, तू बड़ भागी,
भेलु नारी के दुःख के साथी.

जयशंकर प्रसाद के काव्यकृति कामायनी में भी अशोक के पेड़ का बहुत ही अच्छा उल्लेख है. **कामायनी** में अशोक वृक्ष को **प्रेम और सौंदर्य के प्रतीक** के रूप में प्रस्तुत किया गया है. विशेषकर "श्रृंगार" खंड में अशोक वृक्ष की डालियाँ और फूलों की खुशबू प्रेम की भावनाओं को प्रेरित करती हैं.

"वह अशोक की छाया, प्रेम की पहली छाया बनी,

जहाँ इड़ा की आँखों ने मनु के मन को छू लिया."

इस पंक्ति का सरल अनुवाद या इसका मतलब है."अशोक वृक्ष की छाया में पहली बार प्रेम का बीज अंकुरित हुआ,

जहाँ इड़ा की कोमल दृष्टि ने मनु के हृदय को स्पर्श कर लिया."

कुछ इसी तरह कालिदास ने भी अपनी कविता "मेघदूत" और "ऋतुसंहार" में अशोक के पेड़ और उसके फूलों का वर्णन किया है. ऋतुसंहार की एक पंक्ति कुछ ऐसी है--

"जहाँ अशोक वृक्षों के फूलों की लालिमा हवा में घुली हो,

वहाँ प्रेमी हृदय आप ही आप पुलकित हो जाते हैं."

कालिदास की इस कविता "ऋतुसंहार" में **प्राकृतिक सौंदर्य** और **प्रेम भाव** का सुंदर मेल दिखाया है. यह बताती है कि **अशोक वृक्ष के फूलों का सौंदर्य इतना प्रभावशाली होता है**, कि वह प्रेमियों के मन को **बिना कुछ कहे ही स्पर्श कर लेता है**.

यह पंक्तियाँ **कालिदास** की शैली में प्रेम, ऋतु और प्रकृति के सूक्ष्म संबंध को दर्शाती हैं.

मैं केवल एक वृक्ष नहीं हूँ. मैं वह मौन हूँ जिसने सीता माता का विलाप सुना, वह छाया हूँ जिसमें उन्होंने अपना आत्मबल पाया, वह साक्षी हूँ

जिसने लंका में एक स्त्री के संघर्ष और संकल्प को अपनी शाखाओं में सहेज लिया. मैं अशोक हूँ — शोक को हरने वाला. उस भूमि पर खड़ा जहाँ सीता जी ने मुझे अपने विश्वास और धैर्य की तपस्या से अमर कर दिया.

जब रावण माता सीता को लंका लाया, तो उसने अज्ञानवश मुझे चुन लिया — शायद वह नहीं जानता था कि मैं केवल छाया नहीं, एक आध्यात्मिक शक्ति हूँ. मेरी जड़ें उस क्षण और उस पीड़ा में भींग चुकी हैं जब सीता जी ने अपने राम की प्रतीक्षा की, बिना रोए, बिना थके. मेरी हर पत्ती उनकी तपस्या की मौन गाथा गुनगुनाती है.

हनुमान जी का आगमन, उनका मेरा स्पर्श, और सीता जी से उनकी पहली भेंट — सब मेरे साये में घटा. राम की अंगूठी और चूड़ामणि का आदान-प्रदान, वह भावनाओं की वर्षा — सब कुछ मेरे सामने हुआ. वह क्षण मेरे लिए केवल ऐतिहासिक नहीं, आत्मिक था. उस दिन मैं केवल वृक्ष नहीं रहा, मैं **रामभक्ति की धरती** बन गया.

मैंने देखा है कि कैसे मेरी छाया में बैठने से मन शांत होता है. मेरे नीचे बैठकर लोग ध्यान करते हैं, अपनी चिंता और तनाव मुझसे बाँटते हैं. और हाँ, मैंने कई बार जवाब भी दिया है — हवा की सरसराहट में, पत्तों की थरथराहट में, और कभी-कभी फूलों की मधुर सुगंध में.

मेरे बारे में बहुत कुछ कहा गया है — मेरी छाल स्त्री रोगों की औषधि है, मेरे फूल वसंत के दूत हैं, और मेरे दर्शन से जीवन में मंगल आता है. मैं सिर्फ धार्मिक महत्व नहीं रखता, मैं आयुर्वेद का हिस्सा हूँ, वास्तुशास्त्र का समाधान हूँ, और लोककथाओं का प्रेरणा स्रोत भी.

लेकिन मैं आजकल अक्सर गलत पहचान लिया जाता हूँ. मेरे स्थान पर *Polyalthia longifolia* को लगाया जाता है, जिसे लोग "अशोक" समझ बैठते हैं. वह सीधा खड़ा होता है, जल्दी बढ़ता है, सजावटी होता है — पर वह मैं नहीं हूँ. मैं *Saraca asoca* हूँ — धीरे बढ़ने वाला, परंपराओं से बँधा हुआ, और भावनाओं से सिंचित.

मैं उन वनों में पनपता हूँ जहाँ नमी होती है, शांति होती है — पर अब ऐसे जंगल खत्म होते जा रहे हैं. लोग जगह की कमी, धैर्य की कमी और असली को पहचानने की कमी में मुझे भूलते जा रहे हैं.

मेरी एक और कहानी है — महाप्रजापति गौतमी की. गौतम बुद्ध की सौतेली माँ, जिन्होंने मुझे अपनी तपस्या का साक्षी बनाया. जब उन्हें संघ में स्थान नहीं मिला, तो वह मेरे नीचे बैठीं, ध्यान किया, और वहीं उन्हें आत्मिक शांति की प्राप्ति हुई. फिर बुद्ध ने उन्हें संघ में स्थान दिया — और वहीं से भिक्षुणी परंपरा की शुरुआत हुई. मैं उसका भी साक्षी बना.

श्रीलंका की भूमि में, जहाँ कभी लंका थी, मैं अब भी खड़ा हूँ. 'सीता एलिया' नाम के स्थान पर, जहाँ मेरी जड़ें अब भी माता सीता की स्मृति को पकड़े हुए हैं. मेरी मिट्टी आज भी काली है — उस दिन की याद में जब हनुमान ने लंका को अग्नि में जलाया. मेरे पत्तों को हाथ में लो, तो शरीर में एक कंपन सा महसूस होता है — जैसे आत्मा जाग गई हो.

मेरे फूल वर्ष में दो बार खिलते हैं — गहरे नारंगी, अग्नि जैसे. जब ये खिलते हैं, तो मेरे आसपास का सारा वातावरण सुगंध और सुंदरता से भर जाता है. इन फूलों को 'सीता फूल' कहा जाता है — क्योंकि ये उसी प्रेम और तपस्या की गवाही देते हैं.

मैं अशोक हूँ — शोकहर, साक्षी और साधना का वृक्ष

मैं केवल लंका की भूमि पर खड़ा एक वृक्ष नहीं हूँ, मैं **युगों की पीड़ा का मौन गवाह** हूँ. जब-जब मनुष्यता ने दुःख झेला है, जब किसी स्त्री ने अपने आत्मबल से सृष्टि को राह दिखाई है, तब-तब मैं वहाँ खड़ा रहा हूँ — मौन, लेकिन अडिग.

रामायण के उस अध्याय में जब माता सीता को रावण ने बंधक बनाया, तब लंका की उस अशोक वाटिका में केवल मैं ही था जिसने उनकी पीड़ा को अपनी छाल में समेट लिया. जब वह बिना रोए, बिना डिगे, हर दिन राम की प्रतीक्षा करती थीं — मैं उनकी छाया बना रहा. मेरी शाखाओं ने उन्हें सहारा दिया और मेरी पत्तियों ने हवा में उनकी तपस्या की गूँज समेटी. मेरा हर पत्ता आज भी उस मौन वेदना का वाहक है.

मैं उस क्षण का भी साक्षी हूँ जब हनुमान जी माता सीता से मिलने आए. मेरे नीचे बैठकर उन्होंने वह संवाद किया जो रामायण का सबसे करुण और सुंदर दृश्य बन गया. राम की अंगूठी, सीता की चूड़ामणि, और दो तपस्वियों का मिलन — सब मेरी छाया में हुआ. क्या यह संयोग था? नहीं. यह मेरी नियति थी.

पर मेरी यात्रा यहीं नहीं रुकी. गौतम बुद्ध की सौतेली माँ, महाप्रजापति गौतमी, जब आत्मिक मुक्ति की खोज में थीं, तब वह भी मेरी ही छाया में बैठीं. उन्होंने ध्यान किया, त्याग और करुणा को समझा, और फिर बुद्ध ने उन्हें संघ में स्थान दिया. तभी भिक्षुणी परंपरा की शुरुआत हुई — और मैं एक बार फिर स्त्री शक्ति का प्रतीक बन गया.

आज लोग मुझे घरों में लगाते हैं, पर अक्सर मुझे पहचान नहीं पाते. नकली अशोक की लम्बी पतली आकृति को वे मेरे नाम से पुकारते हैं. पर मैं हूँ *Saraca asoca* — धीरे बढ़ने वाला, पर आत्मा में गहराई से उतर जाने वाला. मेरी छाल औषधि है, मेरे फूल वसंत की मुस्कान हैं, और मेरी उपस्थिति मंगलकारी मानी जाती है.

मैं लोकगीतों में हूँ, काव्य में हूँ, आयुर्वेद में हूँ और मंदिरों में भी. मेरा अस्तित्व केवल जैविक नहीं, भावनात्मक और सांस्कृतिक है. जब कोई

बच्चा स्कूल में मेरे बारे में सवाल करता है, तो वह मुझसे जुड़ता है — और यही मेरा सबसे बड़ा फल है.

मैं वहाँ रहूँगा, जब कोई अकेला होगा. मैं वहाँ बहूँगा, जब कोई आँसू रोकेगा. और मैं वहाँ खिलूँगा, जब कोई प्रेम, विश्वास और धैर्य से भरा होगा.

मैं अशोक हूँ — शोकहर, साक्षी और साधना का वृक्ष.

रणभूमि का अर्जुन

कहानियों के इस नए पन्ने में आपका स्वागत है. बात उन किस्सों की, जिनसे जुड़े रहना हम सबके लिए ज़रूरी है — और अब पहले से भी ज़्यादा ज़रूरी हो गया है. अच्छा, कहानियों की इन बौछारों में आप कहीं गुम न हो जाएँ, इसके लिए मैं इस किताब से हटकर आपको एक छोटा-सा किस्सा सुनाता हूँ. यह किस्सा मेरे लिए हमेशा से ज़्यादा आज मज़ेदार है.

किस्सा कुछ महीनों पुराना है. बात कुछ ऐसी थी कि जब इस किताब पर काम चल रहा था, तो बड़ी समस्या इस बात की अटक गई थी कि आखिर यह किताब कब तक पूरी होगी. काफ़ी मेहनत हो रही थी, लेकिन इसके बावजूद, जब लगता कि आज किताब पूरी हो जाएगी, तभी इसमें कुछ नया काम आ जुड़ता. माहौल में हताशा थी, लेकिन फिर भी उम्मीद की एक लौ जल रही थी, जिसके भरोसे लगता था कि अब काम पूरा हो जाएगा.

मेरे गुरु—यानि मेरे पिताजी—ने मुझे हमेशा एक काम पर ध्यान केंद्रित करने की सीख दी है. उन्होंने हमेशा मुझे द्रोणाचार्य और अर्जुन की मिसाल दी है, और मछली की आँख पर नज़र टिकाने की बात कही है. उनका हमेशा यही कहना था—"बेटा, अगर कोई चीज़ पाना चाहते हो तो उसके शिखर को अपना लक्ष्य बनाओ. बड़ी चीज़ के लिए मेहनत करोगे तो सफ़र हमेशा याद रहेगा, चाहे तुम नंबर एक बनो या न बनो."

कुछ ऐसी ही मिसाल लेकर मैंने इस किताब को बुना है, ताकि इन कहानियों की रेलगाड़ी मुझे हमेशा मेरे सफ़र की याद दिलाती रहे. सफ़र को याद रखना बेहद ज़रूरी है, क्योंकि यही सफ़र आगे बढ़ने में हमारा सहारा बनता है.

अब इस किस्से के सफ़र में हम आपको कहानी सुनाते हैं अर्जुन की... हाँ, वही अर्जुन—अरे वही, जिसकी पूजा होती है... हाँ, वही जिसे जंगल का शान कहा जाता है. अच्छा, आप थोड़े-से उलझन में होंगे. मैं अर्जुन के पेड़

की बात कर रहा हूँ—वही अर्जुन का पेड़, जो हमेशा से पेड़ों का राजा माना गया है, जिसके तने और पत्ते ही उसकी शान हैं.

तो, अर्जुन की कहानी को समझने के लिए—या यूँ कहें सुनने के लिए—हमें थोड़ी-सी महाभारत भी पढ़नी पड़ेगी और थोड़ी-सी लोगों की भी सुननी पड़ेगी. अर्जुन को एक ऐसे रूप में देखा जा सकता है, जो हमेशा सहजता से अपना परिचय देता है. अर्जुन के बारे में जानने के लिए हमें उसके आस-पास के पेड़ों और वातावरण के बारे में भी जानना ज़रूरी है, क्योंकि यही जानकारी हमें उसकी जड़ तक पहुँचने में मदद करेगी.

चलिए, तो कहानी की शुरुआत थोड़े सस्पेंस के साथ करते हैं... ज़रा गौर फ़रमाइएगा—

वह नदी किनारे खड़ा था—निश्चल, विशाल और प्राचीन. उसकी छाल राख जैसी फीकी और मोटी थी, जिस पर बीते मौसमों की अनकही कहानियाँ उकेरी थीं. गाँव वाले उसके पास से श्रद्धा के साथ गुज़रते—कोई सिर झुकाता, तो कोई उसकी जड़ों के पास छोटी-छोटी भेंट चढ़ा जाता.

हवा में एक धीमी फुसफुसाहट तैरती—"यह वृक्ष हृदय को ठीक करता है... और एक योद्धा की आत्मा को अपने भीतर समेटे है."

किसी को याद नहीं था कि इसे किसने लगाया था, लेकिन इसकी कथा सबको याद थी—एक ऐसी कथा जो सिर्फ मिट्टी में ही नहीं, बल्कि समय की गहराइयों में भी जमी हुई थी.

कोई कहता, इसे इन्द्र ने आशीर्वाद दिया था. कोई कहता, इसका नाम उस राजकुमार के नाम पर पड़ा, जिसने युद्ध पर प्रश्न उठाए—लेकिन वही आगे चलकर युद्ध का सबसे बड़ा धनुर्धर बना.

यह... कोई साधारण वृक्ष नहीं था.

यह था... **अर्जुन.**

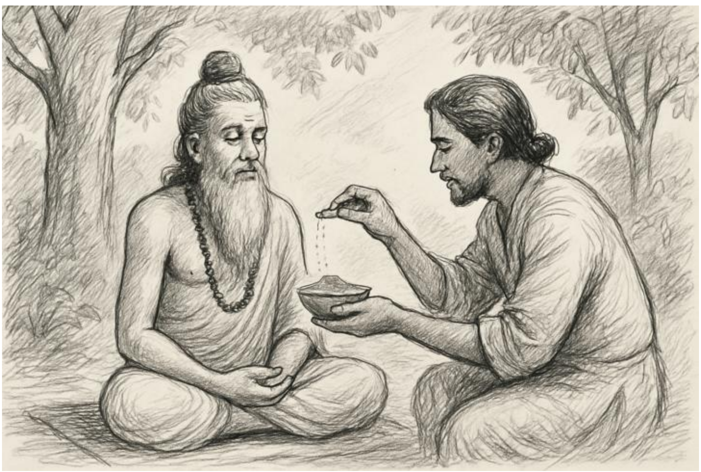

जी हाँ, शुरुआत कुछ ऐसी हो तो अच्छा लगता है. एक बलवान वृक्ष की बात करने के लिए लेखक को भी थोड़ा बलवान बनना पड़ता है. लेखक का बल उसकी कलम से ज़्यादा उसके शब्दों में होता है. यह बल हमेशा से ज़्यादा तभी मिल पाता है जब लेखक के पास उसके लिए उपयुक्त शब्द हों और उसके दिमाग में रचना हो.

रचनाओं की भी कहानी अपने आप में बड़ी और रोचक होती है. यह रचनाएँ और उनसे जुड़े किस्से हमेशा वहीं से आते हैं, जहाँ कुछ नया होता है. मैं मूल निवासी बनारस का हूँ, और बनारस किस्सों और कहानियों का शहर है.

अर्जुन की बात जब भी मैं करता हूँ, तब मैं हमेशा से ज़्यादा बनारस की कहानियों और किस्सों पर ज़ोर देता हूँ. काशी—महादेव की नगरी, वे भगवान, जिन्होंने सबकी रचना की—बनारस कहानीकारों का शहर है, जहाँ हर एक गली एक नई कहानी सुनाती है. अर्जुन की कहानी को भी मैं बनारस से ही शुरू करता हूँ.

मेरा मूल निवास बनारस में है और मेरी शिक्षा-दीक्षा भी बनारस से ही हुई, लेकिन एक बोर्डिंग स्कूल में. स्कूल बनारस में ही था, मगर घर से दूर रहने के लिए हिम्मत चाहिए, और वह हिम्मत मैं कभी जुटा नहीं पाता था. कारण बस एक—मेरा अपना परिवार. परिवार के मोह ने मुझे रोक रखा था. मैं चाहकर भी अब उनके पास नहीं जा सकता था, और यह सब मेरी पढ़ाई के लिए था.

ज़रा सोचिए, जब किसी बुरे मज़धार में फँसे थे भगवान अर्जुन—कुरुक्षेत्र की उस लड़ाई में, जब अर्जुन के सामने उनका अपना ही परिवार था—तब यदि कृष्ण न होते, तो महाभारत की कहानी कुछ और ही होती. इसी वजह से अर्जुन की कहानी हमेशा लोगों को सुनाई जाती है, ताकि वे अपने लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित कर सकें.

मेरे स्कूल में कई अर्जुन के पेड़ थे. लेकिन मैं उन अर्जुन के पेड़ों से हमेशा की तरह अनजान था. मुझे कई महीनों बाद अपनी गार्डनिंग क्लास में पता चला कि इस पेड़ का नाम अर्जुन है. जब मेरे शिक्षक ने मुझे इसकी कहानी बताई, तो मैं शांति से बस सुनता चला गया. उनकी एक बात हमेशा मुझे याद रहती है—अप्रैल की गर्मी में, कड़ी धूप की दोपहर में, हम सब उस पेड़ की छाँव में खड़े थे, तब उन्होंने बताया कि इस पेड़ की ख़ासियत यह है कि यह जंगली पेड़ है, लेकिन जहाँ भी रहता है, तनकर खड़ा रहता है.

मैं हमेशा सोचता था कि आख़िर इसी पेड़ के बारे में उन्होंने यह क्यों बताया कि यह तनकर खड़ा रहता है. क्यों? बरगद को भी कोई नहीं लगाता, वह

भी जंगली है. पीपल भी जंगली है और वे भी तनकर खड़े रहते हैं—तो फिर इनकी कहानी क्यों नहीं सुनाई जाती?

इस किताब को लिखते समय, जब मैंने अर्जुन के बारे में जानकारी इकट्ठा की, तब मुझे समझ आया कि हमारे शिक्षक ने अर्जुन के बारे में ही ऐसी बात क्यों कही थी.

अर्जुन वृक्ष (Terminalia arjuna) भारतवर्ष का एक विशाल और सदाबहार वृक्ष है. यह न केवल औषधीय दृष्टि से, बल्कि भारतीय पौराणिक कथाओं और संस्कृति में भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है.

जी हाँ, किताब के इस पन्ने में आज बात अर्जुन की. इस पेड़ का वैज्ञानिक नाम *Terminalia arjuna* है, और यह कॉम्ब्रीटैसी (Combretaceae) कुल का सदस्य है. भारत में इसे 'अर्जुन का पेड़' कहा जाता है. 60 से 80 फुट तक की ऊँचाई वाला यह पेड़ न केवल भारत में, बल्कि विदेशों में भी प्रसिद्ध है. नदी के तटों और उप-हिमालयी क्षेत्रों में यह पेड़ बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है.

हर पेड़ अपने साथ कुछ न कुछ नया लेकर आता है. हर पेड़ की कहानी में उसकी कुछ अच्छी बातें होती हैं और कभी-कभी कुछ कमियाँ भी होती हैं. मैंने कभी पेड़ों की कमियों पर ध्यान नहीं दिया; मैं उनकी अच्छी बातों से ही संतुष्ट रहता हूँ.

अर्जुन की कहानी भी कुछ खास है. नाम से ही ऐसा लगता है कि यह दास्तान किसी वीर योद्धा की है, लेकिन असल में यह वीर योद्धा जितना शक्तिशाली है, उतना ही सरल भी है. किस्सों से कहानियाँ बनती हैं—कहानी पुरानी हो सकती है, लेकिन किस्से हमेशा नए ही होते हैं. ये किस्से आपके लिए नए होंगे, क्योंकि ज़्यादातर लोग पेड़ों के बारे में लिखना या पढ़ना नहीं चाहते. इन्हीं किस्सों से बनती है कहानी—और यह कहानी हमेशा आपको कुछ नई जानकारी देकर ही जाएगी.

अर्जुन की औषधीय संपत्ति

अर्जुन का पेड़ हमेशा लोगों का प्रिय नहीं हो सकता. इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि यह जंगली पेड़ है, और अब लोगों के घरों में इतनी जगह नहीं बची है कि वे अर्जुन जैसे विशाल पेड़ को अपने आँगन में लगा सकें. हम इंसान भी कितने अजीब हैं, है ना? पहले लोगों का पूरा जीवन एक पेड़ के नीचे बीत जाया करता था, लेकिन आधुनिकता की इस होड़ में अब लोगों के लिए पेड़ लगाना ही मुश्किल हो चुका है.

अब हम सभी को इन कहानियों की आदत पड़ चुकी है, क्योंकि अब समय के बदलने का इंतज़ार किया जा रहा है. यह कहावत हमेशा से सच साबित होती आई है कि इतिहास अपने आप को दोहराता है. खैर, चलिए आपको अर्जुन के औषधीय महत्व के बारे में बताते हैं.

अर्जुन की छाल इसका सबसे महत्वपूर्ण औषधीय भाग होती है. इसे सुखाकर चूर्ण, काढ़ा या अर्क के रूप में उपयोग किया जाता है. यह छाल

न केवल आयुर्वेद में, बल्कि आधुनिक हर्बल चिकित्सा में भी प्रमुख रूप से प्रयुक्त होती है. हर्बल चिकित्सा और आयुर्वेद का चलन अब बढ़ता जा रहा है. ऐसे में अर्जुन की छाल का उपयोग अनेक तरीकों से किया जाता है. यही छाल अर्जुन को सबसे अधिक महत्वपूर्ण बनाती है, और इसी कारण इसकी चर्चा हर जगह होती है.

आयुर्वेद अब शिक्षा का एक महत्वपूर्ण विषय बन चुका है. आयुर्वेद की शिक्षा में अर्जुन की छाल और इस पेड़ के बारे में विस्तार से बताया गया है. इसकी विशेषताओं का उल्लेख आयुर्वेद के लगभग हर पन्ने में मिलता है.

सदियों से आयुर्वेद में अर्जुन को एक औषधि के रूप में देखा और पढ़ा गया है. आमतौर पर अर्जुन की छाल और रस का औषधीय रूप में प्रयोग किया जाता रहा है. अर्जुन नामक बहुगुणी सदाहरित पेड़ की छाल—यानी अर्जुन की छाल—के फायदे हृदय संबंधी बीमारियों, क्षय रोग (टीबी) जैसी बीमारियों, सामान्य कान दर्द, सूजन और बुखार के उपचार में देखे गए हैं.

अर्जुन कितना गुणकारी जड़ी-बूटी है, यह तो समझ में आ ही गया है, लेकिन आगे यह किन-किन बीमारियों में फायदेमंद है और अर्जुन छाल का क्षीरपाक कैसे बनाया जाता है, इसके बारे में विस्तार से जानते हैं.

हृदय रोग में चमत्कारी उपयोग

अर्जुन छाल का सबसे प्रमुख और जाना-पहचाना उपयोग हृदय रोगों की चिकित्सा में होता है. आयुर्वेद में इसे *हृदय बल्य* (हृदय को बल देने वाला) कहा गया है.

उपयोग और प्रभाव:

- हृदय की मांसपेशियों को मज़बूत करता है और हृदयगति को स्थिर करता है.
- रक्तचाप नियंत्रित करता है—विशेषकर उच्च रक्तचाप (Hypertension) के रोगियों में लाभकारी है.

- कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड्स को कम करता है—जिससे कोरोनरी आर्टरी डिज़ीज़ का खतरा घटता है.
- एंजाइना पेन (Angina) या हृदय में दर्द के दौरान लाभकारी—अर्जुन का काढ़ा या चूर्ण हृदय को राहत देता है.

अस्थमा और श्वसन रोगों में उपयोग

अर्जुन छाल में पाए जाने वाले तत्व श्वसन तंत्र को शुद्ध करने और ब्रॉन्कियल स्पाज़्म को कम करने में सहायक होते हैं.

- अर्जुन का काढ़ा या अर्क कफ निकालता है और सांस लेने में सहूलियत देता है.
- अस्थमा के रोगियों को इसे दूध या शहद के साथ लेने की सलाह दी जाती है.

रक्तस्राव और घाव भरने में लाभकारी

अर्जुन छाल में टैनिन्स (Tannins) प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जो रक्त को थक्का जमाने में मदद करते हैं और एंटीसेप्टिक गुण भी रखते हैं.

- घावों पर इसका चूर्ण लगाने से रक्त बहना रुकता है और घाव जल्दी भरता है.
- पुराने फोड़े-फुंसी पर इसका लेप लाभदायक होता है.

मूत्र संबंधी समस्याओं में उपयोग

- अर्जुन छाल में मूत्रवर्धक (Diuretic) गुण होते हैं, जो मूत्र की मात्रा को नियंत्रित करते हैं और मूत्रमार्ग संक्रमण (UTI) में राहत दिलाते हैं.

हड्डियों और जोड़ों के दर्द में उपयोग

अर्जुन में कैल्शियम, मैग्नीशियम और जिंक जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो हड्डियों को मज़बूत बनाने में सहायक होते हैं.

- हड्डी के फ्रैक्चर में अर्जुन का सेवन हड्डी जुड़ने की प्रक्रिया को तेज करता है.
- पुराने जोड़ों के दर्द में भी यह लाभकारी माना गया है.

अर्जुन की छाल केवल एक जड़ी-बूटी नहीं, बल्कि यह हृदय रोग, श्वसन रोग और अस्थि रोगों में प्रभावशाली प्राकृतिक औषधि है. भारत की पारंपरिक चिकित्सा प्रणाली में इसकी उपयोगिता को अब आधुनिक विज्ञान भी धीरे-धीरे स्वीकार कर रहा है. यह प्रकृति का वह उपहार है, जो शरीर को केवल स्वस्थ ही नहीं करता, बल्कि आत्मा को भी संतुलन और शांति प्रदान करता है.

अर्जुन का पेड़ केवल इन्हीं गुणों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह हमेशा की तरह अपनी बहुमुखी उपयोगिता को अपने भीतर संजोए चला आ रहा है. अभी तक हमने आपको जो जानकारी दी, वह इस पेड़ की एक विशेषता मात्र है; इसके अलावा भी इस पेड़ से जुड़ी अनेक कहानियाँ हैं—कुछ धर्म से संबंधित, तो कुछ पर्यावरण से. इन्हीं कहानियों को पढ़ते-पढ़ते आप अर्जुन के पेड़ को ऐसे जान जाएँगे, जैसे यह आपका ही कोई हिस्सा हो.

पौराणिक कथाओं मे अर्जुन

भारत में दरख्त केवल पर्यावरण का हिस्सा नहीं होते हैं बल्कि यह अपने आप मे एक जीवंत प्रतीक है. धर्म, संस्कृति और चेतना के मायने हमेशा से इन पेड़ों को अपने महत्व के नजदीक ले जाते रहे हैं. ऐसा ही एक वृक्ष है **अर्जुन वृक्ष**, जिसे न केवल औषधीय गुणों के लिए बल्कि **पौराणिक और आध्यात्मिक महत्व** के लिए भी गहराई से पूजनीय माना जाता है.

महाभारत में अर्जुन का होना

महाभारत हिंदू पौराणिक कथाओं में सबसे लोकप्रिय रहा है. यह कथाएँ हमेशा से लोगों की जुबान पर और उनकी जीवन-शैली में नज़र आई हैं. महाभारत में पाँच पांडव भाइयों में से एक वीर योद्धा अर्जुन भी थे, जो न केवल एक महान धनुर्धर थे, बल्कि धर्मसंकट और आत्मचिंतन के प्रतीक भी थे.

अर्जुन का व्यक्तित्व धैर्य, वीरता और संतुलित बुद्धि का उदाहरण था. उसी प्रकार अर्जुन का पेड़ भी एक ऐसा वृक्ष है, जो हर मौसम में स्थिर खड़ा रहता है और इसे धैर्य का प्रतीक बनाता है. गंभीर बीमारियों के उपचार में सक्षम यह वृक्ष संवेदनशीलता और सहायता का प्रतीक है. यह पेड़ एक आम इंसान की तरह विनम्र भी है और इसका उदाहरण हमें इसमें छुपी औषधीय शक्ति से मिलता है. इसलिए इसे "अर्जुन" कहा गया—क्योंकि यह भी एक 'धर्मयोद्धा' की तरह जीवन की रक्षा करता है.

भागवद गीता में अर्जुन का हृदय और आत्मा से एक संवाद हुआ था, जिसका कुछ अंश मैं आपके लिए लिख रहा हूँ. महाभारत के युद्ध से पूर्व अर्जुन का मन विचलित हो गया था—उसमें संदेह था, संघर्ष था, करुणा थी. उस समय भगवान कृष्ण ने जो ज्ञान अर्जुन को दिया, वही ज्ञान आज के समय में भागवद गीता के रूप में जाना जाता है. यह ज्ञान केवल युद्ध का नहीं था, बल्कि मन, हृदय और आत्मा के युद्ध का था.

कभी अवसर मिले तो गीता अवश्य पढ़िएगा. भागवद गीता का द्वितीय अध्याय (सांख्य योग) से आरंभ होकर छठे अध्याय (ध्यान योग), द्वादश अध्याय (भक्ति योग) और अठारहवें अध्याय (मोक्ष संन्यास योग) तक विस्तार मिलता है.

अर्जुन का हृदय-प्रश्न (आत्मिक संघर्ष)

श्लोक:

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः.
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥
(अध्याय 2, श्लोक 7)

अर्थ: मैं कायरता के दोष से आहत होकर अपने कर्तव्य को नहीं समझ पा रहा हूँ. अब मैं आपका शिष्य हूँ, कृपया मुझे वह बताइए जो निश्चित रूप से कल्याणकारी हो. (यह श्लोक अर्जुन के हृदय और आत्मा के भीतर के संघर्ष को दर्शाता है).

श्लोक:

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः.
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्॥
(अध्याय 2, श्लोक 12)

अर्थ: न मैं कभी नहीं था ना तुम कभी नहीं थे, और न ही ये राजा: और ना ही आगे हमसे कोई अस्तित्वहीन होगा. (यह आत्मा के शाश्वत स्वरूप का ज्ञान है-आत्मिक युद्ध की शुरुआत).

श्लोक:

ध्यानायोगेन योगिनो यं पश्यन्ति यतात्मनः.
श्रद्दया परया युक्तास्ते मे युक्ततमाः मताः॥
(अध्याय 6, श्लोक 47)

अर्थ: जो योगी ध्यान में स्थिर होकर, मन को नियंत्रित कर श्रद्धा के साथ मुझे देखता है, वह योगियों मे श्रेष्ठ है. (यह आत्मा और मन की एकता की ओर इंगित करता है).

श्लोक:

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज.
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥
(अध्याय 18, श्लोक 66)

अर्थ: सभी धर्मों को त्यागकर तू केवल मेरी शरण में आ जा. मैं तुझे समस्त पापों से मुक्त कर दूँगा — तू शोक मत कर. (यह अंतिम मोक्ष और आत्मा के परम लक्ष्य का शुद्ध ज्ञान है).

"जब अर्जुन का मन युद्ध के द्वंद्व में उलझ गया, तब श्रीकृष्ण ने जो ज्ञान दिया, वह केवल रणभूमि का शास्त्र नहीं था — वह था आत्मा का विज्ञान.

वह युद्ध शस्त्रों का नहीं, बल्कि मन, हृदय और आत्मा का था — और उसका समाधान था भगवद गीता."

यह तो गीता की बात हुई लेकिन यह पेड़, जिसकी जननी यह प्रकृति है, उसके लिए भी प्रतिबद्ध है. भारत की पारंपरिक संस्कृति में वृक्षों को केवल औषधीय या धार्मिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि **पर्यावरण संतुलन के आधार स्तंभ** के रूप में भी देखा गया है. इन्हीं में से एक है **अर्जुन वृक्ष** (*Terminalia arjuna*) — जो न केवल मानव स्वास्थ्य के लिए उपयोगी है, बल्कि **प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र** के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है.

मिट्टी के कटाव को रोकना

अर्जुन के पेड़ प्रायः नदी किनारे, जल स्रोतों और तालाबों के पास उगते हैं. इसकी जड़ें गहरी होती हैं, जो जल स्रोत के आस-पास की मिट्टी को कसकर पकड़ लेती हैं. आपको बता दूँ, अर्जुन के पेड़ की जड़ें टैपरूट प्रणाली का उपयोग करती हैं, जो मिट्टी के अंदर गहराई तक जाकर उसे मजबूती से थाम लेती हैं. वर्षा के मौसम में, जब तेज़ धाराएँ नदी के किनारों को काटती हैं, तब यह वृक्ष मृदा-क्षरण (soil erosion) को रोकने में सहायक होता है.

इस कारण जल स्रोतों में स्थिरता बनी रहती है, कृषि भूमि की रक्षा होती है, और साथ ही गाँव में भूमि धँसाव व बाढ़ की संभावनाएँ कम हो जाती हैं. भारत के उत्तर प्रदेश, बिहार और ओडिशा के ग्रामीण क्षेत्रों में अर्जुन को मिट्टी का रक्षक माना जाता है.

अर्जुन वृक्ष अपने विस्तृत पत्तों, शाखाओं और मजबूत तने के कारण कई प्रकार के जीवों के लिए आवास और भोजन का स्रोत बनता है.

- **पक्षी**: तोता, मैना, बुलबुल और कई प्रवासी पक्षी इसकी शाखाओं में घोंसले बनाते हैं.
- **कीट-पतंगे**: मधुमक्खियाँ, तितलियाँ और परागण करने वाले अन्य कीट इसके फूलों से पराग और रस प्राप्त करते हैं.
- **गिलहरियाँ और बंदर**: इसके बीजों और कोमल शाखाओं को खाकर जीवित रहते हैं.

वैज्ञानिकों के अनुसार, एक परिपक्व अर्जुन का पेड़ लगभग 45 से अधिक पक्षी प्रजातियों, 20 से अधिक कीट प्रजातियों और 5 से अधिक स्तनधारी जीवों को आश्रय प्रदान करता है.

वायु शुद्धिकरण और कार्बन अवशोषण

अर्जुन का पेड़ प्रकृति के प्रति प्रतिबद्ध है और हमेशा उसे साफ और सरल बनाए रखने के लिए मेहनत करता रहता है. अर्जुन के पेड़ के पत्ते घने और चौड़े होते हैं जोकि वायुमंडल से **कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करते हैं. ऑक्सीजन का उत्सर्जन** अधिक मात्रा में करते हैं. प्रदूषण फैलाने वाले **PM2.5 और धूल कणों को अवशोषित** करते हैं.

शहर के क्षेत्रों में यह अर्जुन के पेड़ एयर फ़िल्टर के रूप में काम करते हैं. **श्वसन संबंधी बीमारियों को कम करने में सहायक** होता है. कुछ शोधों के अनुसार, एक 10 साल पुराना अर्जुन वृक्ष लगभग 20-25 किलोग्राम CO_2 प्रतिवर्ष अवशोषित कर सकता है.

यह पेड़ लोगों की आजीविका का भी आधार है. ग्रामीण क्षेत्रों में अर्जुन वृक्ष केवल पारिस्थितिक संतुलन ही नहीं, बल्कि: **चारा**, **जलावन की लकड़ी**,

हर्बल औषधियों का स्रोत भी है. लोक चिकित्सा, स्थानीय कुटीर उद्योग में भी अर्जुन के पेड़ की लकड़ी का इस्तेमाल किया जाता है, जोकि इसे सिर्फ प्रकृति के प्रति ही नहीं बल्कि आम लोगों के प्रति भी संवेदनशील बनाए रखा है.

कुछ ऐसा ही बहु-चर्चित है अर्जुन का पेड़. दरख्तों की कहानी में वीर योद्धा अर्जुन के पेड़ ने हमेशा से ज्यादा सबके लिए किया है, चाहे वो प्रकृति हो, आम इंसान हो या चाहे वो कोई जीव ही हो. अर्जुन के बारे में कुछ लोक कथाएं भी हैं जिसे जानने से हमें इसकी और विशेषताओं के बारे में पता चलता है.

एक कहानी कुछ ऐसी भी है जिसका शीर्षक भी है "अर्जुन ने दिया इसे जीवन"...

यह एक लोकस्मृति आधारित किस्सा है जो उत्तरप्रदेश के पूर्वाञ्चल, मध्य भारत और दर्श के कुछ हिस्सों मे बहु-चर्चित रही है. हालांकि यह महाभारत के मुख्य शास्त्रीय ग्रंथों में नहीं मिलती. यह अधिकतर **लोककथाओं, जनश्रुतियों और क्षेत्रीय धार्मिक कहानियों** में संकलित है.

महाभारत के युद्धकाल में जब कुरुक्षेत्र की रणभूमि खून से भींग रही थी तब कहीं-कहीं मानवता के बीज भी बोए जा रहे थे. यही वह समय था जब अर्जुन केवल एक योद्धा नहीं, बल्कि एक **चिकित्सक, साधक और सहृदय मनुष्य** के रूप में प्रकट हुए.

कहते हैं कुरुक्षेत्र के युद्ध से पूर्व पांडव अपनी सेना के साथ यात्रा पर थे, तब वह एक घने जंगल के नजदीक एक नदी किनारे रुके. वहाँ अर्जुन के वृद्ध साधु को कराहते हुए देखा, जिसकी छाती में बहुत गहरी चोट थी और वह असहनीय पीड़ा से तड़प रहा था.

अर्जुन उसके पास पहुँचे और बोले — "हे तपस्वी, मैं युद्ध का योद्धा हूँ, वैद्य नहीं. परंतु यदि मेरी कोई सहायता आपके जीवन को बचा सके, तो बताइए."

साधु ने कातर स्वर में उत्तर दिया — "पुत्र, मुझे ज्ञात है कि इस वन में एक **विशेष वृक्ष** है, जिसकी **छाल मेरे रोग के लिए अमृत तुल्य है.**"

अर्जुन ने वन की ओर देखा — वहां एक वृक्ष था, जिसकी छाल धूसर थी, परंतु उससे एक शीतल ऊर्जा निकलती प्रतीत हो रही थी. उन्होंने अपने बाण से उस वृक्ष की छाल को सावधानीपूर्वक निकाला और साधु को दिया. कुछ ही समय में साधु की पीड़ा शांत हो गई.

वह बोले — "तुमने न केवल मेरे प्राण बचाए, बल्कि **इस वृक्ष को भी धर्म का नाम दिया**, क्योंकि आज से यह मानवता के रक्षक के रूप में जाना जाएगा."

अर्जुन ने उस वृक्ष की जड़ के पास जल चढ़ाया और कहा — **"जब तक इस धरती पर हृदय की पीड़ा रहेगी, तब तक यह वृक्ष उसका उपचार करता रहेगा."**

अर्जुन का इस कहानी में धर्म और प्रकृति से गहरा संबंध था. अर्जुन, जिसे युद्ध का प्रतीक माना गया है, वह उस वक्त संवेदना और उपचार का माध्यम बन जाता है. यह वृक्ष आज भी भारत के कई गांवों में **"धर्म का वृक्ष"**, **"हृदय रक्षक"** और **"शांति वृक्ष"** नामों से जाना जाता है.

यह बात वैज्ञानिक दृष्टि से भी सही है कि अर्जुन की छाल में वह विशेषता है जो किसी भी पीड़ा को शांत कर सकती है, क्योंकि इसकी छाल से आपको प्राकृतिक ऐस्प्रिन मिलता है. अर्जुन वृक्ष की छाल (*Terminalia arjuna Bark*) में कई प्रकार के **फाइटोकेमिकल्स** (पादप-रसायन) पाए जाते हैं, जिनमें कुछ प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं:

Flavonoids	एंटीऑक्सीडेंट	सूजन, एलर्जी, ऑक्सीडेटिव तनाव को कम करते हैं
Saponins	एंटी-इंफ्लेमेटरी	दर्द, सूजन, उच्च कोलेस्ट्रॉल और हृदय रोग में सहायक

Tannins	कसैले गुण	रक्तस्राव रोकते हैं, एंटी-बैक्टीरियल प्रभाव
Arjunic Acid	कार्डियो-प्रोटेक्टिव	हृदय की मांसपेशियों को मज़बूत करता है
Gallic Acid	एनाल्जेसिक	दर्द और बुखार कम करने वाला प्राकृतिक घटक

प्राकृतिक ऐस्प्रिन क्या होता है?

एस्पिरिन (*Acetylsalicylic Acid*) एक **सिंथेटिक (कृत्रिम) दवा** है, जो शरीर में **Prostaglandins** नामक रसायनों के बनने को रोकती है — यही रसायन सूजन, दर्द और बुखार के लिए ज़िम्मेदार होते हैं.

अर्जुन की छाल में प्राकृतिक रूप से ऐसे यौगिक मौजूद हैं (विशेषकर सैपोनिन्स और फ्लैवोनॉइड्स) जो **प्रोस्टाग्लैंडिन्स को बनने से रोकते हैं**, यानी अर्जुन छाल भी:

- दर्द को कम करती है
- सूजन को घटाती है
- शरीर की गर्मी को शांत करती है

आधुनिक विज्ञान और आयुर्वेद का संगम:

आधुनिक रिसर्च के निष्कर्ष:

- **AIIMS**, **Banaras Hindu University (BHU)**, और **National Botanical Research Institute (NBRI, Lucknow)** की विभिन्न शोधों में पाया गया है कि:
    - अर्जुन छाल में मौजूद **Arjunolic acid** हृदय की कार्यप्रणाली को बेहतर बनाता है.

- **Flavonoids** शरीर में सूजन जनक एंजाइम (COX-1, COX-2) को अवरुद्ध करते हैं — यही एस्पिरिन की क्रिया है.

शास्त्रीय आयुर्वेद में उल्लेख:

- **चरक संहिता** और **सुश्रुत संहिता** में अर्जुन को "हृद्यो" और "व्रणरोपण" औषधि बताया गया है.
- **भावप्रकाश निघण्टु** में अर्जुन छाल का वर्णन "शोथहर" (सूजन को नष्ट करने वाला) और "दाहशामक" (जलन को शांत करने वाला) के रूप में किया गया है.

अर्जुन वृक्ष की छाल, सदियों से आयुर्वेद में हृदय व मानसिक शांति की प्रतीक रही है. और आज जब **आधुनिक चिकित्सा भी इसे प्राकृतिक 'एस्पिरिन' कहने लगी है**, तब यह स्पष्ट हो जाता है कि **भारत की पारंपरिक ज्ञान प्रणाली कितनी वैज्ञानिक रही है.**

यह वृक्ष न केवल हमारी **देह की पीड़ा**, बल्कि हमारे **मन की जड़ता** को भी काटने की शक्ति रखता है.

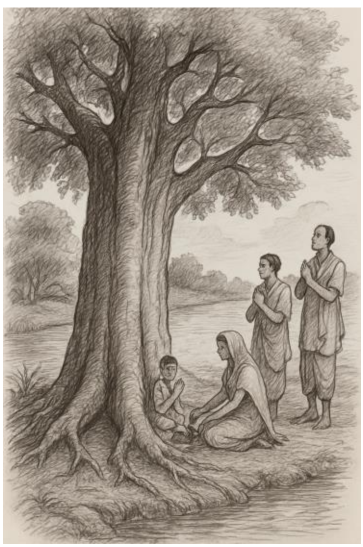

तो अंत में यह सिर्फ एक पेड़ की विशेषता नहीं बताता है बल्कि अपनी साथ इतिहास की कई कहानी भी लेकर चला आ रहा है. अर्जुन वृक्ष केवल एक प्राकृतिक संपदा नहीं, बल्कि हमारे इतिहास, संस्कृति, पौराणिक स्मृतियों और चिकित्सा परंपराओं का जीवंत प्रतीक है. यह वृक्ष महाभारत के अर्जुन की तरह ही साहस, धैर्य, संतुलन और रक्षा के गुणों से युक्त है. जिस प्रकार अर्जुन ने रणभूमि में धर्म और मानवता के मार्ग को अपनाया, उसी प्रकार यह वृक्ष भी अपने औषधीय, पर्यावरणीय और सामाजिक योगदान के माध्यम से जीवन की रक्षा करता है.

अर्जुन की गहरी जड़ें हमें स्थिरता और धरातल से जुड़े रहने का संदेश देती हैं, उसकी छाल पीड़ा हरने और जीवन बचाने की शक्ति का प्रतीक है, और उसकी घनी छाया सभी को समान रूप से शरण देने वाली करुणा का दर्पण है. यह वृक्ष न केवल हृदय और शरीर को बल देता है, बल्कि आत्मा को भी शांति प्रदान करता है.

आधुनिक विज्ञान, आयुर्वेद और लोकविश्वास—तीनों का संगम अर्जुन में दिखाई देता है. यह हमें यह भी सिखाता है कि प्रकृति के प्रत्येक तत्व में ज्ञान, उपचार और जीवन का आधार छिपा है, बस आवश्यकता है उसे पहचानने और संरक्षित करने की. इसीलिए, अर्जुन वृक्ष हमारे लिए केवल जंगल का एक पेड़ नहीं, बल्कि प्रकृति का वह धर्मयोद्धा है जो समय, मौसम और युग बदलने पर भी अपनी सेवा, शक्ति और संवेदनशीलता में अडिग बना रहता है.

अमलताश : प्रकृति की मुस्कान

अमलताश के पेड़ ने सबके सामने एक बहुत बड़ी समस्या खड़ी कर दी थी, जिसके बाद किसी को भी यह समझ नहीं आ रहा था कि अब पेड़ों की सुंदरता की तारीफ़ कैसे की जा सकती है. बीते दिनों में अमलताश ने अपने बारे में बहुत सी बातें सुनीं, लेकिन इसके बावजूद वह वैसे ही खड़ा रहा. फरवरी की शुरुआत में धीरे-धीरे उसकी पत्तियाँ झड़ने लगीं, और अप्रैल तक मानो अमलताश पूरी तरह सूना हो चुका था.

सबके लिए वह बस एक आम पेड़ था, लेकिन एक दिन अचानक पर्पल सनबर्ड आकर अमलताश की एक टहनी पर बैठ गई. अब उस चिड़िया को देखकर सब हैरान थे. बगल में आम और शीशम के पेड़ खड़े थे, लेकिन वह चिड़िया आकर हमेशा उसी पेड़ पर बैठती. यह वाकई हैरानी की बात थी, और इसी हैरानी में बड़े-बड़े विद्वान, जिनके अनुसार अमलताश ऐसा पेड़ था जिसका होना या न होना कोई मायने नहीं रखता, उलझन में पड़ गए.

दो-तीन महीने बीते और फिर हरी पत्तियों के बीच से पीले रंग के फूल झाँकने लगे. जो लोग यह सोच रहे थे कि इस सूने सिर पर अब पत्तियाँ नहीं आ सकतीं, उनके लिए यह चौंकाने वाला था—क्योंकि न केवल पत्तियाँ लौटीं, बल्कि रंगों की भी बरसात हो गई.

धीरे-धीरे पूरा पेड़ सुंदर पीले फूलों से लद गया, और उसकी किसी टहनी पर नीली सी सनबर्ड बैठकर पूरी दुनिया को निहारती रहती. जब भी उस चिड़िया को देखा, तो यही लगता कि ये दोनों एक-दूसरे के लिए ही बने हैं. चमकीले पीले फूलों के बीच बैठी वह सनबर्ड और अमलताश—दोनों बिल्कुल विपरीत रंगों के होते हुए भी, उसकी आँखें और फूलों से भरी टहनी पर बैठने का अंदाज़ मानो पूरी दुनिया को यह कह रहा था कि ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं.

अमलताश-अमलताश-अमलताश...

उस चिड़िया से तुम्हारा क्या संबंध है? पूरी दिल्ली में तुम दोनों ने मिलकर सबकी नज़रें अपनी ओर खींच रखी हैं और यह बिल्कुल भी ठीक नहीं है. अमलताश, तुम्हारे मंसूबे मुझे साफ़-साफ़ दिख रहे हैं. शायद अभी तक आपको कुछ समझ नहीं आ रहा होगा. तो ज़रा ठहरिए—अमलताश और सनबर्ड के संबंध में जाने से पहले, यह जान लीजिए कि आखिर यह अमलताश है कौन.

अमलताश भारतीय उपमहाद्वीप का निवासी है, हालांकि इसकी कुछ प्रजातियाँ दक्षिण-पूर्वी एशिया में भी पाई जाती हैं. अब देखिए, परिवार में भी तो लोग रोज़गार और तरक्की की तलाश में घर छोड़कर दूर-दूर जा बसते हैं, ठीक वैसे ही यह पेड़ भी भारत ही नहीं, बल्कि दुनिया के अलग-अलग कोनों में दिखाई देता है. अमलताश भाईसाहब का पूरा कुनबा दक्षिण भारत में बसता है, लेकिन उनके कुछ भाई-बंधु दिल्ली, लखनऊ और देश के कई बड़े शहरों में अपनी पहचान बना चुके हैं.

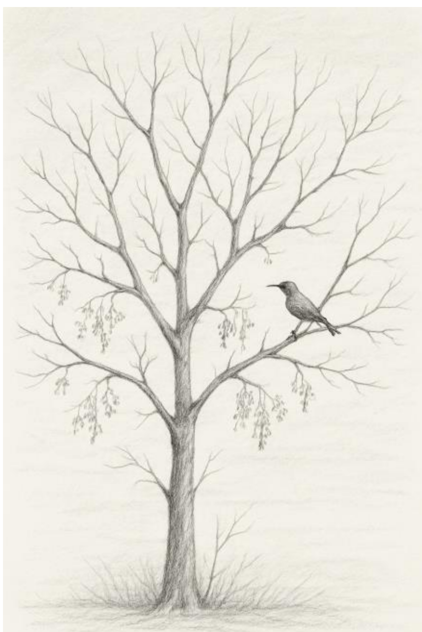

देश की राजधानी दिल्ली में तो इनकी धाक है. ख़ासकर दक्षिण दिल्ली में, जब आप वसंत विहार की तरफ़ बढ़ते हैं, तो मई-जून की झुलसा देने वाली गर्मी में भी ये पेड़ पूरी शान से खिले हुए मिलते हैं. करारी धूप में इनके सुनहरे पीले फूल मानो मुस्कुराकर हम सबको यही संदेश दे रहे हों— "थको मत, डटे रहो, मुश्किल वक्त भी बीत जाएगा."

अमलताश की सुंदरता और महत्व को देखते हुए दिल्ली और केरल ने इन्हें अपने-अपने प्रदेश का आधिकारिक फूल घोषित किया है. लेकिन यह बात यहीं ख़त्म नहीं होती. अमलताश का असली जादू तो तब शुरू होता है, जब इनकी शाखाओं पर वह नन्हीं-सी, चमकीली पर्पल सनबर्ड आकर बैठती है.

शहर की भागदौड़, ट्रैफिक के शोर और धूल-धक्कड़ के बीच, इन दोनों का मिलन मानो किसी फिल्म का धीमा-सा खूबसूरत दृश्य लगता है—पीले फूलों से लदे पेड़ पर बैंगनी-नीली सी चिड़िया, जिसकी चोंच फूलों में धीरे-धीरे गोते लगाती है, जैसे कोई प्रेमी अपने साथी के कानों में फुसफुसाकर राज़ कह रहा हो. आसपास के लोग रुककर इन्हें देखते हैं, कैमरे उठाते हैं, लेकिन ये दोनों अपनी दुनिया में खोए रहते हैं.

शायद यह सिर्फ प्रकृति का खेल है, या फिर एक अनकही दोस्ती. जो भी हो, इनका साथ हमें यह सिखाता है कि विपरीत रंग, अलग स्वभाव और अलग अस्तित्व के बावजूद, जब दो जीव एक-दूसरे के साथ सामंजस्य में होते हैं, तो दृश्य हमेशा अद्भुत बनता है. यही तो जीवन है—एक-दूसरे के लिए जगह बनाना, चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी अलग क्यों न हों.

अमलताश का फूल और केरल का न्यू ईयर

अमलताश की पहुँच बहुत दूर-दूर तक है. इसने सभी को अपना कायल बना रखा है. केरल में, जहाँ बच्चे और बुज़ुर्ग नया साल 1 जनवरी को नहीं मनाते, वहाँ उनका नया साल अमलताश के फूल खिलने के साथ शुरू होता है. मलयाली परंपरा में अमलताश के पेड़ को वहाँ मनाए जाने वाले प्रमुख त्योहार **विशु** के साथ जोड़ा जाता है.

केरल में विशु का बहुत बड़ा महत्व है. इसे समृद्धि का प्रतीक माना जाता है. यह त्योहार **मेदम राशि** में मनाया जाता है, यानी मार्च से अप्रैल के बीच. ठीक उसी समय अमलताश भी अपनी पूरी रौनक के साथ खिलना शुरू हो जाता है. विशु के साथ-साथ अमलताश को सुख, शांति और समृद्धि का प्रतीक माना जाता है.

केरल में फसलों की कटाई के समय विशु त्योहार मनाया जाता है. खेती में फसलों की कटाई ही किसानों के लिए सबसे बड़ा उत्सव होती है. ऐसे में,

सुंदर और सुसज्जित खिले हुए अमलताश के फूल लोगों का मन मोह लेते हैं. केरल में अमलताश का खिलना भगवान के आगमन का प्रतीक माना जाता है. नए साल का जश्न अप्रैल में फसल कटाई के समय मनाया जाता है और उस पर्व को विशु कहा जाता है. यही वह समय होता है जब अमलताश के फूल पूरी सड़कों को निखारते हुए अपने चमकीले पीले रंग से ढक देते हैं.

समृद्धि का प्रतीक अमलताश – विशु के समय खिलने वाले अमलताश का महत्व केरल के लोगों के लिए समय के साथ और बढ़ता गया है. विशु को फसल कटाई के समय मनाया जाता है, और तब अमलताश के पेड़ों पर पीले फूलों के गुच्छे लटके होते हैं. यही उन्हें सौहार्द और खुशी का प्रतीक बना देता है.

विशु, केरल की संस्कृति और वहाँ के किसानों का प्रतीक है. केरल का नववर्ष और अमलताश के चमकीले फूलों का खिलना—दोनों को ही एक

त्योहार की तरह मनाया जाता है. अमलताश यानी **इंडियन लैबर्नम** के चमकीले पीले फूलों के गुच्छे केरल के नए साल पर सबका ध्यान अपनी ओर खींच लेते हैं. विशु के समय सजावट में अमलताश के फूल सबसे ज़्यादा काम आते हैं, क्योंकि केरल में इन्हें समृद्धि और सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है. लेकिन ठहरिए, इनके चर्चे यहीं खत्म नहीं होते—अमलताश की कहानियों के साथ अब हमें कई देशों की सैर भी करनी होगी.

भारत के बाद थायलैंड भी पहुँच गया अमलताश

अमलताश की कहानियों में, अगर उसके भौकाल की चर्चा न हो तो वह कहानी अधूरी ही रह जाएगी. तो चलिए, कहानियों के क्रम में अब चलते हैं थाईलैंड. दक्षिण एशिया में थाईलैंड आज के समय में सबका दुलारा है. घूमने-फिरने के लिए थाईलैंड लोगों की आम पसंद है. लेकिन इस आम पसंद में शायद सभी को यह मालूम न हो कि इंडियन लैबर्नम थाईलैंड का **राष्ट्रीय वृक्ष** है.

थाईलैंड में अमलताश की अपनी एक अलग पहचान है. यहाँ अमलताश के फूलों को “Dok Koon” कहा जाता है. यह फूल थाईलैंड के शाही परिवार का प्रतीक माने जाते हैं. इस पेड़ से निकलने वाले पीले फूल थाईलैंड के राजा को उनकी रॉयल्टी से जोड़ते हैं. आपको बता दूँ कि थाईलैंड में हर दिन का एक रंग माना जाता है, जिससे वहाँ के दिनों की पहचान होती है.

अब सवाल यह है कि आखिर थाईलैंड के राजा को अमलताश के पीले रंग से क्यों जोड़ा जाता है? तो इसका उत्तर यह है कि थाईलैंड में सोमवार का दिन पीले रंग से जुड़ा है, और इसी दिन राजा भूमिबोल अदुल्यादेज़ (राम IX) का जन्म हुआ था. यानी 5 दिसंबर 1927 को, जब राजा भूमिबोल का जन्म हुआ, वह दिन सोमवार था और सोमवार का रंग अमलताश के पीले फूल से पहचाना जाता है.

संक्षेप में कहें तो राजा भूमिबोल अदुल्यादेज़ (राम IX) न केवल थाईलैंड के, बल्कि दुनिया के सबसे लंबे समय तक शासन करने वाले शासकों में से एक थे. 9 जून 1946 से लेकर 13 अक्टूबर 2016 तक वे थाईलैंड के राजा रहे. विकास और जनकल्याण के लिए समर्पित राजा भूमिबोल दुनिया

में सबसे लंबे समय तक शासन करने वाले राष्ट्राध्यक्षों में से एक माने जाते हैं.

यूं तो मैं बहुमुखी प्रतिभा का धनी हूँ, लेकिन उसके बावजूद मेरा प्रयास हमेशा यही रहता है कि मैं प्रकृति में सबके काम आ सकूँ. मैंने देखा है कि लोग मेरे बारे में साहित्यिक जानकारी बहुत रखते हैं, मुझे कला के क्षेत्र में ज़रूर लाया जाता है, और इसके लिए मैं सबका आभारी हूँ कि आपने मुझे इसके योग्य समझा.

साहित्य और कला के प्रति मेरा रुझान अटूट है; चाहूँ भी तो मैं उससे दूर नहीं जा पाऊँगा. यह बातें मैं यूँ ही नहीं कह रहा—अगर आपने महादेवी वर्मा की कविता **'अमलतास'** पढ़ी होगी, तो उसमें उन्होंने मुझे इस्तेमाल करके प्रेम और विरह का सजीव साक्ष्य दिया है. उनकी कविता के इस अंश पर ज़रा गौर करिए—

"अमलतास! अमलतास!

किस उर की जलन का तू, रे धूम्र-धूलित उपहास?"

महादेवी वर्मा की इस कविता में अमलताश को विरह और पीड़ा का प्रतीक माना गया है. अमलताश के पेड़ पर हुए पीले फूल उन्हें किसी छुपे हुए दर्द, अधूरी आशाओं और बीते समय की याद दिलाते हैं. मैं इस कविता को बहुत प्रभावशाली मानता हूँ. इस कविता ने मानवीय भावनाओं और प्रकृति के रंग को जोड़कर एक बेहद सुंदर दृश्य पैदा करती है.

एक तरफ जहां महादेवी वर्मा ने मुझे विरह के उदाहरण के तौर पर इस्तेमाल किया, वही दूसरी तरफ अज्ञेय ने प्राकृतिक सौन्दर्य, मेरी क्षणभंगुरता के लिए मुझे उदाहरण के तौर पर इस्तेमाल किया है. अज्ञेय की कविता का भी शीर्षक 'अमलतास' ही है. उनकी कविता का इस अंश पर जरा गौर करिएगा

"झर-झर झरता है अमलतास.

धूप में निखरा सुवर्ण आभास.."

अज्ञेय ने इस कविता के जरिए अमलताश के फूलों को प्रकृति की सुंदरता और जीवन के क्षणिक सौन्दर्य से जोड़ा है. कविता में जब आप अज्ञेय के शब्दों और उनकी रचना पर गौर करेंगे तब आप इस चीज को अपने जीवन में अपना पाएंगे आखिर कैसे अज्ञेय ने अमलताश के फूलों को सूरज की रोशनी में चमकते हुए दिव्य आभास के रूप में देखते हैं. कविता अमलताश के फूलों को प्रकृति के सौन्दर्य और जीवन के परिवर्तनशील स्वभाव के बारे में बताती है. हिन्दी साहित्य में अज्ञेय की कविता का योगदान आधुनिक कविता में प्रकृति और दर्शन के सुंदर मेल का उदाहरण है.

अमलताश के फूलों का खिलना सिर्फ एक प्राकृतिक रूप नहीं है बल्कि मौसम के बदलने का भी प्रतीक है. हिन्दी साहित्य में वसंत/ग्रीष्म ऋतु के आगमन को अमलताश के फूलों से दर्शाया जाता है. महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत ने अपनी कई कविताओं में अमलताश के फूलों का इस्तेमाल यह दर्शाने में किया है.

साहित्य मेरे लिए एक अलंकार की तरह है, यह किसी भी चीज़ को अपने आभूषणों से भर देता है, लेकिन अमलताश बस इतने के लिए ही नहीं बना है बल्कि अगर आप कला के दृष्टिकोण से देखेंगे तब आपको मेरे बारे में और भी चीजें पता चलेगी जो शायद सबके लिए नहीं है.

कला से मेरा संबंध

साहित्य तो मेरे लिए मेरे जीवन समान है लेकिन उसके साथ-साथ कला से मेरी रुचि कभी कम नहीं हुई है. कला की विभिन्न विधाओं में मैं अपनी जगह बनाई रखी है. मेरे पीले फूल, पतली शाखाएं और मेरे झरते गुच्छे सदियों से कलाकारों को प्रेरित करते रहे हैं.

मधुबनी, वर्ली, और पहाड़ी चित्रकला में मुझे वसंत और गर्मी के प्रतीक के रूप में चित्रित किया जाता है. कई लोकचित्रों में मेरे झरते फूलों को शुभता और आनंद का प्रतीक माना गया है. प्रसिद्ध भारतीय कलाकारों ने मेरे झरते फूल और मेरे फूल के गुच्छों को कई तरह की पेंटिंग में इस्तेमाल किया है जिससे भारतीय सांकृति और पारंपरिक सौन्दर्य की झलक मिलती है.

मिथिला के चित्रकारों ने मेरे फूलों को विशेष रूप से उकेरा है. मधुबनी पेंटिंग में मिथिला के चित्रकारों ने अमलताश के फूलों को समृद्धि का प्रतीक माना है. सिर्फ फूल ही नहीं बल्कि मेरे पेड़ की कई श्रृंखला को समृद्धि का प्रतीक मान के उकेरा गया है. सिर्फ भारतीय चित्रकारों ने ही नहीं बल्कि मुग़ल काल के चित्रकारों ने भी मेरा इस्तेमाल महल के बगल में खड़े और तने मेरे फूलों से उनकी शोभा बढ़ाने में इस्तेमाल किया है.

मूर्तिकला और वास्तुकला में मेरा इस्तेमाल

मंदिरों में इस्तेमाल हुई कला को कभी पत्थरों पर, कभी लकड़ी पर उकेरा जाता है. कई भारतीय मंदिरों में और महलों में मेरे फूलों की आकृति उकेरी गई है. और ऐसा ज़्यादातर राजस्थान और दक्षिण के मंदिरों में हुआ है. मंदिरों में भी मेरे फूलों की आकृति को समृद्धि और शुभता का प्रतीक माना गया है.

इसके साथ ही टेक्स्टाइल इंडस्ट्री में भी मेरे फूलों का बहुत इस्तेमाल हुआ है. ऐसा कई बार हुआ है जब बनारसी और कांचीवरम सिल्क साड़ियों में मेरी फूलों की डिजाइन का इस्तेमाल किया गया है. खासकार बनारस के कारीगरों के लिए मेरे फूल उनकी कला का प्रतीक हैं.

बनारस के रेवाड़ी तालाब से सटी हुई गलियों से जब आप गुजरेंगे तब आपको साड़ियों के बनने की रेखाचित्र जरूर देखने को मिलेगी. बनारस की सिल्क साड़ियाँ सुप्रसिद्ध हैं, और इनकी पहचान ही बनारस है. मैं अमलताश आपकी खरीदी हुई बनारसी सिल्क साड़ियों के बॉर्डर पर जरूर दिखा जाऊंगा. मुझे हमेशा से वहाँ के लोगों ने अपनी सबसे एहम डिजाइन की लाइब्रेरी में रखा हुआ है. बनारसी सिल्क और कांचीवरम सिल्क की साड़ियों में मेरे फूलों की डिजाइन बहुत इस्तेमाल होता है. ऐसे में यह मेरे लिए बेहद जरूरी बन जाता है मार्केट में अपनी उपस्थिति बनाए रखना.

बनारस ने मुझे अपने खून में बसा लिया है जिसकी वजह से मैं चाह के भी इनसे दूर नहीं जा पाता हूँ. आजकल के डिजाइनर और खासकर युवा पीढ़ी के पास मेरे लिए बहुत सारी योजनाएं हैं जिसकी वजह से मैं सिर्फ

पेड़ के रूप में ही नहीं बल्कि हर के तरीके से आप लोगों के दिल में जिंदा हूँ.

यह तो मानना पड़ेगा कि युवा पीढ़ी के पास हर एक चीज़ को एक अनोखे अंदाज में देखने की कार्यशैली है, जिसकी वजह से आज के समय में हर एक पुरानी चीज़ का नया रूपांतरण देखने को मिलता है. मेरे रूप और मेरा प्रारूप दोनों ही आपको मनमोहित करने वाला होता है, और यही कारण है कि मैं कभी भी आपसे दूर नहीं हो सकता हूँ.

अच्छा मैं आपको बताऊँ, मुझे सिर्फ ऐसे ही लोग नहीं देखना पसंद करते हैं, बल्कि मेरे साथ बहुत सारी प्रतिभाएं भी जुड़ी हुई हैं जो मुझे सबसे अलग बनाती है. एक आम इंसान की रोजमर्रा वाली ज़िंदगी में उसे सबसे ज्यादा पाज़िटिव एनर्जी की जरूरत पड़ती है. सुंदर वातावरण सबको मनमोहित करता है, लेकिन उसके साथ हर एक आदमी की अपनी जरूरत होती है. एक ऐसे भाव की जो उसे हमेशा सही रास्ते पर ही नहीं बल्कि उसे सही दिशा भी दिखाएं.

भारत में ज्यादातर घरों में आपको पौधे-पेड़ जरूर देखने को मिलेंगे क्योंकि हर एक आदमी पेड़ों से जुड़ाव होता ही है. मैं कभी-कदार नोएडा के लोगों को देखता हूँ बेचारे-चाह के भी अपनी ज़िंदगी नहीं सुधार पाते हैं. ऐसा होने का सबसे बड़ा कारण ये आम इंसान ही है. विकास की दौड़ में यह लोग इतनी तेजी से दौड़े कि इन्हें अपने आस-पास की जगहों का कभी ख्याल नहीं आया. मुझे इनकी दुर्दशा देखकर बहुत दुख होता है... लेकिन क्या ही किया जाए, यह लोग भी ना, कभी समझेंगे ही नहीं. 'विकास' यह एक ऐसा शब्द है जो हमेशा हमारी जुबानों पर रहता है. मैंने अनगिनत बार इन लोगों के मुंह यह शब्द सुना है. अब मुझे यह नहीं समझ आता है कि आखिर ये विकास कहते किसे हैं. इनके लिए विकास की परिभाषा क्या है?

क्या विकास इनके लिए बड़ी-बड़ी इमारतों में रहने को कहते हैं? या एक आदमी के लिए चार गाड़ियों को विकास कहा जाता है? ऐसे ही कुछ प्रश्नों से मैं चिंतित रहता हूँ कि आखिर आगे क्या होगा?

पुराने जमाने में मुझे याद है लोग अपने घर के बाहर मुझे (अमलतास का पेड़) जरूर लगाते थे. मैंने कई बार यह महसूस किया है कि मुझे लगाने के बाद परिवार के अंदर भी एक खुशनुमा माहौल रहे. इस बात को मिथक कहना गलत होगा लेकिन हाँ मुझे लोग अपने आँगन में या कभी मुझे घर के बाहर लगाते थे क्योंकि उन्हें लगता था कि मेरी वजह से सकारात्मक ऊर्जा का प्रवेश उनके घरों में रहेगा. यह ऊर्जा का संचार लोगों के लिए बेहद जरूरी होता था क्योंकि बिना इसके ना कभी आदमी खुश रहा है ना कभी परिवार की तरक्की हुई है.

मैं ट्रेंड की भी बात करता हूँ. मेरी उम्र तो ज्यादा जो गई है लेकिन जैसे आम इंसानों में अलग-अलग तरह के ट्रेंड्स चलते हैं, वैसे ही हम पेड़ों में भी ट्रेंड्स की कमी नहीं है. यह बात आज से करीब 15 साल पुरानी है, जिस समय भारत भी आत्मनिर्भर होने की राह पर बहुत तेजी से बढ़ रहा था. लोगों की आर्थिक स्थिति में एक सर्वोच्च गति उनके ऊपर प्रभावी हो रही थी.

देश भर में बड़े-बड़े घर बनते जा रहे थे, नई तरीके की टाइल्स, ग्रैनाइट का इस्तेमाल हो रहा था. ऐसे में जब उस घर में थोड़ी सी जगह बची तो लोगों ने सोचा कुछ पेड़ लगा देंगे. अब पेड़ किस तरह होंगे, उसकी खासियत क्या होगी, इसे नजरंदाज करके वह पेड़ लगाए गए जो दिखने में सुंदर लगे और छोटे हों जिससे घर की सुंदरता ना छिप जाए. लोगों ने कई तरीके के पेड़ लगाएं लेकिन उससे सिर्फ उनके घर की सुंदरता बढ़ी है.

मुझे याद है वह दिन जब मुझे छाँव के लिए लगाया जाता है. लोग अपने घरों के बाहर मुझे लगाया करते थे ताकि गर्मी में मेरी छाँव के नीचे लोग आराम कर सकें. गर्मी के दिनों में ही मेरे पास फूल आते हैं, अमूमन अप्रैल और मई के महीने मैं खुद फूलों की बौछार करता हूँ जिससे ना तो सिर्फ सुंदरता बढ़ती है बल्कि ऐसा लगता है कि मानो पूरी रोड ही पीले रंग की हो चुकी है. मैं लोगों के लिए गर्मी का उपहार हूँ, मेरी छाँव लोगों को गर्मी के मौसम में राहत देती है और यह मेरे पीले-पीले फूल मुझे हमेशा मुस्कुराने पर मजबूर किए रहते हैं.

भारत के कुछ शहरों में मेरे बारे में ऐसा भी कहा जाता है कि मैं जहां भी रहता हूँ, वहाँ पर लोगों को मेरी छाँव में बैठने से मानसिक शांति मिलती है. ऐसी बहुत सी कथाएं हैं जो मुझे सबसे अलग भी बनाती हैं और मुझे सबके साथ रहने को मजबूर भी करती हैं. मुझे बहुत गर्व होता है कि मैं हमेशा से लोगों के बीच रहा हूँ और मेरा महत्व उनके लिए कई मायनों में रहा है. थायलैंड से लेकर केरल तक मई हर धर्म-हर मज़हब का साक्षी रहा हूँ. ऐसे में मेरे पास अगर सबसे ज्यादा कुछ बचता है तो वह मेरी पुरानी यादें और लोगों के साथ बिताए गए मेरा समय.

मेरा समाज

मैं इस बात से बहुत प्रफुल्लित होता हूँ कि मेरे पास मेरा जो स्थानीय समाज है, वह मुझे कभी नीचा नहीं दिखाता है. मैं बलुई मिट्टी का भी राजा हूँ और चिकनी मिट्टी भी मुझे बहुत सुहाती है. मेरे अगल-बगल रहने वाले सब मुझसे खुश रहते हैं. मेरा साथ कभी चिलबिल देता है तो कभी अशोक मेरे साथ रहते हैं. यही मेरा जीवन है और यही मेरा स्थानीय समाज भी. हो सकता है मेरी कहानी पढ़ते-पढ़ते आपको शायद नींद आ रही होगी लेकिन अब क्या करूँ, अगर मैं आपको ये आज नहीं बताता तो शायद आने वाले दिनों में आप मुझे भूल जाते.

हमारा समाज आम इंसानों के विकास की तेज गति से डरता जा रहा है, और हमें यह नहीं समझ में आ रहा है कि आखिर हम आप सब लोगों के बीच कैसे पहुंचे. एक डर का माहौल है लेकिन उस डर में भी हम आपके साथ हैं और हमेशा अपनी ओर से जितना भी होगा, हम करेंगे. अपने पूर्णकालिक जीवन में हमने बस यही सीखा है कि खाना तो हम जीवन भर खा लेंगे और बना लेंगे लेकिन उससे ज्यादा जरूरी है हमारी जिम्मेदारी इस देश के प्रति और उस जमीन के प्रति जिसके बदौलत हम और आप सब जिंदा हैं.

अंत में आप सभी से मेरी बस यही दरख्वास्त है कि जब भी मौका मिले, एक बार मेरी कहानी जरूर पढ़िएगा और मेरे बारे में सोचिएगा. मैं मजबूर हूँ, मुझे आप सब भूलते जा रहे हैं और इस बात का डर मुझे हर एक दिन, हर एक वक्त सताता जा रहा है.

जब मैं इस किताब *"गाछ"* का नाम सोच रहा था, तब मन में केवल एक शब्द गूँज रहा था—**गाछ**, यानी पेड़. पेड़, जो सिर्फ एक जैविक संरचना नहीं है, बल्कि जीवन, स्मृति, संस्कृति और अस्तित्व का जीवंत प्रतीक है. इस किताब के पन्नों में दर्ज हर पेड़ की अपनी एक अलग कहानी है, लेकिन अमलताश की कहानी में एक विशेष आभा है—एक रंग है, जो केवल आँखों को नहीं, आत्मा को भी छू जाता है. उसकी पीली आभा धूप के सुनहरे कणों की तरह हमारे भीतर उतरती है और हमें याद दिलाती है कि जीवन में भी ऐसे मौसम आते हैं, जब बंजरपन के बाद अचानक रंगों की बारिश होती है.

अमलताश का जीवन एक यात्रा है—भारत के दक्षिणी गाँवों से लेकर दिल्ली की धूल भरी सड़कों तक, केरल के विशु उत्सव से लेकर थाईलैंड की राजशाही तक, और महादेवी वर्मा की कविताओं से लेकर हर राहगीर की आँखों तक. यह यात्रा हमें यह समझाती है कि एक पेड़ केवल अपने बीज से नहीं, बल्कि उन कहानियों से भी जन्म लेता है, जो उसके चारों ओर बुनी जाती हैं.

केरल में, अमलताश का खिलना नए साल का संकेत है. वहाँ के लोग 1 जनवरी से नहीं, बल्कि तब नया साल मानते हैं जब अमलताश अपने फूलों की वर्षा करता है. यह परंपरा हमें यह सिखाती है कि समय का मापदंड केवल कैलेंडर नहीं, बल्कि प्रकृति का चक्र भी है. फसल की कटाई, फूलों का खिलना, बारिश की पहली बूंद—ये सभी जीवन के असली त्योहार हैं. विशु के समय जब केरल की गलियाँ पीले फूलों से ढक जाती हैं, तब केवल पेड़ ही नहीं, पूरा समाज एक रंग में रंग जाता है. यह दृश्य हमें याद दिलाता है कि प्रकृति और संस्कृति एक-दूसरे की प्रतिछाया हैं.

थाईलैंड में, अमलताश—या "Dok Koon"—राजशाही का प्रतीक है. राजा भूमिबोल अदुल्यादेज़ का जन्म सोमवार को हुआ था, और वहाँ सोमवार का रंग पीला है, ठीक वैसा ही पीला जैसा अमलताश के फूल. इस तरह एक पेड़ एक पूरे राष्ट्र की पहचान बन गया. यह उदाहरण हमें यह सोचने पर मजबूर करता है कि कैसे एक वृक्ष मानव इतिहास और राजनीति की बुनियाद में भी अपनी जगह बना सकता है.

साहित्य में अमलताश का स्थान भी कम नहीं है. महादेवी वर्मा ने इसे प्रेम और विरह का प्रतीक बनाया, पंत ने इसके रंग को जीवन की तीव्रता से जोड़ा. इन कविताओं में अमलताश केवल एक पेड़ नहीं, बल्कि एक भाव है—कभी आशा का, कभी विछोह का, कभी पुनर्जन्म का. यही वह शक्ति है, जो पेड़ों को गाछ बनाती है—वह जीवंत इकाई जो केवल सांस नहीं लेती, बल्कि मनुष्य की भावनाओं को भी अपने भीतर संजोती है.

जब मैं अमलताश को देखता हूँ, तो मुझे केवल उसके फूल नहीं दिखते, बल्कि उसकी यात्रा भी दिखती है. फरवरी में जब उसकी डालियाँ सूनी हो जाती हैं, तब लगता है कि मानो जीवन उससे छिन गया हो. लेकिन कुछ ही महीनों में, वही पेड़ पीले फूलों से लद जाता है. यह चक्र एक संदेश देता है—कठिनाई और रिक्तता के बाद भी जीवन फिर लौटता है, और लौटने पर और भी खूबसूरत हो जाता है. यह संदेश केवल प्रकृति का नहीं, बल्कि जीवन का भी है.

आज के समय में, जब शहर फैल रहे हैं, सड़कों का जाल बिछ रहा है, और कंक्रीट की दीवारें आसमान को ढक रही हैं, तब अमलताश जैसे पेड़ हमारी आँखों को राहत देते हैं. वे हमें याद दिलाते हैं कि सौंदर्य केवल कृत्रिम उद्यानों में नहीं, बल्कि उन पेड़ों में भी है जो धूल और धूप के बीच भी खड़े रहते हैं. वे केवल छाया नहीं देते, बल्कि हमें यह भी सिखाते हैं कि कैसे कठिन परिस्थितियों में भी मुस्कुराना चाहिए.

"गाछ" का मतलब केवल "पेड़" नहीं है, बल्कि वह जीव जो अपनी जड़ों से धरती को थामे रखता है, अपने तनों से समय को सहता है, और अपनी शाखाओं से आसमान को छूने की कोशिश करता है. अमलताश इस परिभाषा का एक उजला उदाहरण है. उसकी जड़ें हमें परंपरा और संस्कृति से जोड़ती हैं, उसका तना हमें स्थिरता और सहनशीलता सिखाता है, और उसकी शाखाओं पर खिले फूल हमें यह बताते हैं कि जीवन में रंग हमेशा लौटकर आते हैं.

पेड़ों और मनुष्य के रिश्ते की एक अजीब बात है—हम उन्हें काटते भी हैं, पूजते भी हैं; उनकी छाया में विश्राम करते हैं, और उन्हीं की लकड़ी से अपने घर भी बनाते हैं. यह विरोधाभास केवल हमारी ज़रूरत का नहीं,

बल्कि हमारे अस्तित्व का भी हिस्सा है. अमलताश की कहानी हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि क्या हम पेड़ों को केवल उनकी उपयोगिता के आधार पर आंकते हैं, या हम उन्हें उस जीवन के रूप में भी देखते हैं जो हमारे जीवन को अर्थ देता है.

इस किताब *"गाछ"* का उद्देश्य केवल पेड़ों के बारे में जानकारी देना नहीं है. यह उनके जीवन, उनके संघर्ष, उनके सौंदर्य और उनके संदेश को आपके दिल तक पहुँचाना है. हर गाछ की तरह, अमलताश भी हमें यह सिखाता है कि जीवन में स्थिरता और परिवर्तन दोनों ज़रूरी हैं. उसकी जड़ें हमें थामे रखती हैं, और उसके फूल हमें आगे बढ़ने का साहस देते हैं.

जब हम किसी पेड़ की छाया में खड़े होते हैं, तो हमें लगता है कि वह केवल हमें धूप से बचा रहा है. लेकिन सच यह है कि वह हमें समय से बचा रहा है—उस तेज़ी से बीतते समय से, जिसमें हम अपने आप को खो देते हैं. अमलताश के फूलों की बरसात में खड़े होकर हमें यह महसूस होता है कि हम भी प्रकृति के इसी चक्र का हिस्सा हैं.

शायद यही कारण है कि मैंने इस किताब का नाम *"गाछ"* रखा—क्योंकि पेड़ केवल एक विषय नहीं, बल्कि एक दृष्टिकोण हैं. वे हमें यह सिखाते हैं कि कैसे जड़ें जमाए रखना है, कैसे मौसम बदलने पर खुद को बदलना है, और कैसे हर कठिनाई के बाद फिर से खिल उठना है.

अमलताश की कहानी यहाँ समाप्त नहीं होती. हर बार जब वसंत आता है, वह फिर खिलता है, फिर अपनी पीली छटा से आसमान को रंग देता है, फिर राहगीरों को रोककर उन्हें जीवन के रंग दिखाता है. और जब उसके फूल ज़मीन पर गिरते हैं, तो वे केवल मुरझाते नहीं, बल्कि धरती को नए जीवन के लिए तैयार करते हैं. यह चक्र अनंत है—जैसे गाछ का जीवन.

हमारी दुनिया में बदलाव तेज़ी से आ रहा है—जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, और शहरीकरण की चुनौतियाँ पेड़ों के लिए कठिन समय ला रही हैं. लेकिन अगर हमने अमलताश से कुछ सीखा है, तो वह यह है कि कठिनाइयों के बावजूद भी जीवन को जीना और दूसरों को जीवन देना ही सबसे बड़ा धर्म है.

इस निष्कर्ष के रूप में, मैं यह कहना चाहूँगा कि *"गाछ"* केवल एक किताब नहीं, बल्कि एक निमंत्रण है—आपके लिए, मेरे लिए, हम सभी के लिए—कि हम फिर से पेड़ों के दोस्त बनें, उन्हें केवल लकड़ी और जमीन के टुकड़े न समझें, बल्कि उन्हें जीवंत साथियों की तरह देखें. क्योंकि जब तक गाछ हमारे साथ हैं, तब तक हमारी दुनिया में रंग हैं, छाया है, और सबसे बढ़कर—आशा है.

अस्तित्व का अखंड स्तंभ: बनयान

काफी देर से हाथ बांधे झूला खाली होने का इंतजार करता यही कोई दस ग्यारह साल का सांवला रंग का दुबला सा लड़का गोपाल दांतो से नाखून चबाता हुआ कुछ सोच ही रहा था कि, जैसे ही वर्षा जून की गर्मी में सूखी पड़ी मिट्टी में पांवों को धँसाते हुए झूले को रोक ही रही थी कि, गोपाल ने दौड़कर बाकी बच्चों से पहले रस्सी लपकी और झूले पर बैठने लगा.

लार से गीली उंगली का स्पर्श होते ही वर्षा ने मुंह बनाकर उसकी तरफ जरा घूर कर देखा..... इस बात से बेफिक्र गोपाल पांव को मिट्टी में धँसाते हुए झूले को पीछे ले गया और एक जोर की झोंक दी और खुशी से खिलखिला उठा. नई मां के आने के बाद गोपाल की जिंदगी में ये बरगद के पेड़ से झूलता झूला ही तो था, जो उसे बचपन याद दिलाता था, वरना तो घर के काम, मां की सेवा और मां की मार और तानों में ही दिन गुजरता था. गोपाल आनन्द विभोर होकर झूले के दो-चार झूनक भर ही पाया था कि, उसे कहीं दूर से उसकी नई मां की आवाज सुनाई पड़ी, लेकिन गोपाल झूले की झूनक में गुम उस आवाज को सुनना ही नहीं चाहता था कि, तभी अचानक उसका झूला रुका और एक जोरदार थप्पड़ उसके दाहिने कान पर लगा और गोपाल झूले से जमीन पर जा गिरा, लीला ने कुछ बुदबुदाते हुए बरगद के पेड़ को ऊपर से नीचे तक देखा और फिर गोपाल की बांह पकड़ कर उसे घर की तरफ ये कहते हुए घसीटने लगी कि,

"सांझ होते ही गांव का सारा बच्चा बरगद के पेड़ से हट जात है , लेकिन ई मनहूस वही खड़ा रहत है, खाना ही है तो ऐसे ही खा जा नासपीटे... ई बरगद की आड़ काहे लेत है...."

रोज की तरह आज भी लीला बड़बड़ाते हुए गोपाल को घर की तरफ खींच कर ले जा रही थी और गोपाल पीछे मुड़कर सवाल भरी नजरों से रोज की तरफ पहले उस सुकून भरे झूले को और फिर बरगद को देखकर सोच रहा था कि, ऐसा क्या है जो मां रोज मुझे ऐसे खींच कर ले जाती है.

यह सवाल पहली बार उसके दिमाग में नहीं आया था. पहले भी कई बार उसके मन में ये सवाल आया, लेकिन जब इसका जवाब न मिला तो ये सवाल ही रहा और मां से पूछे इतनी उसकी हिम्मत नहीं थी. घर पहुंचते ही मां ने कई काम थमा दिए और गोपाल उसी में व्यस्त हो गया.

दूसरे दिन फिर शाम ढली और मां के सोने के दौरान गोपाल फिर से पीपल वाले झूले के पास पहुँच गया. रोज की तरह आज भी पेड़ के नीचे गांव के कई और बच्चे भी खेल रहे थे, क्योंकि, गोपाल बाकी बच्चों से ज्यादा गंभीर और जिम्मेदार था तो अलग होने की वजह से उससे कम ही बच्चे बोलते थे. पेड़ के नीचे खड़ा वो झूला खाली होने का इंतजार कर ही रहा था कि, आज झूले पर बैठी राधा को उसकी बड़ी दीदी जरा गुस्से में बुलाने आई थी. राधा की दीदी ने दुप्पटे को कंधे पर सँभालते हुए राधा का हाथ पकड़ा और बोली,

"अब चल बिटिया सूरज ढल रहा है, रात में बरगद के नीचे नहीं रुकते"

राधा उतरकर अपनी दीदी के साथ जाती, उससे पहले सवालों से भरे पड़े गोपाल ने तपाक से पूछा,

"क्यों दीदी ! बरगद के पेड़ के नीचे शाम के बाद क्यों नहीं रुकते हैं?"

गोपाल की अचानक से आवाज सुनकर कोलाहल करते बच्चे उसकी तरफ देखने लगे और ऐसे में राधा की दीदी ने राधा को झूले से उतारते हुए कहा कि,

"क्योंकि, हमारे मां और गांव के बाकी लोग भी कहते हैं कि, बरगद के पेड़ पर भूतों का वास होता है, इसलिए शाम को इसके नीचे नहीं रुकते."

दीदी की जवाब में हाँ में हाँ मिलाते हुए गिरधर भी बोला,

"तुमको नहीं मालूम गोपाल मेरे पिता जी ने तो बरगद के पेड़ पर रहने वाले भूत को देखा भी है, वो न एक रात...... गिरधर अपनी बात पूरी करता उससे पहले बरगद की शाखा से झूलता हुआ पारस बोला,

"अरे इसका तो कुछ नहीं, मेरे दादा ने तो इस पर रहने वाले भूत को हनुमान चालीसा पढ़कर भगाया भी है."

पारस की बात पर यकीन करते हुए सब बच्चे हैरत से उसकी तरफ देखने लगे. लेकिन पारस की बात पर राधा की दीदी हँसी और राधा को लेकर चली गयी. उनके जाते ही पप्पू बोला,

"अरे तुम्हारे तो दादा पापा ने देखा है, मैं तो हर रोज अपनी मां से मिलने आता हूँ, वो मुझे रोज पूड़ी खीर खिलाती है...."

पप्पू की बात को गोपाल बड़ा ध्यान से सुन रहा था, तभी वर्षा जरा आगे आकर बोली,

"तो क्या, मुझे मेरी नानी मिल जाएगी और पूड़ी खीर खिलाएंगी, लेकिन वो तो बूढ़ी थी, बना नहीं पाएंगी."

इतना कहकर वर्षा दुखी हो गयी, उसे दुःखी देख पप्पू ने बड़प्पन के साथ बोला,

"अरे नहीं रे पगली, जो लोग मर जाते हैं, उनको भगवान जी खाना देते हैं, वो खुद थोड़ी बनाते हैं समझी....

पप्पू अपनी बात पूरी करता उससे पहले नम आंखे लिए गोपाल अपने आंसू पोंछते हुए अपने घर की तरफ भागा और मन ही मन सोच रहा था कि,

"नई मां सच्ची कहती थी, मेरी माँ भी इन सबकी मां और नानी के जैसे यही बरगद के पेड़ पर रहती होंगी तभी नई मां मुझे उनसे नहीं मिलने देती. कहीं वो मुझे ले गयी तो इनका काम कौन करेगा, अब तो कुछ भी हो जाए, मैं अपनी मां से मिलकर रहूंगा और उनको बोलूंगा मुझे साथ ले जाए...."

यही सब सोचता हुआ वो भागता हुआ घर पहुंचा और आज तो वो कुछ जायदा ही खुश था आज उसे लगा कि, वो अपनी मां से मिल पाएगा. इस खुशी में फूला नहीं समा रहा था. आज घर पहुंच कर जल्दी से काम में लग गया. ये सब देख नई मां भी हैरान थी लेकिन उन्हें क्या, उन्हें तो अपने काम से मतलब था. एक पलंग से उठकर देखा और सोचा,

"है तो कुछ माजरा, लेकिन हमें का हमरा काम हो जाए. काहे हो रहा इससे क्या....

ये सोच लीला मुस्कुराते हुए वापिस लेट गयी, इधर काम में लगे गोपाल के दिमाग मे बस यही चल रहा था कि, कैसे मां घर से जाए और मैं अपनी मां से मिलूं....

इसी इंतजार में दिन गुजरने लगे, अब गोपाल समय से घर भी आने लगा था और खुश भी रहता. काम भी सब समय पर निपटा लिया करता था. इसके साथ अब वो दिन भी आया जब मां अपने मायके चली गयी थी. अब बस गोपाल को इंतजार था मौके का जब वो रात को निकलकर बरगद के नीचे जा सके. काफी कोशिशों के बाद भी गोपाल दो रातों से निकल ही नहीं पाया था, एक रात पिता जी जागे थे तो दूसरे रात रास्ते मे नन्दू काका ने देख लिया था.

आज की रात फिर गोपाल ने बरगद के पेड़ के नीचे जाने की योजना बनाई थी, आज उसने चादर ओढ़ कर जाने की योजना बनाई थी ताकि, कोई पहचाने नही.

रात होते ही पिता के साथ खाना खाकर गोपाल लानटेन धीमी कर पिता जी के पैर दबाने लग गया, यह सोचकर कि, वो जल्दी सो जाए तो निकल जाए.

गोपाल की इस हरकत पर पिता जी हँस पड़े और उसका हाथ पकड़ बिस्तर पर लिटा लिया और बेना डुलाने लगे और बोले,

"इसकी जरूरत न है हमरे लाल, जब बड़ा हुई जाए तब कर लेवे"

गर्मियों के दिन में लगी ठंडी हवा से बरगद के पेड़ के नीचे जाने की योजना बनाता गोपाल और उसके पिता दोनों ही सो गए. देर रात गोपाल की आंख पसीने से भींगे हुए गले से खुली तो, जागते ही उसने पिता जी की तरफ देखा, माथे पर पसीने की बूंदे और पसीने में गीली हो चुकी बनियान में वो उसकी तरफ पीठ करके सो रहे थे, जरा उचक कर उसने खिड़की से आसमान देखा तो मालूम हुआ रात तो अभी आधी हुई है, वो चुपके से उठा और अलमारी से चादर निकालने लगा. इतने में कुछ आहत हुई तो उसने मुड़कर देखा तो सब शांत था. गोपाल ने चादर से खुद को ढका और अपनी मां से मिलने बरगद के पेड़ के नीचे जाने के लिए दबे पांव घर से तो निकल

आया लेकिन आधी रात का सन्नाटा और घनघोर अंधेरी रात में डर के मारे उसके पांव बढ़ भी नहीं रहे थे, लेकिन मां से मिलने की इच्छा भी थी तो, हिम्मत करके गोपाल निकल लिया. दूर होते घर के साथ अंधेरा गहरा रहा था. वही पेड़ो से आती झिंगुरों की आवाज तेज हो रही थी... डर से कांपता और उत्साह से भरा गोपाल डर को पार कर बरगद के पेड़ के नीचे पहुंच गया.

और उसने धीमे से अपनी मां को पुकारा , "मां...."

अंधेरे में उसे इधर-उधर कुछ नहीं दिखा... उसने दुबारा पुकारा, मां.... फिर उसे कुछ न दिखा. ऐसा उसने कई बार किया लेकिन कोई सामने नहीं आया. इस बात पर दुखी होकर सर लटकाकर गोपाल अपने घर की तरफ मुड़ा तो, किसी ने उसकी चादर पकड़ ली. उसने अपनी तरफ खींचने की कोशिश की लेकिन वो नहीं आई, तभी उसे राधा की दीदी की बात याद आई. बरगद के पेड़ पर आत्माओं का वास होता है. ये याद कर घबराया गोपाल जोर से चीखा,

बापूपूपूपू.....बचाव ....!

इतना कह वो चादर वही बरगद के नीचे छोड़कर भागा....

दूसरी सुबह वहां से गुजर रहे एक शख्स ने नई चादर को पड़े देखा, तो उठाने का सोचा और जब उठाई तो देखा जड़ की पैनी शाखा में उसका एक कोना फंसा था. उसने चादर का वो कोना निकाला. फिर चादर को झाड़कर कांधे पर डाला और कोई पुराना गाना गुनगुनाता हुआ आगे बढ़ गया....

मुझसे डरो मत, मैं डरावना दिखता हूँ लेकिन असल में हूँ नहीं. तुमने क्या कभी मुझे ध्यान से देखा है? मै तुम्हारे दादा से भी पुराना हूँ, जिस घर में तुम रहते हो, वहाँ पर कभी पहले मेरा घर हुआ करता था लेकिन मैंने तुम्हारे लिए वो जगह छोड़ दी,

मेरे एक सवाल का जवाब दे सकते हो क्या? तुम मुझसे क्यों डरते हो? अपने घर के आँगन में मुझे क्यों नहीं लगाते... अगर तुम मुझे वहाँ रहने की

जगह देते तो मैं तुम्हें और तुम्हारे परिवार को धूप, बारिश और हर एक आपदा से बचा लेता. लेकिन चलो कोई नहीं, तुम मुझे कभी भूलना मत.

क्या तुम मेरी कहानी सुनोगे? मेरे जन्म के बारे में तो मुझे भी नहीं पता लेकिन मेरे नाम कई सारे हैं. भारत में मुझे कुछ लोग बरगद का पेड़, कुछ मुझे वट वृक्ष बुलाते हैं. विज्ञान की भाषा में भी मेरा कई नाम हैं. मैं खुद उस नाम को नहीं बुला पाता हूँ क्योंकि वो मुझे बहुत कठिन लगता है. मुझे खुद समझ नहीं आता है, मेरा यह नाम किसने रख दिया जिसे मैं खुद नहीं बोल पाता हूँ. विज्ञान के छात्र मुझे ***Ficus benghalensis*** *ये बुलाते हैं. अब बताइए भला ऐसा भी कोई नाम होता है क्या... अब तो मुझे समझ मे भी नहीं आता है मैं अपनी इस दुविधा को लेकर जाऊँ किसके पास. और ये भी इसीलिए क्योंकि ज्यादातर लोग मुझे पसंद ही नहीं करते हैं.* अक्सर मेरा घर लोगों के घर के अंदर नहीं बल्कि उनके घर के बाहर ही होता है.

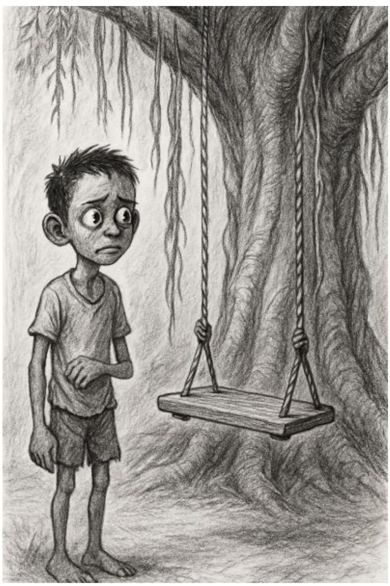

मुझे कभी कदार ये नहीं समझ मे आता है कि मेरा जन्म हुया या मेरी खोज. अक्सर लोग भी इसी चीज को लेकर अपनी बातों में उलझ जाते हैं. मेरी ही छाँव में खड़े लोग जब मेरी बात करते हैं तब मुझे बड़ा अच्छा लगता है.

मेरी खोज की कुछ कहानियाँ मैं जानता हूँ... तो पढिए जरूर मेरी खोज की कहानी मेरी ही जुबानी.

अगर समझना चाहे तो हम इसे बरगद के पेड़ का एक संदर्भ भी मान सकते हैं. बरगद देश का राष्ट्रीय पेड़ है. भारत का संविधान जब बन रहा था तब नौकरशाहों ने बरगद को देश का राष्ट्रीय पेड़ बनाया. अच्छा इसका भी कारण है, बरगद को कल्पवृक्ष माना जाता है- मतलब जो चीज़ आप इस पेड़ से मांगे वो पूरी आपको मिल जाती है. भारत के लिए यह पेड़ यूनिटी का एक सिम्बल है जो हर एक समय हमारे देश को एक साथ जोड़ने की कोशिश करता है.

आम जनमानस बरगद के जटिल स्वभाव से हमेशा से परिचित हैं. अपने आँगन में बरगद कोई नहीं लगाना चाहता है. इसका कारण कुछ और नहीं बल्कि इसके बढ़ने की आदत है, इसे जहां जगह मिले ये वहाँ तक पहुच जाता है, बिना पूछे, बिना बताए यह किसी के भी घर में दीवार तोड़ कर घुस जाता है.

हिंदुओं के लिए बरगद का महत्व

पेड़ों को परेशान मत करो, इन्हे काटो मत, इन्हें उखाड़ो मत. ये इंसान, जानवर और प्रकृति में जीवित हर एक इंसान की सुरक्षा करता है—ऋग वेद

हिन्दू धर्म मे ऋग वेद का बहुत महत्व है. प्राचीन भारतीय स्तुतियों का संग्रह और हिन्दू धर्म के पवित्र ग्रंथों से एक है ऋग वेद. हिन्दू धर्म, जिसका उदय भारत से हुआ, उसके दुनिया में करीब 1.2 बिलियन फॉलोवर्स हैं. इस धर्म ने हमेशा पेड़ों के प्रति सम्मिलित सद्भाव रखा है जिससे कोई भी पेड़ इस धर्म के लिए संरक्षित है और पूजा के पात्र है.

हिन्दू पुराण में जैसे एक इंसान के जन्म से मृत्य तक का सफर होता है, वैसे ही वेदों में पेड़ों के लिए भी माना जाता है. हमेशा से पेड़ों में भी एक जीवित आत्मा का वास है. हिन्दू धर्म की सबसे खास उपलब्धि यही है कि इस धर्म मे पेड़ों के अंदर देवी-देवताओं का वास माना जाता है. यही कारण है कि लोग पीड़ों की पूजा करते हैं.

बरगद के पेड़ में भी देवी-देवताओं का वास होता है. हिन्दू धर्म में बरगद का पेड़ भगवान विष्णु का एक अवतार है. विष्णु जैसे यह पेड़ कभी मरता नहीं है, इसे कोई मार नहीं सकता है और सबसे खास चीज़, इसके साथ चाहे कैसा भी बर्ताव हो, यह हमेशा स्टैबल रहेगा.

कई बार वह औरतें जो चाहती हैं कि उन्हें बच्चा हो, वो बरगद के पेड़ की पूजा करती हैं, वही कुछ औरतें अपने पति और परिवार की सलामती के लिए बरगद के पेड़ की पूजा करती रहती हैं.

सिर्फ हिन्दू धर्म में ही नहीं बल्कि बुद्धिज़्म में भी बरगद के पेड़ को विशेष दर्जा प्राप्त है. माना जाता है कि जिस पेड़ के निचे बुद्ध भगवान ने अपने अपार ज्ञान की प्राप्ति की थी, वो कोई नहीं बरगद का पेड़ था.

इतिहासकारों ने बरगद के पेड़ को बहुत जगह इस्तेमाल किया है. ऐसे में जब-जब हम बरगद के पेड़ के बारे में सोचते हैं तब हमें सिर्फ एक ऐसा विशाल चित्र बनता है जिसकी कल्पना डरावनी भी होती है और बहुत सुकून भरी भी.

यह हम सबकी जिम्मेदारी है कि अपनी ज़िंदगी में आगे बढ़ते-बढ़ते हम अपने जड़ों को और उसकी एहमीयत को न भुला दें. बरगद़ के पुराने

शाखाओं ने हवा में सुनाई देने वाली कई कहानियों को संजीवनी शक्ति के साथ अपनी शाखाओं से सुनाया. उनके प्राचीन गुप्त जीवन, उनकी महानता और सादगी सब एक अद्वितीय रूप से बरगद़ की प्रकृति में प्रतिष्ठित थी. वे समय के साथ बदले, परंतु उनकी विशालकाय, महानता और धैर्य में कभी कमी नहीं आई. आज भी, बरगद़ अपने सच्चे स्वभाव में अकेले खड़े हैं, विश्व के हर कोने में अपनी समृद्धि और नेतृत्व के साथ.

बरगद़ के एक विशालकाय पेड़ की कहानी अंततः एक सुनहरे पंक्तियों में समाप्त होती है, जो उसके अद्वितीय धरोहर को सतत समर्थन और सम्मान के साथ बढ़ाती है. बरगद़ का जीवन एक अनमोल उपहार है, जो हमें संयम, धैर्य, और समर्थन की महत्वपूर्णता को सिखाता है. इसका अंत बरगद़ की महिमा और शक्ति को समझने का एक आदर्श प्रस्तुत करता है, जो हमें प्राकृतिक संबंध की महत्वपूर्णता को समझाता है. बरगद़ एक विश्वास का प्रतीक है, जो हमें हमारे जीवन में सदा आत्मविश्वास और समर्थन का साथ देता है.

इस प्रकार, बरगद़ की कहानी अपने अंत में एक संदेश के रूप में हमें सिखाती है कि जीवन की हर दिशा में समर्थन और समय की मांग को समझना और स्वीकार करना महत्वपूर्ण है. बरगद़ हमें समय के साथ बदलने की कला को सिखाता है, लेकिन उसकी महानता और समर्थन का अटूट संबंध हमें हमेशा एक अच्छे संदेश के साथ रखता है. इस प्रकार, बरगद़ की कहानी अपने समय के साथ बढ़ती है, लेकिन उसका संदेश सदा बना रहता है. बरगद़ का जीवन हमें यह सिखाता है कि हमें जीवन की हर परिस्थिति में स्थिरता और समर्थन का साथ देना चाहिए, क्योंकि समय के साथ बदलते हुए भी हमारा धैर्य और समर्थन हमें सफलता की ओर ले जाता है.

बरगद के पेड़ सबसे पुरानी वृक्ष प्रजातियों में से एक हैं और अपनी लंबी उम्र के कारण, अक्सर अच्छी और बुरी, दोनों तरह की कहानियों का विषय रहे हैं. ये सदियों से मौजूद हैं. बरगद की कहानी के लिए मैं आपको थोड़ी देर के लिए कोलकाता लेकर चलना चाहता हूँ. बरगद और कोलकाता के लिए गाछ बेहद महत्वपूर्ण है. कोलकाता में बोटैनिकल गार्डन है, उस गार्डन में विशाल सा बरगद का पेड़ है. करीब 250 वर्ष पुराना यह पेड़

4.67 एकड़ में फैला हुआ है. कोलकाता जाने के साथ ही यहाँ पर जाना लोगों के लिए अब एक साईटसीइंग बन गया है.

आचार्य जगदीश चंद्र बोस बोटेनिक गार्डन में यह पेड़ सबसे उम्रदराज़ है, लेकिन यह पेड़ सबके गार्डियन के रूप में पिछले 250 सालों से वहीं पर खड़ा है. अब इस पेड़ की कहानी में सबसे ख़ास बात क्या हो सकती है ? कोई पेड़ बिना अपने तने के क्या कभी खड़ा हो सकता है? अगर आपके मन में इसका जवाब 'नहीं' है तो यह बरगद का पेड़ आपकी सोच को बदल देगा. कई साल पहले करीब 2 चक्रवाती तूफ़ान झेलने के बाद इसे एक बीमारी हो गई. साल 1925 में उस बीमारी से बाकी पेड़ को बचाने के लिए इसका मूल जड़ हटा दिया गया था. लेकिन इसके बावजूद भी इस पेड़ ने अपनी सांस खोई नहीं, इस पेड़ का यह जूनून था कि इसे और जीना है जिसकी वजह से इस पेड़ में 3772 एरियल रुट हैं. इस बोटैनिकल गार्डन के पास दुनिया भर से आए कई सारे पेड़ हैं, लेकिन यह एक बरगद का पेड़ आज भी उसी तरह से ज़िंदा खड़ा है, सबका दादा बनकर.

यह महान बरगद जिस गार्डन में है, उसका भी एक अपना अलग इतिहास है. यह गार्डन को हमेशा आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान नहीं कहा जाता था. 2009 में इस उद्यान का नाम बदलकर प्राकृतिक वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बोस के सम्मान में रखा गया. 1787 में, ईस्ट इंडिया कंपनी के कर्नल रॉबर्ट कीड ने इस उद्यान की स्थापना की

थी, जिसका एकमात्र उद्देश्य मसालों, चाय और सागौन जैसी व्यावसायिक रूप से व्यवहार्य वनस्पति प्रजातियों को उगाना था. उन्हें क्या पता था कि सदियों बाद, यह स्ट्रेंगलर अंजीर प्रजाति दुनिया का सबसे बड़ा बरगद का पेड़ बन जाएगी.

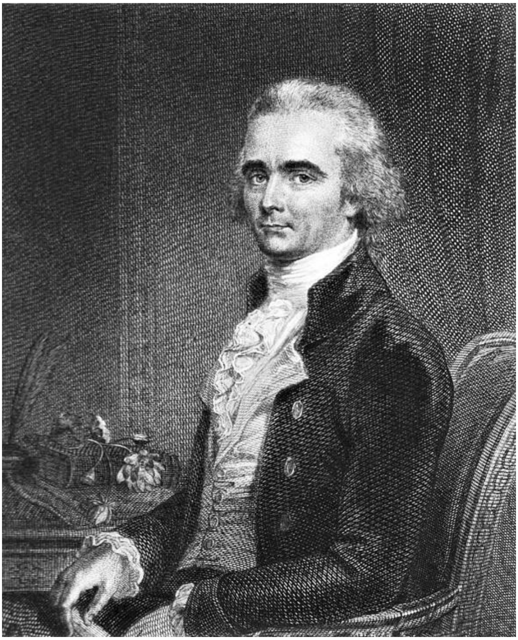

अब कर्नल साहब की फूटी किस्मत, उनके पीछे पड़ गया यह बरगद का पेड़. एक ऐसा पेड़ जिसने खुद को अपने आप में जंगल बना लिया. गाछ की कहानियों में कोलकाता एक अनमोल जगह है जिसकी हर परत में एक कहानी है या कोई किस्सा.

इस अध्याय का निष्कर्ष इस बात को समेटता है कि बरगद का पेड़ केवल एक वृक्ष नहीं, बल्कि संस्कृति, आस्था, इतिहास और जीवन के गहरे मूल्यों का प्रतीक है. लेखक ने एक मासूम बालक गोपाल की भावनात्मक कहानी से शुरुआत करते हुए, बरगद से जुड़ी मान्यताओं, लोककथाओं और व्यक्तिगत अनुभवों को जोड़कर यह दिखाया है कि यह पेड़ भारतीय जीवन में कितनी गहरी जड़ें जमाए हुए है.

बरगद गाँव के बच्चों के खेल का साथी है, तो वहीं लोकमान्यताओं में रहस्यमयी और अलौकिक शक्तियों का केंद्र भी. इसके नीचे भूत-प्रेत की कहानियाँ सुनाई जाती हैं, तो वहीं कुछ लोगों के लिए यह अपने बिछड़े प्रियजनों से मिलने का माध्यम बन जाता है. गोपाल की अपनी मां से मिलने की मासूम चाह, उसके डर और जिज्ञासा से टकराती है, और यह पूरी कथा बरगद की छाया में पनपती है.

बरगद केवल लोककथाओं तक सीमित नहीं है—यह भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता में गहराई से रचा-बसा है. हिंदू धर्म में इसे भगवान विष्णु का अवतार माना गया है, जो अमरता और स्थिरता का प्रतीक है. यह स्त्रियों की कामना, परिवार की सलामती और समृद्धि के लिए पूजनीय है. बौद्ध धर्म में भी इसकी विशेष जगह है—गौतम बुद्ध ने इसी की छाया में ज्ञान प्राप्त किया था. ऋग्वेद से लेकर पुराणों तक, बरगद को जीवनदाता और रक्षक के रूप में वर्णित किया गया है.

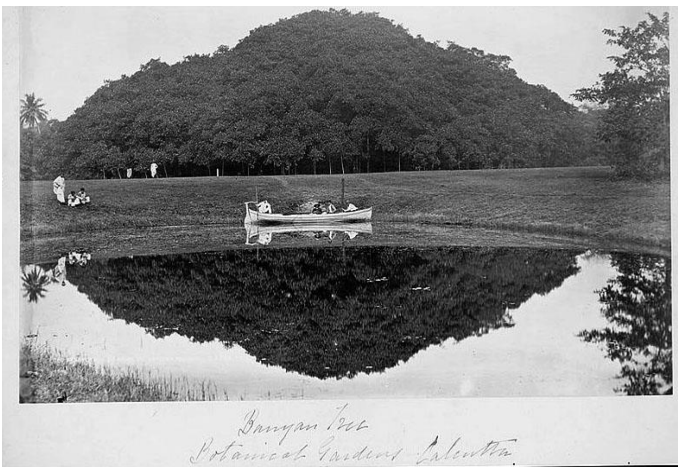

पर्यावरणीय दृष्टि से बरगद एक संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र है—इसकी विशाल छाया अनगिनत जीव-जंतुओं का घर है, इसकी जटाएं मिट्टी को थामे रखती हैं और यह लगातार ऑक्सीजन और जीवन प्रदान करता है. इसकी सबसे खास पहचान इसकी हज़ारों हवाई जड़ें हैं, जो इसे एक वृक्ष होते हुए भी वन जैसा रूप देती हैं. कोलकाता के आचार्य जगदीश चंद्र

बोस बोटैनिकल गार्डन का 250 वर्ष पुराना बरगद इस बात का जीवंत उदाहरण है—जो बिना अपने मुख्य तने के भी जीवित है और 4.67 एकड़ में फैला हुआ है. यह केवल एक पेड़ नहीं, बल्कि अपने आप में एक इतिहास, एक स्मारक और एक जीवंत पाठशाला है.

बरगद की कहानी हमें यह सिखाती है कि जीवन में स्थिरता और धैर्य कितने महत्वपूर्ण हैं. चाहे समय कितना भी बदल जाए, परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन हों, अपनी जड़ों से जुड़े रहना और अपने आस-पास के जीवन को सहारा देना ही असली महानता है. बरगद हमें यह भी याद दिलाता है कि संरक्षण केवल भौतिक नहीं, बल्कि भावनात्मक और आध्यात्मिक भी होना चाहिए—हमारी संस्कृति, हमारी स्मृतियों और हमारे पर्यावरण का.

अंततः, बरगद का पेड़ एक विश्वास, सुरक्षा और समर्थन का जीवंत प्रतीक है. यह हमें सिखाता है कि जैसे इसकी शाखाएं फैलकर सबको आश्रय देती हैं, वैसे ही हमें भी अपने जीवन में दूसरों को सहारा देना चाहिए. इसके विशाल आकार और दीर्घायु के पीछे का संदेश स्पष्ट है—धैर्य, संयम, समर्थन और निरंतरता ही सच्ची शक्ति है. समय बदल सकता है, लेकिन इन मूल्यों की प्रासंगिकता कभी नहीं बदलती.

इस प्रकार, बरगद की कहानी अपने साथ यह संदेश लेकर समाप्त होती है कि हमें अपनी जड़ों को नहीं भूलना चाहिए, समय के साथ बदलाव को अपनाना चाहिए और अपने चारों ओर जीवन को संजोना चाहिए. बरगद न केवल भारत का राष्ट्रीय वृक्ष है, बल्कि हमारे अस्तित्व और विरासत का स्थायी प्रहरी है.

चिलकती चिलबिल

यह कहानी एक लड़के की है — एक ऐसे लड़के की जो दुनिया को खेल के ज़रिये समझना चाहता था. उसका मन हमेशा फुटबॉल, कबड्डी या दौड़ में ही लगता था. लेकिन एक साल ऐसा आया, जिसने न सिर्फ़ उसके खेलने का तरीका बदला, बल्कि सोचने का ढंग भी पूरी तरह बदल दिया.

यह बात पिछले साल की है, जब वह अपनी पुरानी कक्षा से एक नई कक्षा में गया था. नए कक्षा के साथ ही उसकी रुचियाँ भी बदलने लगीं. उस साल से उसने फुटबॉल छोड़ बास्केटबॉल खेलना शुरू किया. बास्केटबॉल में उछलना-कूदना उसे बहुत अच्छा लगने लगा. जैसे ही कुछ ही दिन बीते, उसे लगा कि वह इस खेल में भी अव्वल बन सकता है. इसलिए वह हर दिन सबसे पहले कोर्ट पहुँचने का प्रयास करने लगा.

पहला संकेत

एक दिन वह सुबह-सुबह बास्केटबॉल कोर्ट पर पहुँच गया. लेकिन कोर्ट पर खेल शुरू होने की बजाय सफ़ाई हो रही थी. कुछ लोग झाड़ू से ज़मीन साफ़ कर रहे थे. बास्केटबॉल के मैदान पर छोटे-छोटे बीज बिखरे हुए थे, जो किसी प्राकृतिक खोल में बंधे हुए थे. इन बीजों के चारों ओर थोड़ी सी चिकनाई और मिट्टी की परत जमी हुई थी. कोर्ट के सामने खड़ा एक विशाल पेड़ उन बीजों का स्त्रोत था.

वह पेड़, जो कोर्ट से महज़ तीन-चार फीट की दूरी पर था, मानो खुद पर गर्व कर रहा था — "देखो, मेरी वजह से अब इंसान मेहनत कर रहे हैं." यह दृश्य उसके मन में बस गया.

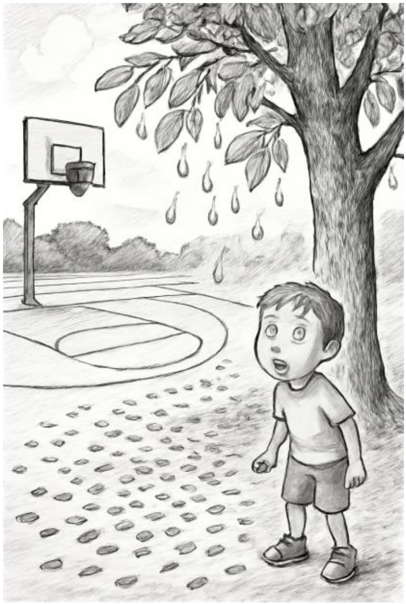

हर दिन की दोहराई जाती कहानी

अगले कई दिनों तक जब भी वह खेलने के लिए पहुंचता, सफ़ाई पहले से चल रही होती. हर बार उसे कुछ देर इंतज़ार करना पड़ता, क्योंकि मैदान पर वही बीज बिखरे होते थे. पहले उसे यह सब बहुत परेशान करता था, लेकिन कुछ हफ़्तों बाद वह इन बीजों और उस पेड़ को लेकर जिज्ञासु हो गया.

एक दिन उसने मैदान की सफ़ाई कर रहे एक बुजुर्ग से पूछ ही लिया — "बाबा, ये कौन सा पेड़ है जिसकी वजह से हर दिन कोर्ट गंदा हो जाता है?"

बुजुर्ग मुस्कराए और बोले — "बेटा, ये है *चिलबिल का पेड़.* इसके फल जब पकते हैं तो ज़मीन पर गिरते जाते हैं. जानवर, परिंदे और हवाएँ इनका हिस्सा ले जाती हैं, लेकिन जो बच जाते हैं, वो मैदान को गंदा कर देते हैं."

पेड़ के पीछे की अनकही कहानी

एक नया लड़का और उसके सामने एक नई कहानी. अब वह लड़का जानना चाहता था कि ये चिलबिल नाम का पेड़ आख़िर है कौन? क्यों इसके फल हर दिन गिरते हैं, और क्यों कोई इसे हटाता नहीं?

धीरे-धीरे उसे एहसास हुआ कि पेड़ केवल छांव देने वाले जीव नहीं होते, वे इतिहास होते हैं. दीवारें बातें सुनती हैं, लेकिन पेड़ कहानियाँ कहते हैं — बस सुनने वाला चाहिए.

चिलबिल का पेड़ बड़ा विशाल था. मोटा, टेढ़ा-मेढ़ा, जैसे अपने अंदर सौ साल पुरानी गहराइयों को समेटे खड़ा हो. उसकी टहनियाँ ज़मीन की ओर झुकी हुई थीं, मानो बुज़ुर्गों की झुकती कमर. कोई उसे काटने या हटाने की बात नहीं करता, शायद इसलिए कि वह कभी किसी के रास्ते में नहीं आया.

अब लड़के की नज़र रोज़ उसी पेड़ पर पड़ती. वह देखता कि कैसे परिंदे उसकी शाखों में खेलते, कैसे गिलहरियाँ उसकी टहनियों पर दौड़तीं, और कैसे बच्चे उसके नीचे बैठकर बातें करते.

चिलबिल: एक रहस्य

चिलबिल के पेड़ को लेकर उसके मन में उत्सुकता बढ़ने लगी. उसने देखा कि न तो स्कूल की किसी किताब में चिलबिल की चर्चा थी, न ही किसी शिक्षक ने उसके बारे में कुछ बताया. यह पेड़ न तो आम की तरह लोकप्रिय था, न नीम की तरह उपयोगी माना जाता. फिर भी यह खड़ा था, सालों से, बिना शिकायत, बिना कोई पहचान चाहे.

उसने गाँव के बुजुर्गों से पूछा, "ये चिलबिल पेड़ कहाँ से आया? कोई कहानी है क्या इसके पीछे?"

एक बूढ़े बाबा ने उसे बताया — "बहुत साल पहले जब ये स्कूल बना भी नहीं था, तब यह इलाका वीरान हुआ करता था. चिलबिल का ये पेड़ उस समय से खड़ा है. इसके नीचे एक चरवाहा लड़का दोपहर में अपने जानवरों को बैठाया करता था. उस लड़के ने ही पहली बार देखा था कि चिलबिल की पत्तियाँ मवेशियों को बीमारी से बचाती हैं. इसके फल सूखकर अपने आप मिट्टी में मिल जाते हैं और पेड़ फिर अपने आप उग आता है."

पेड़, जो खुद दंतकथा बन गया

अब वह लड़का जान गया कि यह पेड़ आम नहीं है. इसके फल भले ही खेल के मैदान को कुछ देर के लिए गंदा कर दें, लेकिन ये फल जीवन देने वाले हैं. उसकी टहनियाँ दातून की तरह इस्तेमाल होती हैं, जो दांतों को मज़बूत करती हैं. इसकी पत्तियाँ चारा बनती हैं, और इसकी छाल दवा.

उसने यह भी जाना कि जंगलों में रहने वाले आदिवासी चिलबिल को **"जंगल का डॉक्टर"** कहते हैं. उसके मन में अब इस पेड़ के लिए आदर और सम्मान पैदा हो गया था.

अब वह हर सुबह जब कोर्ट आता, तो पहले पेड़ के नीचे दो मिनट बैठता. कभी उसे छूता, कभी उसकी टहनियों को देखता.

उसके मन में यह बात घर कर गई थी —

"जो पेड़ हर दिन अपने फल गिराकर परेशान कर रहा था, वही पेड़ हर दिन उसे कुछ नया सिखा रहा था."

अध्याय की शुरुआत

और यहीं से शुरू होती है **चिलबिल के पेड़ की असल कहानी**. एक ऐसा पेड़ जो न तो ज़्यादा सुंदर है, न ही ज़्यादा मशहूर. फिर भी वह ज़मीन से जुड़ा है, जैसे कोई बूढ़ा दादा, जो अपने अनुभवों से नई पीढ़ी को सिखाता है, बिना कुछ कहे.

अप्रैल के आसपास, जब इसके कागज़ जैसे पतले पंखों वाले बीज इसकी नंगी शाखाओं से नीचे की ओर तैरने लगते हैं, तो इस साधारण से वृक्ष भारतीय एल्म (Indian Elm) को नज़रअंदाज़ करना मुश्किल होता है. यह पेड़, जिसे वैज्ञानिक शब्दावली में 'जंगल कॉर्क ट्री' या 'होलोप्टेलिया इंटीग्रिफोलिया' भी कहा जाता है, इस देश का मूल निवासी है और स्थानीय भाषाओं में इसे चिलबिल, पापड़ी, कंजू और कई अन्य नामों से पुकारा जाता है.

चिलबिल: पेड़ों की अनकही कथा का नायक

भारत की धरती पर जितनी कहानियाँ मनुष्यों की हैं, उतनी ही पेड़ों की भी हैं. कुछ वृक्ष ऐसे हैं जो लोककथाओं में बार-बार लौटते हैं — जैसे पीपल, बरगद, नीम, आम या अशोक. इन पेड़ों की छाया में न सिर्फ़ शरीर को ठंडक मिलती है, बल्कि आत्मा को भी सुकून मिलता है. इनकी कथाएँ हमारे धार्मिक ग्रंथों, लोकगीतों, कविता और कहावतों में सांस लेती हैं. मगर कुछ वृक्ष ऐसे भी होते हैं जो चुपचाप खड़े रहते हैं — बिना किसी विशेष मान्यता, बिना किसी अलंकार या प्रसिद्धि के — फिर भी उनके भीतर भी एक जीवन, एक संघर्ष और एक कहानी होती है.

चिलबिल, या जिसे कुछ क्षेत्रों में *पीलू* और अंग्रेज़ी में *Indian Toothbrush Tree* कहा जाता है, उन्हीं गुमनाम लेकिन गहरे अर्थों वाले पेड़ों में से एक है. यह पेड़ ऐसा नहीं है जो पहली नज़र में आपको मोहित कर दे. न इसकी छांव नीम जैसी प्रसिद्ध है, न इसका फल आम की तरह स्वादिष्ट, न ही इसका नाम ही किसी धार्मिक कथा से जुड़ा है. फिर भी, यह पेड़ अपने आप में एक जीवंत कथा है — धैर्य की, अनदेखे श्रम की, और उस मौन उपस्थिति की जो सब कुछ देती है, लेकिन कुछ नहीं माँगती.

चिलबिल का ज़िक्र भारतीय पेड़ों की चर्चाओं में शायद ही कभी होता है. यह नाम सुनते ही ज़्यादातर लोग ठिठक जाते हैं, कुछ भ्रम में, कुछ जिज्ञासा में. और यही इस पेड़ की सबसे अनोखी बात है — यह हमारे आसपास खड़ा होता है, लेकिन हम उसे देख नहीं पाते. यह वहां होता है जहाँ ज़िंदगी कठिन होती है — सूखे खेतों में, बंजर ज़मीन पर, गर्म हवाओं के बीच, पशुओं के चरने के रास्तों में, या गाँव के उस छोर पर जहाँ कोई अक्सर जाता नहीं.

इस पेड़ की खासियत इसकी सादगी है. चिलबिल न तो बहुत घना होता है, न ही बहुत फैलाव लिए होता है, लेकिन इसकी जड़ें गहरी होती हैं, जो ज़मीन की गहराइयों से नमी खींचकर जीवन को बनाए रखती हैं. इसकी ऊंचाई अक्सर 20 से 25 मीटर तक पहुँचती है. इसकी पत्तियाँ मोटी और अंडाकार होती हैं, जिनमें सूखे के मौसम में भी हरियाली बनी रहती है. इसकी टहनियाँ झुकी हुई होती हैं, जैसे किसी बुज़ुर्ग का झुकता हुआ कंधा — अनुभव से भरा, थका हुआ लेकिन अब भी समर्पित.

चिलबिल का फल छोटा होता है — बेर जैसे — और जब ये पकता है, तो जमीन पर गिरता है और एक प्राकृतिक खाद की तरह मिट्टी में मिल जाता है. बास्केटबॉल कोर्ट के पास खड़ा एक चिलबिल पेड़ शायद यही कहानी हर दिन दोहराता है — फल गिरते हैं, लोग झाड़ू लगाते हैं, और पेड़ चुपचाप खड़ा रहता है, मानो खुद पर मुस्कुरा रहा हो.

भारत में यह पेड़ मुख्यतः **उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात और राजस्थान** में पाया जाता है. यह **सदाबहार** वृक्ष है, जो साल भर अपनी पत्तियाँ संजोकर रखता है. यह अपने आप में **एक प्रतीक है वीराने और**

संघर्ष का — जहाँ हर चीज़ नंगेपन में होती है, कुछ भी छिपा हुआ नहीं होता. यह पेड़ भी वैसा ही है — जो दिखता है, वही है. कोई बनावटी छाया नहीं, कोई झूठा श्रृंगार नहीं.

इस पेड़ का मूल निवास स्थान भारत और अफ्रीका माना जाता है, और इसकी जड़ें भारतीय लोकसंस्कृति में कहीं गहराई से जुड़ी हैं, भले ही इसका उल्लेख कम मिलता हो. आदिवासी समाज में इसे **दातून** के रूप में सदियों से इस्तेमाल किया जाता रहा है. इसकी टहनियों में प्राकृतिक जीवाणुनाशक गुण होते हैं जो दांतों और मसूड़ों को स्वस्थ रखते हैं. आज भी देश के कई हिस्सों में लोग इसके टुकड़े तोड़कर दातून के रूप में उपयोग करते हैं — बिना किसी ब्रांड, पेस्ट या विज्ञापन के.

चिलबिल न केवल मनुष्य के लिए, बल्कि पशुओं के लिए भी एक वरदान है. इसकी पत्तियाँ चारे के रूप में दी जाती हैं और सूखे के समय यह कई पशुओं का सहारा बनता है. इसके बीजों से तेल निकाला जा सकता है और इसकी छाल में औषधीय गुण भी होते हैं.

फिर भी, यह पेड़ **शब्दों में कम और मौन में अधिक जीता है**. और शायद इसीलिए इसके बारे में कम लिखा गया है. पर अब समय आ गया है कि इस मौन को सुना जाए — उन पेड़ों की कहानियों को दर्ज किया जाए जो हाशिये पर रहकर भी हमारी ज़िंदगियों में गहराई से मौजूद हैं.

यह अध्याय इसलिए लिखा जा रहा है ताकि हम रहें या न रहें, लेकिन इन पेड़ों की कहानियाँ हमेशा ज़िंदा रहें. **क्योंकि पेड़ केवल छांव या फल नहीं देते — वे जीने का तरीका सिखाते हैं.** वे सिखाते हैं कि कैसे कठिन परिस्थितियों में भी खड़ा रहा जा सकता है, कैसे बिना शोर मचाए सेवा की जा सकती है, और कैसे अपनी सादगी में भी संपूर्णता हो सकती है.

चिलबिल, इस अध्याय का नायक है. एक गुमनाम वृक्ष, जो अपनी पहचान की तलाश नहीं करता, लेकिन जिसकी उपस्थिति हमें बहुत कुछ सिखा सकती है — यदि हम उसे सुनना चाहें.

चिलबिल की कहानी: एक खामोश नायक की गाथा

आपने चिलबिल की कहानी को एक नायक के रूप में ज़रूर देखा होगा, लेकिन इस पेड़ की कहानी सिर्फ इसकी विशेषताओं से ही नहीं समाप्त होती है. यह पेड़ सदा-बहार भी है और इसके कई ऐसे गुण भी हैं जो इसे सबसे अलग बनाते हैं. बहुतायत में पाए जाने वाले यह पेड़ हमेशा मौन खड़े रहते हैं. इनकी भी कहानी में वही मौन है, वही शांति है, वही सुकून है जिसे आजकल लोग खोजने के लिए पहाड़ों की ओर निकल जाते हैं.

यह पेड़ आपके घर के उस बुजुर्ग दादा जैसा है जो कभी अपनी तकलीफों को नहीं बयां करता, लेकिन जो भी उसके पास जाता है, उसकी पीड़ा को वह चुपचाप साझा कर लेता है. वह बिना कुछ कहे, बहुत कुछ कह देता है — जैसे उसकी छांव में बैठने से कोई सुकून मिलता है, उसके पत्तों की सरसराहट में जैसे कोई पुरानी कहानी गूंज रही हो.

चिलबिल की कहानी भी कुछ ऐसी ही है — जिसे सभी जानते तो हैं, लेकिन जानने की कोशिश शायद ही कोई करता है. यह एक पेड़ नहीं, एक भाव है, एक अनुभूति है. जितनी कठोर इसकी लकड़ी है, उतना ही कोमल और संवेदनशील है इसका हृदय.

चिलबिल को आपने अब तक केवल एक कथा के रूप में समझा होगा, लेकिन अब हम आपको इसके वास्तविक नाम, पारिस्थितिक महत्व, औषधीय उपयोग और इससे जुड़ी कुछ अनकही कहानियों से रूबरू कराते हैं.

वैज्ञानिक नाम और परिचय

इस पेड़ का असली वैज्ञानिक नाम **Holoptelea integrifolia** है. यह "इंडियन एल्म" और "जंगल कॉर्क ट्री" के नाम से भी जाना जाता है. यह पेड़ **उल्मासी (Ulmaceae)** कुल का सदस्य है और भारतीय उपमहाद्वीप, इंडो-चीन और म्यांमार जैसे क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से पाया जाता है. यह मुख्यतः मैदानी इलाकों में देखने को मिलता है, परंतु यह 1100 मीटर तक की ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में भी सहज रूप से उगता है.

चिलबिल एक मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष है, जो लगभग 18-20 मीटर तक ऊँचा हो सकता है. इसकी छाल मोटी, भूरी और कहीं-कहीं से कॉर्क जैसी होती है. पत्तियाँ सरल, अण्डाकार और किनारों से हल्के दंतीयुक्त होती हैं. वसंत ऋतु में इसके फूल छोटे, हरित और समूहों में खिलते हैं. इसके बीज पंखदार होते हैं, जो हवा के सहारे दूर-दूर तक फैल जाते हैं.

पेड़ जो खुद उग आता है

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि चिलबिल का पेड़ बिना लगाए भी उग सकता है. इसके बीज हवा के साथ उड़ते रहते हैं और जहाँ भी इन्हें अनुकूल वातावरण और नरम मिट्टी मिलती है, वहीं यह अंकुरित हो जाते हैं. कुछ जानकारों का कहना है कि यदि परिस्थितियाँ अनुकूल हों तो यह पेड़ मात्र दस दिनों में ही अंकुरित हो सकता है. यही कारण है कि यह कई

जगहों पर स्वतः उग आता है, खासकर गाँवों, खेतों के किनारे, सुनसान जगहों और पुराने भवनों के पास.

मालियों की चुपचाप श्रद्धा

इस पेड़ के बारे में लिखते समय एक डॉक्टर साहब से मेरी भेंट हुई. उन्होंने बताया कि उनके यहाँ एक बहुत पुराना माली काम करता था जो हर जगह चुपचाप चिलबिल का पेड़ लगाता रहता था. वह जहाँ भी थोड़ी सी भी खुली ज़मीन देखता, वहीं एक चिलबिल का बीज रोप देता. जब मैंने उनसे पूछा कि वह यही पेड़ क्यों लगाते हैं, तो उन्होंने कहा — "बाबूजी, यह पेड़ किसी को परेशान नहीं करता, और खुद-ब-खुद बड़े होकर लोगों को छांव देने लगता है."

ऐसे लोग अब बहुत कम बचे हैं जो बिना किसी प्रचार-प्रसार के, प्रकृति के सच्चे सेवक बनकर पेड़ों से रिश्ता जोड़े रहते हैं.

चिलबिल की विशेषताएँ

चिलबिल की सबसे प्रमुख विशेषता इसकी **अनुकूलन क्षमता** है. यह पेड़ सूखा और गर्मी दोनों झेलने में सक्षम है, इसलिए इसे अक्सर पारिस्थितिक वानिकी (Ecological Forestry) में उपयोग किया जाता है. यह उन क्षेत्रों में भी उग सकता है जहाँ जलवायु बहुत अनिश्चित होती है.

इसकी लकड़ी हल्की और मध्यम कठोर होती है, जिसका उपयोग घर के सस्ते फर्नीचर, दरवाजे, चौखट, और खटिया बनाने में होता है. गाँवों में ठंडी के मौसम में अलाव जलाने के लिए इसकी लकड़ी का ही सबसे अधिक उपयोग किया जाता है.

एक और रोचक तथ्य यह है कि पुराने समय में लोग इसके फल को सलाद की तरह खाया करते थे. इन फलों का प्रयोग वजन घटाने के लिए भी किया जाता था. आयुर्वेद में चिलबिल के विभिन्न भागों का उपयोग कई रोगों के उपचार में किया जाता है:

- इसकी छाल का उपयोग त्वचा रोगों और जोड़ों के दर्द में किया जाता है.

- इसके बीज और पत्तियों का उपयोग वायुविकार, अपच और रक्त शोधक के रूप में होता है.
- चिलबिल की छाल से बनी चाय मधुमेह नियंत्रण में सहायक मानी जाती है.

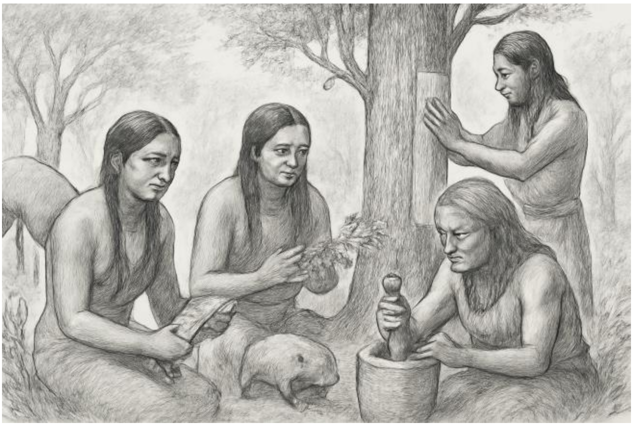

चुपचाप गुम होती पहचान

एक समय था जब गाँवों के हर गली-मोहल्ले में चिलबिल का पेड़ दिखाई देता था. लेकिन धीरे-धीरे लोगों ने इसे लगाना बंद कर दिया. एक धारणा बन गई कि इसके फल गिरने से बहुत गंदगी फैलती है. यह भी कहा गया कि इसके पत्ते जल्दी गिरते हैं और सफाई में कठिनाई होती है.

यह सच है कि इसके फल और पत्तियाँ गिरते हैं, लेकिन क्या किसी जीवनदायी चीज़ को केवल इसलिए नकार देना चाहिए? पेड़ तो गिरते हुए पत्तों में भी संदेश देते हैं कि छोड़ देना भी ज़रूरी होता है.

यह विडंबना ही है कि जिन पेड़ों ने हमें वर्षों तक छांव दी, उन पेड़ों को हमने शहरों के विकास के नाम पर मिटा दिया.

कविता की तरह पेड़

चिलबिल की छांव में बैठकर कई बार मेरे मन में यह भाव आता है कि यह पेड़ किसी कविता की तरह है — स्थिर, शांत, लेकिन भीतर से गूंजता

हुआ. यह पेड़ किसी को दोष नहीं देता, किसी से शिकायत नहीं करता. वह बस खड़ा रहता है — धरती से बंधा हुआ, लेकिन आकाश की ओर देखता हुआ.

जब कभी ज़िन्दगी के उतार-चढ़ाव परेशान करने लगते हैं, तो चिलबिल की यह पंक्तियाँ मन में गूंजने लगती हैं:

"हो के मायूस न यूँ शाम से ढलते रहिए,

ज़िन्दगी भोर है, सूरज से निकलते रहिए."

एक जीवन की तरह चिलबिल

चिलबिल सिर्फ एक पेड़ नहीं है, यह जीवन के दर्शन की तरह है. यह बताता है कि जीवन में स्थिरता कितनी महत्वपूर्ण है. यह पेड़ बिना किसी मांग के देता चला जाता है — हवा, छांव, लकड़ी, दवा, फल — और बदले में कुछ नहीं चाहता.

आज जब दुनिया सतही उपलब्धियों की ओर भाग रही है, तब हमें फिर से इस चिलबिल की ओर लौटने की आवश्यकता है,. इसे समझने की, इसकी तरह जीने की.

निष्कर्ष: चिलबिल — एक पेड़, एक संदेश

चिलबिल का पेड़ अपने मौन में जो बातें कह जाता है, शायद कोई किताब भी नहीं कह सकती. यह पेड़ हमें सिखाता है कि कैसे बिना बोले भी प्रभावशाली बना जा सकता है. इसकी छाया हमें बताती है कि सच्चा साथ वही होता है जो बिना कहे, हर परिस्थिति में हमारे साथ खड़ा रहता है.

चिलबिल के साथ बीता एक पल भी किसी साधना से कम नहीं. इसकी उपस्थिति में हम खुद से जुड़ते हैं, प्रकृति से जुड़ते हैं, और शायद उन भावनाओं से भी, जिन्हें हम भागती-दौड़ती ज़िन्दगी में कहीं खो चुके हैं.

तो अगली बार जब आप किसी पुराने चिलबिल के पेड़ को देखें, तो बस कुछ पल रुक जाइए. उसकी छांव में बैठिए. उसके तने को छूकर देखिए.

शायद वह कुछ कह रहा हो — अपने पुराने दिनों की कोई कहानी, कोई गुमनाम स्मृति, या सिर्फ एक मौन स्नेह.

चिलबिल — एक खामोश साक्षी, एक जीवंत आत्मा

एक मौन सा खड़ा यह पेड़ — चिलबिल — अपनी ही गवाही नहीं दे पा रहा है, शायद इसलिए कि उसे कभी ऐसा अवसर मिला ही नहीं जहाँ वह स्वयं को अभिव्यक्त कर सके. न कोई उसकी बात सुनना चाहता है, न कोई उसकी कहानी को जानने की कोशिश करता है. वह पेड़ जो वर्षों से हमारी धरती पर खड़ा है, हमारे जीवन का मौन साक्षी रहा है, वह आज भी उसी खामोशी के साथ अपने अस्तित्व को जी रहा है.

मेरे दृष्टिकोण से, चिलबिल वृक्ष प्रकृति के विशाल परिवार में एक मिसाल है — एक ऐसा उदाहरण, जिसे पहचानना और समझना हमारे जैसे तेज़ी से आगे बढ़ते समाज के लिए अत्यंत आवश्यक है. यह पेड़ धैर्य, सहनशीलता और निस्वार्थ सेवा का प्रतीक है. सदियों से यह अपनी जगह पर खड़ा सब कुछ देखता आ रहा है — समय के बदलते रंग, मौसमों की करवटें, मानव जीवन की व्यस्तता, समाज की संवेदनहीनता और प्रकृति के दोहन की अंतहीन कहानियाँ.

फिर भी, वह खामोश है. वह अपने भीतर सब कुछ समेटे हुए खड़ा है — सबके राज़ को राज़ बनाए रखते हुए. वह किसी से कुछ नहीं कहता, किसी को कुछ नहीं सुनाता, और सबसे ज़्यादा यह कि वह किसी को कोई नुक़सान नहीं पहुँचाता. चिलबिल का अस्तित्व जैसे कह रहा हो — *"मैं हूँ, पर मैं तुम्हारे जीवन में हस्तक्षेप नहीं करूँगा; मैं केवल तुम्हारे लिए खड़ा रहूँगा, जब तक तुम मुझे चाहो."*

बेदाग छवि और अनूठी गरिमा

चिलबिल की सबसे बड़ी विशेषता इसकी **बेदाग छवि** है. यह पेड़ कभी किसी विवाद में नहीं रहा, न ही लोगों की शिकायत का कारण बना. इसके पत्ते गिरते हैं, फल भी — लेकिन वह गंदगी नहीं फैलाते, बल्कि मिट्टी को उर्वर बनाते हैं, जीवन चक्र को आगे बढ़ाते हैं.

इसकी छाल, पत्तियाँ, फल और बीज सभी औषधीय दृष्टि से उपयोगी हैं. परंतु दुःख की बात यह है कि जैसे-जैसे आधुनिक जीवनशैली ने जड़ें जमाई हैं, वैसे-वैसे लोगों ने पेड़ों के महत्व को समझना बंद कर दिया है. हम अब उन पेड़ों को महत्व नहीं देते जो चुपचाप हमें जीवन दे रहे हैं. हम केवल उसी को पहचानते हैं जो बोलता है, दिखता है, या जिसका बाजार में मूल्य हो.

चिलबिल का दुर्भाग्य यही है — वह मौन है, इसलिए अदृश्य होता जा रहा है.

अनुभव में बसता चिलबिल

आज अगर किसी से चिलबिल के बारे में पूछें, तो जानकारी उन्हीं लोगों से मिल सकती है जिन्होंने इस पेड़ को अपने हाथों से लगाया हो, जिन्होंने इसकी छांव में बचपन बिताया हो, या जिन्होंने कभी इसके पास बैठकर जीवन की शांति को महसूस किया हो.

ऐसे लोग अब कम होते जा रहे हैं. हमारी पीढ़ियाँ अब ऐसी कहानियाँ नहीं सुनतीं, न ही वे उन पेड़ों को पहचानती हैं जो कभी गाँव के हर कोने में सहजता से मिल जाते थे.

चिलबिल अब किताबों से बाहर निकलकर स्मृतियों में सिमट रहा है. पर क्या इन स्मृतियों का भी जीवन होता है या नहीं. स्मृतियाँ ही तो वह पुल हैं जो हमें अतीत से जोड़ती हैं, जो हमें यह याद दिलाती हैं कि हमारी जड़ें कहाँ हैं.

चिलबिल: एक जीवंत आत्मा

यह पेड़ सिर्फ एक वृक्ष नहीं, बल्कि **एक जीवंत आत्मा** है. यह वह चेतना है जो मिट्टी से जुड़ी है, हवा में घुली है, और हर उस व्यक्ति की याद में बसी है जिसने कभी इसके पास समय बिताया हो. चिलबिल ऊर्जा है — एक ऐसी ऊर्जा जो बिना दिखे, बिना बोले, हमारे जीवन को समृद्ध करती है.

यह पेड़ हमें सिखाता है कि मौन में भी शक्ति होती है. यह हमें सिखाता है कि कैसे किसी को बिना कुछ कहे भी राहत दी जा सकती है. यह हमें याद दिलाता है कि *सच्ची सेवा वह होती है जिसमें कोई अपेक्षा नहीं होती.*

जब हम इस पेड़ को केवल लकड़ी, दवा या छांव देने वाले साधन के रूप में देखते हैं, तब हम इसके आध्यात्मिक स्वरूप को खो देते हैं. पर जब हम इसे एक साथी, एक संरक्षक, एक मौन गवाह के रूप में देखते हैं — तब चिलबिल हमारे लिए एक जीवन दर्शन बन जाता है.

जीवन में चिलबिल की आवश्यकता

आज, जब जीवन की गति तीव्र हो चुकी है और मानव अपनी जड़ों से कटता जा रहा है, तब चिलबिल जैसे वृक्षों का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है. यह पेड़ हमें हमारी जड़ों की ओर लौटने का निमंत्रण देता है. यह हमें बताता है कि स्थिरता कितनी आवश्यक है, कि शांति केवल बाहर नहीं — भीतर भी होती है, और कि जीवन की सच्ची सुंदरता सरलता में छिपी होती है.

अगर हम चिलबिल को फिर से जानने, समझने और संजोने लगें, तो हम प्रकृति से एक बार फिर वैसे ही जुड़ सकते हैं जैसे हमारे पूर्वज जुड़ा करते थे. हमें फिर से वह दृष्टि विकसित करनी होगी जो पेड़ को सिर्फ एक साधन नहीं, एक जीवंत अस्तित्व के रूप में देख सके.

एक नया दृष्टिकोण

शायद अब समय आ गया है कि हम अपने चारों ओर के वृक्षों को केवल उनकी उपयोगिता के आधार पर न आंकें, बल्कि उनके अस्तित्व को समझें. चिलबिल हमें यह दृष्टि देता है. वह कहता है कि "मैं यहाँ हूँ, तुम्हारे साथ, तुम्हारे लिए — चाहे तुम मुझे देखो या नहीं."

हमारे शहरों, कस्बों और गाँवों में आज भी कहीं-कहीं चिलबिल खड़ा है — अकेला, चुपचाप, परंतु जीवंत. अगर हम चाहें तो हम उससे संवाद कर सकते हैं — एक मौन संवाद, जो शब्दों से परे होता है, लेकिन आत्मा से जुड़ा होता है.

अंत की नहीं, शुरुआत की ओर

चिलबिल की कहानी का कोई अंत नहीं है — क्योंकि यह जीवन की तरह है, जो निरंतर है. यह सिर्फ एक निष्कर्ष नहीं, एक नई शुरुआत है — हमारी सोच में, हमारी समझ में, और हमारे दृष्टिकोण में.

तो जब भी आप किसी पुराने पेड़ के नीचे छांव लेते हुए ठंडी हवा का स्पर्श महसूस करें, तो याद रखिएगा — हो सकता है वह चिलबिल ही हो, जो आपको बिना कहे कुछ सिखा रहा हो.

बबूल का विरह

मेरे लोग अक्सर करके आपको अफ्रीका के जंगल और भारत की भूमि पर मिल जाएंगे. हम लोगों की परवरिश बहुत ही कम संसाधनों में हुई है: यही कारण है कि हम आपके अगल-बगल नहीं बल्कि आपके हर एक इस्तेमाल वाली चीजों में है. मेरा असल नाम Gum Arabic Tree है. आपके लिए नया होगा लेकिन असल मे देखें तो यही मेरा गोत्र है और यही मेरी पहचान. हाँ नाम थोड़ा कठिन है लेकिन मुझे लोग घर मे 'बबूल' के नाम से बुलाते है.

मुझे कैसे पहचानोगे?

चुकी इंडिया मेरी कर्मभूमि है तो जाहिर है कि मैं बहुत गोरा नहीं होऊँगा. गेरुआ रंग है मेरा. मेरी छाल में आपको हल्का-फुल्का ग्रे कलर दिखेगा बाकी मेरा पूरा रंग देश की गेरुआ मिट्टी जैसा है. मुझसे लोग थोड़ा डरते भी हैं क्योंकि मेरे शरीर पर काटें भी हैं. छोटा मुँह बड़ी बात, लेकिन कहना भी जरूरी है, मेरी तने के सहारे जो भी बैठेगा, उसे बहुत सुकून मिलेगा. इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि मेरे बाल यानि मेरी पत्तियां एक छाते की तरह होती हैं. छोटी-छोटी पत्तियों से बनी छत को ही मैं अपनी खासियत मानता हूँ. भले ही मेरे शरीर में काटें ही क्यूँ न हों लेकिन मेरे इस छत से मैं चाहता हूँ कि मैं सबको मदद कर सकूँ.

आप भी भी शायद परेशान होंगे कि आखिर यहाँ बात किसकी हो रही है... अरे! घबराइए मत. अरे मैं बबूल का पेड़ का हूँ. हान-हान वही बबूल का पेड़, जिसके अंदर गोंद निकलता है.

अरे ज़रा फिर से रुकिए! मेरी बदलहाली को भी तो सुनिए...

ये सिर्फ काटें नहीं, बल्कि मेरे दर्दभरे दिल की दास्तान

मेरे कांटे न सिर्फ केवल किसी को डराने के लिए हैं, बल्कि यह मेरे दर्द भरे दिल की दास्तान को बयान करती है. ऐसा नहीं है कि मेरे पेड़ होने की वजह से मुझे दर्द नहीं होता है, हाँ दर्द जरूर होता है लेकिन अब तो हर एक दर्द की आदत पड़ गई है. इन सारी कठिनाइयों ने अब मेरी ज़िंदगी में अपनी एक जगह बना ली है. यह अब मुझे और सजीव और सहनशील पेड़ बनाती है. जब तक मैं खड़ा रहता हूँ, लोग मुझे इस्तेमाल भी करते हैं और मुझसे डरते भी हैं. लेकिन मेरे मरने के उपरांत उन्हें मेरी जगह कोई और मिल जाता है और वो मुझे भूल जाते हैं.

लेकिन आज मैं अपने आप से एक सवाल करता हूँ. क्या सच में मेरे शरीर के काटें मेरी ज़िंदगी में जरूरी हैं? मेरे काटें केवल मेरी विशेषता नहीं है बल्कि मेरी कहानी की गहराई है. यह कठिनाइयाँ मेरे जीवन को साहस से भर देती है. मेरे काटों से लोग डरते हैं और जब मुसीबत में आते हैं तो इन्हीं का इस्तेमाल करते हैं. मेरे काटें मेरे जीवन के दर्द को दिखाती है जो मेरे सीखने और आगे बढ़ने का माध्यम बनी हुई है. मेरे काटों की चुटकूलें मेरी शाखाएं नहीं हैं बल्कि वह मेरे स्थिरता को दर्शाती है.

मैं अपनी ज़िंदगी को अनिश्चित मानता हूँ. करीब तीस साल के जीवनकाल में मेरे ऊपर कई सारी ज़िम्मेदारियाँ होती हैं. कई बारी आम आदमी की तरह किसी बीमारी का मैं शिकार भी हुआ हूँ लेकिन अपने जीवन के सिद्धांत से कभी परे नहीं हुआ. मेरी जगह मेरे समाज में बहुत महत्वपूर्ण नहीं होती है, लेकिन मुझे बचपन से यही सिखाया गया है कि तुम्हें अपनी जगह खुद बनानी पड़ेगी. मेरे समाज में हमलोग कभी दूसरों के प्रति किसी भी प्रकार का द्वेष नहीं रखते हैं. यही मेरा जीवन है और यह मुझे मंजूर है. मैंने सबके जीवन में उनके काम अनुसार अपनी जगह बनाई है. अक्सर करके मुझे व्यंग के रूप मे इस्तेमाल किया जाता है. ये मेरे लिए कोई बुरी चीज नहीं है बल्कि यही मेरी पहचान है कि आखिरकार मैं सबके लिए किसी काम का तो हूँ...

एक पंक्ति याद या रही है; शायद आप मुझसे परेशान होंगे लेकिन इस पर जरा गौर फरमाइए...

गोपालदास नीरज हिन्दी साहित्य के स्तम्भ के रूप में माने जाते थे. प्रख्यात कवि और गीतकार के रूप में हम सब इन्हें जानते हैं. इनकी रचनाएं जमीन से जुड़ी और और हमेशा बदलते हुए भारत की तस्वीर को जिंदा रखते है. . नीरज के एक गाने पंक्ति कुछ ऐसी थी,

सपने झड़े फूल से, मीत चुभे शूल से,

लुट गए सिंगार सभी बाग़ के बबूल से,

और हम खड़े-खड़े बाहर देखते रहे.

कारवाँ गुजर गया गुबार देखते रहे.

नीरज की इस पंक्ति में सपने, फूल, शूल, बाग़, बबूल, बहार और गुबार इसके मुख्य तत्व हैं. इन पक्तियों का अर्थ सबके लिए अलग-अलग हो सकता है और वह हर एक आदमी के सोच पर आधारित है. ये चार लाइन प्राकृतिक सौन्दर्य और उसी प्रकृति में जुड़े हर एक कमियों को मानने की कहानी बताता है.

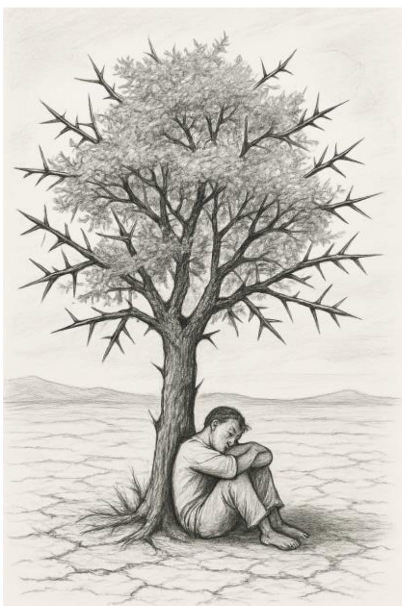

देखिए भले यह कितनी सुंदर लाइन है, लेकिन इस गाने में मुझे किस संदर्भ में उपयोग किया गया है? मेरे ऊपर किसी की खूबसूरती पर कालिख लगाने का इल्ज़ाम लगाया गया है. मैं अपने आप से सवाल करता हूँ कि आखिर मैं कौन हूँ? मेरे अंदर ऐसी कौन सी चीजें हैं जो मुझे इस समाज में सबसे अलग रख देती है, मेरा कसूर क्या है जो मुझे अपने समाज के सबसे निचले तबके में रखा गया है. हालांकि मुझे ऐसा लोग समझते हैं लेकिन असल मे मैं ऐसा हूँ नहीं. ये तो बस लोगों का नजरिया है जिसे मैं ठुकरा नहीं सकता हूँ और यही मेरे जीवन का कटु-सत्य है जिसे मुझे मानना ही पड़ेगा.

"बोए पेड़ बबूल का तो आम कहाँ से होये". शायद एक बड़ा दाग है लेकिन अब क्या ही कर सकते हैं. मुझे इस मुहावरे से भेदभाव की बू आती है लेकिन अब क्या ही करें, लोगों की नज़र में अगर ऐसा है तो है उसे कोई बदल नहीं सकता है. लेकिन अब देखिए यह दस्तूर है जीवन का कि बुरी ताकत पर लोगों की ज़्यादा नज़र रहती है. लेकिन मैं आपको बताऊँ पिछले कई सालों से भारत ने मुझे अपने साथ जोड़े रखा है. यदा-सर्वदा जब भी लोग मुझे याद करते हैं उनके लिए मैं अपने आप को हर एक रूप से साबित करना चाहता हूँ. मैं पेड़ों में फकीर हूँ, ज़मीन में बसना है अब चाहे वहाँ सूखा पड़ रहा हो या चाहे वहाँ बाढ़ ही क्यों न आ रही हो, अगर वह ज़मीन मुझे भा गई तो मैं तो वहीं का हो जाता हूँ.

ज़्यादातर अप्रैल और मई के महीने में फूलों से सु-सज्जित होता हूँ. भारत में मुझे या मेरे फूलों का सेवन लोग तब किया करते थे जब भी कभी सूखा पड़े. धीरे-धीरे आगे चलते-चलते मेरे बीज से लोग अपनी सेहत बनाने पर ध्यान देने लगे जिसके बाद मेरे बीज कोई भून के खाने लगा तो कोई ऐसे ही सूखे बीज खाता चला गया. ऐसा अनुभव आपको भी मिल सकता है, लेकिन उसके लिए आपको राजस्थान जाना पड़ेगा जहां पर लोग मुझे उगाते भी हैं और मेरी पूजा भी करते हैं.

गुजरात के कच्छ में स्थित बन्नी के घास के मैदान हमेशा से लोगों की आजीविका का अहम हिस्सा बनके रहा है. बन्नी में उगने वाले घास लोग खाया करते थे. लोग बताते हैं कि सऊ के बीज से बाजड़े की रोटी का रोटला बनाया करते थे. सऊ एक तरह की घास की बीज हुआ करती थी

जिसे लोग बड़े चाव से खाया करते थे. लेकिन धीरे-धीरे वैसी घास खत्म होती चली गई जिसके बाद लोगों के अंदर से वह घास का स्वाद ही खत्म हो गया.

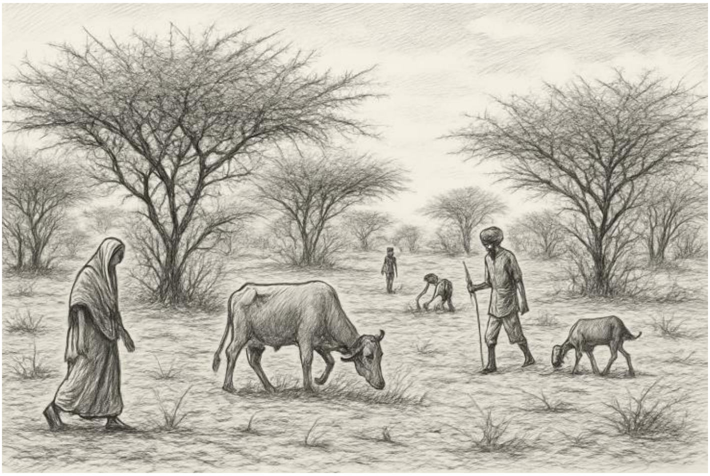

सउ, चिंचि, मोरड, खेवई, काल, धामुर जैसी कई तरह की घास हुआ करती थी जिसका समृद्ध स्रोत लोगों को गुजरात से मिला करता था. अब धीरे-धीरे समय ने अपना रूख बदला और उस चीज के पास चली गई जिसका नाम विलायती बबूल है. जी हाँ बबूल की ही एक प्रजाति है जिसे बाहर लाकर भारत में उगाया गया था. इस विलायती बबूल का सबसे बड़ा खामियाज़ा अगर किसी ने भुगता है तो वह बन्नी के घास के मैदान ही हैं.

विलायती बबूल, जिसे स्थानीय भाषा में 'गांडो बावल' कहा जाता है, एक आक्रामक विदेशी प्रजाति है जो बन्नी क्षेत्र में तेजी से फैल रही है. इस वृक्ष के फैलाव ने स्थानीय घासों की विविधता को कम कर दिया है, जिससे खाने योग्य घासों की उपलब्धता में भी कमी आई है. यह वृक्ष स्थानीय वनस्पतियों को प्रतिस्पर्धा में पीछे छोड़ देता है, जिससे पारंपरिक खाद्य स्रोतों पर निर्भरता रखने वाले समुदायों की आजीविका पर असर पड़ा है.

पारंपरिक तौर पर खाने योग्य घास कई तरह की थी, जिसके बारे लोग जानते नहीं होंगे लेकिन मैं आपको उनके नाम भी बताऊँगा और उसका उपयोग किस तरह के खाने में होता है, वह भी बताऊँगा.

बन्नी क्षेत्र में कई पारंपरिक घासें थीं जो स्थानीय लोगों के आहार का हिस्सा थीं, जिसका एक छोटा सा संस्मरण आपको नीचे मिलेगा.

- **सउ (Echinochloa species)**: इसके बीजों से बाजरे जैसी रोटियां बनाई जाती थीं.
- **खेवई (Sporobolus species)** और **चींचीं (Eragrostis japonica)**: इनके बीजों का उपयोग भी रोटियां बनाने में होता था.
- **मोराड (Suaeda species)**: इसका उपयोग सब्जी और चटनी बनाने में किया जाता था.
- **काल (Cyperaceae परिवार)** और **धामुर**: सूखे के समय इनके बीजों को आटे में मिलाकर रोटियां बनाई जाती थीं.
- **जिंजवा (Dichanthium प्रजाति)**: इसे सब्जी की तरह खाया जाता था.

अब हुआ यह कि विलायती बबूल का फैलाव बहुत तेजी से होने लगा जिसके बाद बन्नी के घास के मैदानों को अपनी ही जगह छोड़नी पड़ी. इतना ही नहीं बल्कि इससे आम लोगों के खान-पान में भी भारी बदलाव आ गया है, लेकिन वो कहते हैं इंसान ही ऐसा आदमी है जो लालची भी है और समझदार भी.

विलायती बबूल के प्रसार को रोकने और स्थानीय घासों की पुनर्स्थापना के लिए वन विभाग ने 2019 में 'बन्नी ग्रासलैंड रीस्टोरेशन प्रोजेक्ट' शुरू किया. इस परियोजना का उद्देश्य विलायती बबूल को हटाकर स्थानीय घासों की प्रजातियों को पुनः स्थापित करना है. हालांकि, कुछ स्थानीय लोग विलायती बबूल का उपयोग ईंधन और अन्य उद्देश्यों के लिए कर रहे हैं, जिससे इसकी कटाई और प्रसार दोनों जारी हैं.

बन्नी घास के मैदानों की पारिस्थितिकी और स्थानीय समुदायों की आजीविका को संरक्षित करने के लिए आवश्यक है कि विलायती बबूल के प्रसार को नियंत्रित किया जाए और पारंपरिक घासों की पुनर्स्थापना के प्रयासों को बढ़ावा दिया जाए.

अनकही कहानी

बबूल का पेड़ कठोर ज़मीन में उगता है जहां ज़्यादातर पौधे पनप नहीं पाते हैं. यह सूखा, पानी, और भीषण गर्मी झेलकर भी उसी ज़मीन में खड़ा रहता है. इस पेड़ का जीवन संघर्ष का प्रतीक है जो कम संसाधनों में भी डटा खड़ा रहता है.

गाँवों में बबूल की लकड़ी जलाने के लिए, इसके कांटों से बाड़ लगाने के लिए और इसके नीचे छांव के लिए उपयोग होती रही है. यह आम पेड़ों की तरह शोभा नहीं देता, पर ज़रूरतमंदों के लिए हमेशा उपयोगी रहा है.

बबूल अकेलापन भी दर्शाता है — अक्सर यह वीरान ज़मीनों पर, खेत की मेड़ पर या रेगिस्तानी सड़कों के किनारे अकेला खड़ा मिलता है, जैसे किसी सूनी आत्मा की तरह जो चुपचाप सब कुछ सहती है. कुछ ऐसा है बबूल का परिदृश्य, जिसे कभी कोई चाहता भी है नुकसान पहुंचाना तो भी नहीं दे पाता है.

बबूल की कहानियों का उल्लेख बहुत कम है लेकिन जितना भी है, वह अच्छा है और जरूरतमंदों के लिए एक मिसाल के रूप में काम करता है. एक मशहूर कवि धर्मवीर भारती ने बबूल की संवेदनशीलता को अपनी कविता “बबूल” में बहुत गहराई से व्यक्त किया है.

उसकी कविता की एक छोटी सी पंक्ति से मैं अपने भाव को शुरू करना चाहता हूँ—

"जिसे कांटों ने ही पाला हो
जो तेज धूप में भी पनपता हो
वह क्या जानेगा वसंत की मृदुता?"

इस कविता में धर्मवीर भारती ने बहुत अच्छे तरीके से बबूल की जीवन शैली के बारे में बात की है. इस कविता में बबूल को एक प्रतीक के रूप में दिखाया गया है — एक ऐसा जीव जो कठोरता में पला है, जिसकी ज़िंदगी में कोमलता की कोई जगह नहीं है. पर भीतर से वह उतना ही संवेदनशील है जितना शायद कोई और नहीं हो सकता है.

कवियों ने बबूल को अक्सर उन लोगों का प्रतीक माना है जो समाज में हाशिए पर हैं — जो न तो बहुत सुंदर दिखते हैं, न ही बहुत सम्मान पाते हैं, लेकिन जिनमें गहराई होती है, उपयोगिता होती है और आत्मबल होता है.

महान कवि नागार्जुन ने भी अपनी कविता में बबूल का बहुत ही सुंदर उल्लेख किया है. नागार्जुन ने अपनी कविता “यह दंतुरित मुस्कान” में बबूल के पेड़ का उल्लेख एक प्रतीक के रूप में किया है. कविता में कवि बबूल से संवाद करते-करते कहते हैं...

"बबूल?
तुम मुझे पाए नहीं पहचान?
देखते ही रहोगे अनिमेष!
थक गए हो?
आँख लूँ मैं फेर?"

यह पंक्तियाँ बबूल के माध्यम से जीवन की कठोरताओं और संघर्षों को दर्शाती हैं. बबूल, जो कांटों से भरा होता है, फिर भी अपनी जड़ों से जुड़ा रहता है और जीवन को सहन करता है.

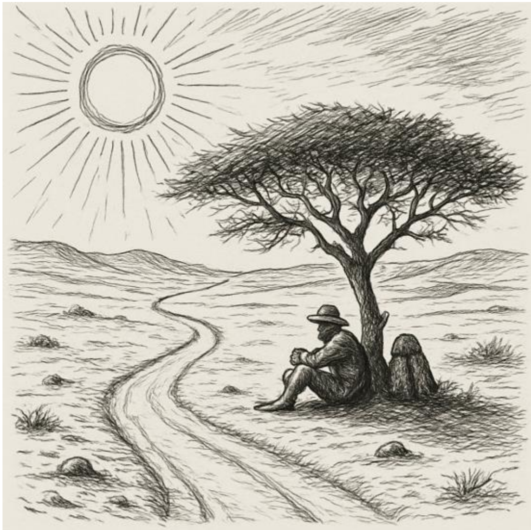

यह सभी कविताएं हमे हमेशा बबूल के पेड़ की संवेदनशीलता, उसके संघर्षशील जीवन पर नजर डालती है. यह तो हो गई बात साहित्य की और बबूल के अटूट विशेषताओं की. अब आइए मैं यही कहानी को फिर से शुरू करता हूँ कुछ नए किस्सों के साथ, कुछ नई जानकारी के साथ.

बबूल का पेड़ और गोंद

आपको मालूम है बबूल का असल वैज्ञानिक नाम क्या है? बबूल का वैज्ञानिक नाम Gum Arabic Tree है. बबूल एक ऐसा काँटेदार पेड़ है जोकि भारत, अफ्रीका और मध्य-पूर्वी देशों में ज़्यादातर पाया जाता है. इसकी सबसी बड़ी विशेषता यह है कि यह अत्यधिक गर्मी में भी अपने आपको जीवित रखने में सक्षम रहता है. अच्छा हमने जो जानकारी अभी पढ़ी, वो बहुत लोग की डिक्शनेरी में नहीं होगी क्योंकि बबूल का पेड़ ज़्यादातर सिर्फ उसके छाल से निकालने वाली गोंद की वजह से जाना जाता है.

बबूल के पेड़ से निकालने वाले गोंद प्राकृतिक रेज़िन के रूप में होते हैं जोकि पेड़ को काटने के वक्त या उसे छीलने के समय अपने आप निकलने लगता है. देखिए सरल और आसान शब्दों में अगर आपको समझाऊँ तो

बबूल के पेड़ को आप अगर ज़रा सा भी काटेंगे तो वह पेड़ तुरंत एक तरल पदार्थ छोड़ता है जोकि सूखने के बाद गोंद बन जाता है. इंग्लिश में इसे 'Gum Arabic' कहा जाता है और हिन्दी में इसे बबूल का गोंद कहा जाता है. यह गोंद तभी निकलता है जब पेड़ को चोट लगती है. जैसे आदमी को चोट लगते ही उसे खून निकलने लगता है, वैसे ही बबूल के पेड़ को चोट लगते ही उसके अंदर से भी एक तरह का खून ही निकलता है जिसे हम आम भाषा में गोंद कहते हैं.

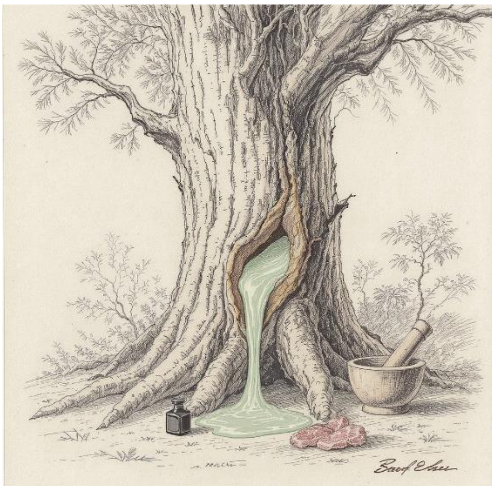

यही एक अंतर है हम इंसानों में और इन निरी पेड़ों में. इनका खून भी बेचा जाता है, इनका खून भी हम इंसानों को जीवित रखने में मदद करता है लेकिन वहीं दूसरे हाथ पर हम इंसान है जो इन पेड़ों की मदद करने मे विफल रहते है . हम अपना खून निकालने नहीं देते हैं और इन पेड़ों के खून से अपने घरों को भरते हैं.

बबूल: काँटों में छुपा इतिहास, संस्कृति और जीवन का सहचर

बबूल का पेड़ (*Vachellia nilotica*, पहले *Acacia nilotica*) अपनी औषधीय और लकड़ी के उपयोग के लिए तो प्रसिद्ध है, लेकिन इसके कुछ ऐसे पहलू भी हैं जो कम ही लोगों को पता होते हैं. प्राचीन भारत में बबूल की गोंद और छाल से पत्तों पर लिखने के लिए काला स्याही बनाई जाती

थी, वहीं राजस्थान में इसकी छाल से पीला-भूरा प्राकृतिक रंग निकालकर कपड़ों को रंगा जाता था. खेती में, खासकर शुष्क और रेगिस्तानी इलाकों में, बबूल को खेतों के चारों ओर पंक्तियों में लगाया जाता था ताकि इसकी घनी और नुकीली काँटेदार शाखाएँ मवेशियों को फसलों से दूर रखें. पुराने समय में यह हाथियों को खेतों में घुसने से रोकने के लिए भी इस्तेमाल होता था.

बबूल के खोखले काँटे कई बार चींटियों का घर बन जाते हैं, जिससे एक प्रकार का सहजीवी संबंध बनता है—चींटियाँ पेड़ को कीटों से बचाती हैं और पेड़ उन्हें आश्रय देता है. वैदिक काल में बबूल की टहनियों को "दातून" कहा जाता था, जो न केवल दाँत साफ करने के लिए बल्कि मसूड़ों को मजबूत और जीवाणुरोधी बनाने के लिए भी उपयोग होती थीं. इसकी छाल में टैनिन की प्रचुरता होती है, जिसका उपयोग चमड़े को पकाने (टैनिंग) में किया जाता था, जो मोची और काठी बनाने वालों के लिए बेहद जरूरी था.

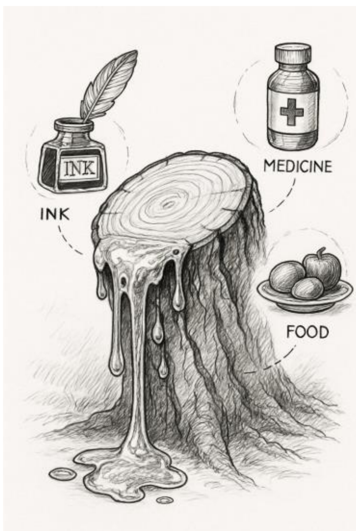

सूखे और अकाल के समय, बबूल की फली के बीजों को पीसकर मोटा आटा बनाया जाता था, जिसे मनुष्य और पशु दोनों भोजन के रूप में

इस्तेमाल करते थे. ग्रामीण मान्यताओं में घर के पास बबूल लगाने को वायु को शुद्ध करने और नकारात्मक शक्तियों को दूर रखने वाला माना जाता था, शायद इसकी धूल सोखने और सूखे, धूलभरे माहौल में वायु को स्वच्छ करने की क्षमता के कारण. लोककथाओं और कविताओं में बबूल को अक्सर सहनशीलता और दृढ़ता के प्रतीक के रूप में दर्शाया जाता है—ऐसा वृक्ष, जो बंजर जमीन और तेज गर्मी में भी हरा-भरा रहता है. रेगिस्तानी गीतों में कई बार प्रेम को बबूल से तुलना करते हुए कहा जाता है कि यह रिश्ता मजबूत और स्थायी तो है, लेकिन कभी-कभी इसमें काँटे भी होते हैं.

बबूल और महाभारत

बबूल का पेड़ हिन्दू महाग्रंथों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है. संस्कृत में इसे प्रायः "समी", "वट-समी" या कभी-कभी "खदिर" कहा गया है (खदिर आमतौर पर Acacia catechu के लिए प्रयुक्त होता है, लेकिन कई क्षेत्रों में इसे बबूल से भी जोड़ा जाता है).

महाभारत के विराट पर्व में वर्णन आता है कि जब पांडव अज्ञातवास के अंतिम वर्ष में मत्स्य देश पहुँचे, तो अर्जुन ने अपना गाण्डीव धनुष, तरकस और अन्य शस्त्र शमी वृक्ष के खोखले तने में छिपा दिए.

अज्ञातवास पूरा होने के बाद अर्जुन ने युद्ध से पहले वहीं से अपने हथियार निकाले और विराट युद्ध में उनका प्रयोग किया.

भारत के कई क्षेत्रों में शमी वृक्ष को बबूल या उससे मिलते-जुलते Acacia वृक्ष के रूप में पहचाना जाता है, विशेषकर पश्चिमी भारत में जहाँ बबूल अधिक पाया जाता है. कई क्षेत्रों में इसके बारे में बहुत सारी कथाएं जुड़ी हुई हैं जो यह दर्शाने का प्रयास करती हैं कि वह वृक्ष बबूल का था.

बबूल की जगह शमी के वृक्ष की पूजा आज भी विजयदशमी पर होती है, यह वह पर्व है जब माना जाता है इसी दिन महाराक्षस रावण का वध राम जी ने किया था. इस दिन लोग शमी के पेड़ की पत्तियों का आदान-प्रदान करते हैं जिसे पहले 'सोने के पत्ते ' के नाम से जाना जाता था. कहा जाता है कि यह विजय और समृद्धि का प्रतिक है. महाभारत के शांति पर्व और अनुशासन पर्व में बबूल/समी की लकड़ी को कुछ यज्ञों और अग्नि-हविष्य के लिए शुभ माना गया है. इसकी टहनियों का प्रयोग वेदकालीन अनुष्ठानों में समिधा के रूप में किया जाता था.

आज का बबूल

आज के समय में बबूल का पेड़ (*Vachellia nilotica*) भारत और एशिया-अफ्रीका के कई शुष्क तथा अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण वृक्ष के रूप में मौजूद है. यह पेड़ अपनी कठोरता, कम पानी में भी जीवित रहने की क्षमता और बहुउपयोगी गुणों के कारण आज भी किसानों, ग्रामीणों और पर्यावरणविदों के लिए उपयोगी है. ग्रामीण इलाकों में इसे खेतों की मेड़ों

पर, सड़कों के किनारे और गाँवों के चारों ओर जीवित बाड़ (लिविंग फेंस) के रूप में लगाया जाता है, जिससे मवेशी फसलों में प्रवेश न कर सकें. इसकी लकड़ी जलाने, औजार बनाने और निर्माण कार्य में काम आती है, जबकि गोंद और छाल का उपयोग औषधीय तथा औद्योगिक उद्देश्यों के लिए होता है. बबूल की जड़ें मिट्टी को बाँधकर कटाव रोकती हैं, और यह पेड़ कार्बन अवशोषण में भी योगदान देता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव कम करने में मदद मिलती है. हालाँकि, शहरीकरण और भूमि-उपयोग में बदलाव के कारण कई जगहों पर इसके प्राकृतिक आवास घटे हैं, लेकिन इसकी अनुकूलन क्षमता और तेजी से बढ़ने की प्रवृत्ति के कारण यह अब भी आसानी से पाया जाता है. आज बबूल केवल ग्रामीण जीवन का हिस्सा नहीं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण, वनीकरण और मरुस्थलीकरण रोकने की योजनाओं में भी अहम भूमिका निभा रहा है.

मेरी कहानी का एक अंश यह भी है कि आज भी मैं ज़िंदा हूँ और हमेशा इसी धरती पर ज़िंदा रहूँगा. मैं इंसानों को कठोर दिल नहीं मानता हूँ , लेकिन उनसे आग्रह ज़रूर करना चाहता हूँ कि मेरी भी ज़िम्मेदारियों को समझे. मुझे वीरान जंगल में ही रहने दें लेकिन मेरे अस्तित्व को ख़त्म न करें.

अब जब आपने मेरी पूरी कहानी सुन ली है, तो शायद आप समझ पाए होंगे कि मैं कौन हूँ और क्यों मैं अपने काँटों, अपनी छाल, अपने गोंद और अपने अस्तित्व पर इतना गर्व करता हूँ. मैंने आपको अपने जन्मस्थान से लेकर अपनी पहचान, अपने दुख-सुख, अपनी उपयोगिता और अपनी बदहालियों तक सब बताया. मैंने वह दर्द भी बाँटा जो मेरी छाल के भीतर छुपा रहता है, और वह गर्व भी दिखाया जो मेरी जड़ों में बसता है.

मेरे जीवन की सबसे बड़ी सच्चाई यह है कि मैं हमेशा कठिनाइयों में पनपता हूँ. जहाँ बारिश का नामोनिशान नहीं होता, जहाँ ज़मीन फटी हुई होती है, जहाँ सूरज की तपिश हड्डियाँ पिघला दे—वहीं मैं अपनी जड़ों को और गहराई में फैलाता हूँ. यह मेरी फितरत है कि मैं कभी हार मानना नहीं जानता. चाहे मेरा रंग गेरुआ हो या मेरी शाखाओं में काँटे हों, मैं हर मौसम का सामना करता हूँ.

आपने देखा होगा कि लोग मेरे काँटों से डरते हैं, लेकिन यही काँटे कई बार उनकी ढाल भी बन जाते हैं. खेतों की मेड़ों पर, घरों के चारों ओर, सड़कों के किनारे—मेरे काँटे उस बाड़ का काम करते हैं जो मवेशियों को फसल से दूर रखती है. लोग मुझे खतरे का प्रतीक मान लें, पर सच्चाई यह है कि मैं सुरक्षा का पहरेदार हूँ.

मैंने अपने गोंद के बारे में भी आपको बताया—वह गोंद, जो मेरे शरीर का खून है. यह गोंद सदियों से इंसानों के जीवन का हिस्सा है—कभी लेखन की स्याही, कभी औषधि, कभी भोजन में, तो कभी उद्योगों में. लेकिन इस गोंद का सच यह भी है कि यह तब निकलता है जब मुझे चोट लगती है. इंसानों के लिए यह उपयोगी है, पर मेरे लिए यह घाव है. फिर भी मैं शिकायत नहीं करता, क्योंकि मेरा अस्तित्व ही सेवा है.

मेरे जीवन में साहित्य और संस्कृति का भी एक कोना है. नीरज, धर्मवीर भारती, नागार्जुन जैसे कवियों ने मुझे अपने शब्दों में जगह दी. कभी मुझे बगीचे का खलनायक कहा गया, कभी संघर्ष का प्रतीक, तो कभी संवेदनशील आत्मा. मैं इन सभी रूपों को स्वीकार करता हूँ, क्योंकि यही मेरा सच है—मैं कई रूपों में जिया जाता हूँ, कई नजरियों से देखा जाता हूँ.

इतिहास में भी मेरी छाप है. महाभारत के विराट पर्व में, अर्जुन ने अपने गाण्डीव को समी वृक्ष में छुपाया था—और कई मान्यताओं में वह समी वृक्ष

मैं ही हूँ. विजयादशमी के दिन आज भी मेरी पत्तियाँ "सोने के पत्ते" बनकर आदान-प्रदान होती हैं, विजय और समृद्धि के प्रतीक के रूप में. मैं धर्म, परंपरा और लोकमान्यताओं का हिस्सा हूँ, चाहे लोग मुझे आमतौर पर रेगिस्तान का साधारण पेड़ ही क्यों न समझें.

लेकिन मेरे जीवन की सबसे बड़ी चुनौती है—विलायती बबूल. यह मेरी ही एक विदेशी जात है जिसने बन्नी के घास के मैदानों को बदलकर रख दिया. इसने स्थानीय घासों की विविधता को निगल लिया, और लोगों की खान-पान की परंपरा को भी बदल डाला. इंसान ने इसे लाकर लगाया, और अब इंसान ही इसके फैलाव को रोकने की कोशिश कर रहा है. यह मुझे याद दिलाता है कि कैसे हम प्रकृति के संतुलन से खेलते हैं, और फिर उसी संतुलन को वापस लाने में सालों लगा देते हैं.

आज भी मैं जीवित हूँ—गाँवों के किनारे, खेतों की मेड़ों पर, सूखी धरती में, और रेगिस्तानी हवाओं में. मैं अब भी उन लोगों के लिए आश्रय हूँ जो धूप से बचना चाहते हैं, उन जानवरों के लिए भोजन हूँ, जो मेरी फली खाते हैं, और उस धरती के लिए ढाल हूँ, जो कटाव से बचना चाहती है. मैं न केवल लोगों के जीवन का हिस्सा हूँ, बल्कि उनकी कहानियों का भी हिस्सा हूँ.

मेरा अस्तित्व आपको यह सिखाने के लिए है कि कठिनाई कोई बाधा नहीं, बल्कि ताकत है. मैं यह भी सिखाता हूँ कि सुंदरता केवल फूलों और हरियाली में नहीं, बल्कि उस जिद में भी है जो आपको सबसे कठिन मौसम में भी खड़ा रखती है. मैं यह याद दिलाता हूँ कि हर किसी के भीतर कोई न कोई उपयोगिता है, चाहे दुनिया उसे देखे या न देखे.

मैं आपसे सिर्फ एक आग्रह करना चाहता हूँ—मुझे मेरे जंगलों में, मेरी वीरान धरती पर, मेरे प्राकृतिक घर में रहने दें. मेरे काँटों से डरिए मत, क्योंकि यही मेरी कवच हैं. मेरी छाया को अपनाइए, क्योंकि यही मेरा स्नेह है. मेरे गोंद को समझिए, क्योंकि यही मेरी जीवनधारा है. और सबसे ज़रूरी, मेरे अस्तित्व को खत्म मत कीजिए, क्योंकि मैं केवल एक पेड़ नहीं, बल्कि धरती का एक अटूट हिस्सा हूँ.

मैं बबूल हूँ—रेगिस्तान का प्रहरी, संघर्ष का प्रतीक, और उन कहानियों का पात्र जो पीढ़ियों से सुनाई जाती हैं. जब भी आप किसी सुनसान राह पर, तपते सूरज के नीचे, अकेला खड़ा बबूल देखें, तो याद रखिए कि यह पेड़ सिर्फ खड़ा नहीं है, यह आपकी तरह जी रहा है—अपने संघर्षों के साथ, अपनी जिम्मेदारियों के साथ, और अपनी उम्मीदों के साथ.

कान्हा का कदंब

यह कदंब का पेड़

अगर माँ होता यमुना तीरे...

जानते हो क्या मेरे बारे में, या इन लाइनों से किसी की याद आती है. शायद भगवान कृष्ण या शायद उस पेड़ की याद. लेकिन कैसे याद आएगी वह पेड़ तो अब दिखता ही नहीं है, या शायद यमुना ही नहीं बची जिससे उस पेड़ का जीवंत स्वरूप देखा जा सके. लेकिन ये कैसी बातें हैं जिसका कोई सिर पैर ही नहीं समझ में आ रहा है. मैं तो आजकल पढ़ना चाहता हूँ कि आखिर ऐसा हुआ कैसे या आखिर यह पेड़ कौन सा है जिसपर कृष्ण जी ने अपनी जीवन के अनमोल समय को बिताया. ऐसा कहा जा सकता है कि कभी इस पेड़ की छाँव में नन्हे कान्हा छेड़ते थे बाँसुरी की मधुर तान.

अंग्रेजी में बर्लफ्लावर ट्री या यूं कहें तो कहीं कदंब या कदंबा है इस पेड़ का नाम. दक्षिण और दक्षिणपूर्वी एशिया में बहुत चर्चित और प्रचलित इस पेड़ की कहानी शायद ही कोई बता पाए. इसका भी अपना एक कारण है, यह एक ऐसा पेड़ है जोकि हमेशा से लोगों के सामने तो रहा है लेकिन शायद ही इसे कोई पहचान पाता है या इसके बारे में जानना चाहता है- कारण यह भी हो सकता है कि इसका कोई फल आम लोगों की जीवन शैली में काम नहीं आता है, इसी वजह से लोगों ने ध्यान नहीं दिया.

अब शुरू करते हैं कदंब के पेड़ की उन कहानियों से जो शायद ही सुनी गई हों या शायद ही समझी गई हों. कदंब का पेड़ एक ऐसा वृक्ष है जो केवल एक पेड़ नहीं है बल्कि भारतीय संस्कृति, पर्यावरणीय संतुलन और पौराणिक लोक-कथाओं का जीवंत प्रतीक है. कदंब का पेड़ अपने आप में एक कहानी है, ऐसी कहानी जो इसके छाँव में बसी हुई है, जो इसके तनों से गुजरती है और इन कहानियों का संस्मरण देती है इसकी छोटी-छोटी पत्तियां.

तेजी से बढ़ता हूँ और जंगलों का विकास करता हूँ

मेरी सबसे बड़ी खासियत है मेरा तेजी से बढ़ना. यह कदंब का पेड़ बहुत तेज़ी से बढ़ता है और वर्षा ऋतु में हरे-भरे जंगलों का विकास करता है. यूँ ही नहीं मेरी कहानियाँ इतनी मशहूर हैं, ऐसे ही नहीं मैं इतना विशाल बनकर खड़ा रहता हूँ. मेरा संबंध कॉफी प्लांट के जनक से होता है, मूल रूप से मेरा परिवार वही है जिनके साथ मैं जीता हूँ और वही लोग हैं जिन्होंने में मुझे धरती पर स्थापित किया. मैं आपको बताऊँ हर एक इंसान के जन्मदाता उसके माँ-बाप होते हैं, लेकिन एक इंसान की पहचान उसके काम से होती है, उसके परिवार और उसके व्यक्तित्व से होती है. मेरा जन्म तो दक्षिण एशिया में हुआ तो जरूर था लेकिन सबसे ज्यादा प्यार मिला मुझे भारत में. हमेशा से मुझे भारत के लोगों से सबसे ज्यादा प्यार मिला जिसकी वजह से मैं इन्हीं का होकर रह गया.

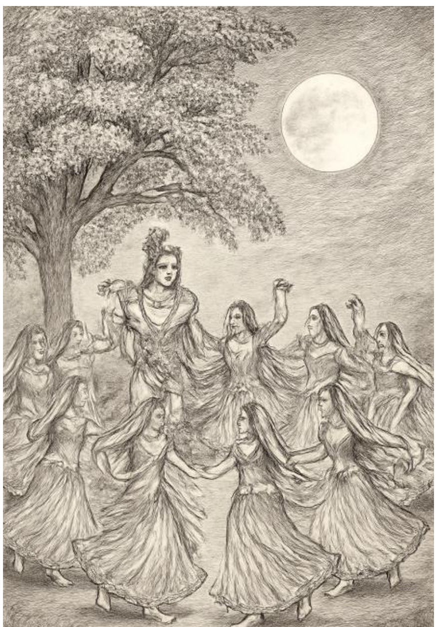

मैं आपको बताऊँ कदंब एक तेजी से बढ़ने वाला पेड़ होता है, एक वर्ष में यह करीब 3-5 मीटर तक की ऊंचाई खींच सकता है अगर उसे अनुकूल

वातावरण मिले. 5 से 7 वर्षों में यह पेड़ करीब 15-20 मीटर की ऊंचाई तक पहुँच जाता है. पेड़ों की लंबाई हमेशा से उनके वातावरण पर ही निर्भर करता है. जितना अनुकूल वातावरण, उतना ही अच्छा और मजबूत पेड़. यह तो हम सब जानते हैं कि पेड़ों को अपने जन-जीवन के लिए धूप की सबसे ज्यादा जरूरत होती है और उसी धूप की लड़ाई में पेड़ की लंबाई बढ़ती है और घटती है.

यह पेड़ जहां उग जाए वहाँ की मिट्टी उपजाऊ हो जाती है, यही इस पेड़ की खासियत है. यह वृक्ष खासकर बरसात के मौसम में तेजी से बढ़ता है और हमेशा से इस पेड़ के लिए गर्मी और चिप-चिपा मौसम इसके लिए सबसे अनुकूल होता है. इस पेड़ का जड़ बेहद गहरा होता है जोकि मिट्टी को मजबूती देता है. यह सूखे और हल्के बाढ़ के मौसम में भी जीवित रह सकता है. अगर आपने कभी गौर किया होगा यह पेड़ आपको गंगा के तट पर, यमुना के तट पर या गाँव मेँ तालाब के किनारे देखने को जरूर मिल जाएगा.

पेड़ एक और उसके फायदे अनेक...

एक आम आदमी जैसी कहानियाँ यह भी लेकर चलते हैं जिनकी कहानियों की विशेषता होती है इनकी उपयोगिता. हमेशा से किसी की विशेषता ही उनकी पहचान होती है जोकि समाज में उनके होने का स्वरूप पेश करती है. वैसे ही कुछ किस्सों को अपने जीवन की रज़ाई में लेकर चलता है यह कदंब का पेड़.

तेजी से होती है बढ़त, जिससे हर-भरे जंगलों का विकास होता है, सबसे बड़ी खासियत है इसके गेंद जैसे फूल. यह गोल से पीले रंग के फूलों से आती है हल्की मीठी खुशबू जिसका सिर्फ एक उद्देश्य है. यह अपनी मीठी खुशबू से मधुमक्खियों को और चिड़ियों को आकर्षित करती है. इसकी बड़ी पत्तियां और घनी शाखाएं इसे एक बेहतरीन छायादार पेड़ बनाती है. अच्छा सिर्फ इतनी ही खासियत नहीं है, कदंब के पेड़ के जड़ मिट्टी को बांधे रखते हैं जिस कारण यह पेड़ जल संरक्षण में बहुत मदद करता है.

लेकिन देखिए यह तो पेड़ की कुछ अच्छियाँ और उनकी खासियत है. हम जब किसी की खासियत पर ध्यान देना शुरू करते हैं तब हमें ये जान लेना चाहिए कि इनकी खासियत की हमें क्या जरूरत है, और अगर इनके अंदर कुछ खूबियाँ हैं तो वह हमारे किस काम की है. यह इंसान की फितरत है जो हमेशा किसी की अच्छाई को उसके काम से देखना चाहती है. मैंने यह किताब लिखते-लिखते एक चीज जरूर गौर की, किसी भी किताब की आत्मा उसकी लेखनी नहीं बल्कि उसकी वह कहानी होती है जो आपको यह बता जाती है कि इस किताब की जरूरत क्या है?

वैसी इन पेड़ों की कहानी में सबसे ज्यादा जरूरी है इनकी जरूरत. आखिर यह पेड़ क्यों है इतना खास या क्या है इसकी जरूरत जिसकी वजह से हम इसके बारे में इतनी बात कर रहे हैं. उद्देश्य के हिसाब से यह किताब आपको पेड़ों और धरती के संवेदनशीलता के साथ जोड़ने के लिए लिखी गई है जिसकी अच्छाई ही उसकी कहानी है.

कदंब का पेड़ पृथ्वी पर कार्बन साइकिल को संतुलित करने में सहायक के तौर पर काम करता है. अच्छा अब सवाल यह है कि आखिर यह कैसे संतुलित करता है. इसका जवाब बस एक ही है, सरल भी और उपयोगी भी. कदंब के पेड़ की लंबाई बहुत तेज़ी से बढ़ती है, जिसकी वजह से यह अन्य पेड़ों की तुलना में ज़्यादा कार्बन डाइआक्साइड ऐब्सॉर्ब करता है, उसके बदले में उसी मात्रा में ऑक्सिजन प्रकृति में छोड़ता है. यह सारे पेड़ों का फंडा होता है. जो पेड़ बहुत तेज़ी से बढ़ता है, जिसकी लंबाई ज़्यादा होती है, उसके बढ़ने के वक्त उसकी आदत होती है ज़्यादा कार्बन डाइआक्साइड ऐब्सॉर्ब करना और उसी मात्रा में ज्यादा ऑक्सिजन छोड़ना. यह प्रक्रिया या प्रोसेस सिर्फ वायुमंडल को ही नहीं शुद्ध करती है बल्कि ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन की गति को भी धीमी करती है. कदंब के पेड़ की आस-पास की हवा नमी-युक्त और ठंडी रहती है जिसकी वजह से मौसम में साकरात्मकता बनी रहती है.

इसकी दूसरी सबसे बड़ी खासियत है इसकी जैव विविधता:

कदंब का पेड़ अपनी ओर एक छोटा सा माइक्रो-एको सिस्टम तैयार करता है. इसकी छायादायर विशेषता, इसके फूलों की महक, और उनके

मधुर रस से छोटे-मोटे कीड़े, पक्षी, मधुमक्खियाँ और छोटे जीव-जन्तु बहुत तेजी से आकर्षित होते हैं. इसके फूल मधुमक्खियों के लिए प्रमुख पराग स्रोत होते हैं जिससे शहद उत्पादन को बल मिलता है. इसकी जड़ों के पास **केंचुए, फफूंद और लाभकारी बैक्टीरिया** भी पनपते हैं, जो मिट्टी को उपजाऊ बनाते हैं. पत्तों से गिरने वाला कचरा (leaf litter) मिट्टी में **प्राकृतिक खाद** का काम करता है.

कदंब के पेड़ की मिट्टी और उसके जड़ बहुत गहरे होते हैं जोकि मिट्टी को पकड़ के रखते हैं. गहरी जड़ मिट्टी को पकड़ने में बहुत मदद करता है. बारिश से मिट्टी का कटाव होता है लेकिन इसकी वजह से मिट्टी का कटाव रोका जा सकता है. खासकर पहाड़ी क्षेत्रों, नदी किनारे, खेतों की मेड़ों और सड़क किनारे इसे लगाने से **जल प्रवाह धीमा होता है**, और भूजल स्तर भी संतुलित रहता है.

यह पेड़ लोगों की मदद तो करता ही है लेकिन उसके साथ ही इस पेड़ में औषधीय गुड़ बहुत सारे हैं. या ऐसे भी कहा जा सकता है कि यह पेड़ अपने औषधीय गुणों से भरपूर है. कदंब की छाल, पत्तियां और इसके फूल प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्यती-आयुर्वेद में कई रोगों के उपचार के लिए उपयोग में आया करती थी.

कदंब की छाल में एंटी-बैक्टिरीअल गुण होते हैं जोकि त्वचा रोग, घाव भरने और बुखार में काम आती है. इसी पेड़ की पत्तियां दस्त, उलटी, पेट दर्द और जलन के उपयोग में आती है. इनके अर्क का उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी किया जाता है. इस पेड़ के फूल और फल का प्रयोग वात और पित्त दोष को संतुलित करने के लिए पारंपरिक औषधियों में प्रयोग किया जाता है.

अगर इस पेड़ की विशेषताओं को मुझे एक लाइन में समेटना हो तो मैं यह मान सकता हूँ कि यह पेड़ सिर्फ एक पेड़ के रूप में आपकी मदद नहीं करेगा बल्कि इसमें औषधीय विशेषताएं ही इसे बहुमुखी प्रतिभा का धनी बनाती है. यह पेड़ न केवल जीवनदायक है, बल्कि **स्वास्थ्य रक्षक भी है**, जो ग्रामीण भारत में अभी भी घरेलू उपचार के रूप में जीवित है.

कदंब के पेड़ की विशेषताएं हमारे संस्कृति की विरासत के तौर पर जुड़ी हुई हैं. एक ऐसी विरासत, जिसे हम लेकर चले न चले लेकिन यह पेड़ जरूर लेकर चलेंगे. वृक्षों के प्रति सम्मान और सःअस्तित्व का भाव भारतीय संस्कृति की सबसे खास बात है. जब बच्चे कदंब के छाँव मे खेलते हैं, जब गाँव की महिलाएं कदंब के पेड़ के नीचे झूला झूलती हैं, उस वक्त यह वृक्ष सिर्फ ऑक्सिजन नहीं देता है बल्कि इन लोगों को उस वक्त को, उस जगह को जीवन की कहानियाँ, नए रिश्ते और स्मृतियाँ भी देता है.

अगर माना जाए तो कदंब वह वृक्ष है जो धरती की साँसों को थामे बैठा हुआ है. वह हवा को शुद्ध करता है, जीव-जन्तु को आश्रय देता है, पानी और मिट्टी को सँजोता है, और आम इंसान को बीमारियों से लड़ने में मदद भी करता है और शक्ति भी देता है. यह उन किस्सों का सारांश है जिसे ज़्यादातर समय नहीं दिया जाता है. लोग इन सब पर ध्यान नहीं देते हैं. अगर आप पूछे कि इन कहानियों की जरूरत क्या है? इस किताब की जरूरत क्या है?

यह किताब इन सवालों का ही जवाब है, एक ऐसा जवाब जो हम सबके जीवन स्मृति में हमेशा बना रहेगा, जिसे कभी कोई मिटा नहीं सकता है, जिसके इतर कोई सोच नहीं पाएगा. यह लिखी हुई कहानियाँ, इन पेड़ों के किस्से हमेशा आपको उन कहानियों में ले जाएंगे जिससे कभी लोग ज़िंदगी जीते थे, जिसके बिना शायद ही लोग जिंदा रह पाएंगे.

प्रेम रस का भाव है यह कदंब का पेड़

जीवन के अनमोल रास्तों पर प्रेम एक अनोखा डेस्टिनेशन है. एक ऐसा स्टेशन है जिसे बिना पार किए कोई नहीं आगे बढ़ पाता है. प्रेम एक भाव नहीं बल्कि अपने आप में एक ज़िंदगी है जिसकी कहानी नहीं दास्तां होती है. यह दास्तां आदमी के साथ ही आगे बढ़ती चली जाती है. यह भाव कभी खत्म नहीं हो पाता है न कभी पीछे हट पाता है.

आदमी के जीवन में सबसे ज्यादा जरूरी है ‘रस’. यह रस कभी प्रेम के होते हैं, कभी करुणा के होते हैं लेकिन इनका होना जरूरी भी है और लाज़मी भी, बिना इनके जीवन के किस्से अधूरे रह जाते हैं. कदंब का पेड़

जुड़ा है प्रेम रस से. कदंब को हमेशा लोग पहचानते हैं भगवान कृष्ण से. लेकिन अक्सर लोग यह नहीं पहचान पाते हैं कि आखिर भगवान कृष्ण ने इस पेड़ के साथ ऐसा क्या किया, या ऐसा उनकी कहानियों मे क्या था जो इसे इतना चर्चित बना देता है.

भारत में अध्यात्म, मिथक और किंवदंतियाँ प्रकृति की जड़ों से जुड़ी हुई हैं. कदंब का पेड़ उसी जगह का एक निवासी है जो जीवन भर से वहीं खड़ा है. यह पेड़ साक्षी है उस प्यार का, उस भक्ति का, उस शिद्दत का, उस प्यार का जो कभी भगवानों में हुआ करती थी. कदंब के पेड़ का वैज्ञानिक नाम है 'नियोलामार्किया कदंबा'है . यह पेड़ों इनकी दुनिया का एक चमत्कार ही नहीं बल्कि किंवदंती है जिसने भारतीय पौराणिक कथाओं, इतिहास और पर्यावरण विरासत के इतिहास में अपना स्थान पाया है.

यह लव स्टोरी कदंब के पेड़ की नहीं है बल्कि यह एक कहानी है जिसे बहुत ध्यान से आपको पढ़ना पड़ेगा ताकि आपको यह पता चल सके कि यह कहानी किसकी है और किस वजह से इस कहानी का जिक्र इस किताब में है. कहानी की शुरुआत घने जंगलों से शुरू होती है जहां पर यह कदंब का पेड़ की की छाँव मे सब बैठ करते थे. एक सुंदर हरा भरा पेड़, जिसके सुंदर गोल फूल की एक प्यारी सी महक लेकर आगे बढ़ते चला जा रहा है. या नारंगी रंग के सुंदर से फूल ही थे जो उस पूरे जंगल में अलग से दिख रहे थे. अगर सोचे तो उस दृश्य को कुछ ऐसे देखा जा सकता है, वह दिव्य छत्र जिसके नीचे प्रेमियों को सांत्वना और कवियों को प्रेरणा मिलती थी.

एक अधूरी प्रेम कहानी की शुरुआत इसी पेड़ के नीचे शुरू हुई थी. कदंब के पेड़ को हिन्दू पौराणिक कथाओं में भगवान कृष्ण और उनकी प्रेमिका राधा के मूक विश्वासपात्र के रूप में सबसे प्रसिद्ध स्थान मिला है. उनका प्रेम समय से परे था, एक ऐसी प्रेम कहानी, जो सिर्फ एक दिव्य सार के लिए ही नहीं बल्कि अपनी सांसारिक मूर्त सुंदरता के लिए भी मनाया जाता है. राधा और कृष्ण, एक शाश्वत प्रेमी, ने अपने प्रेम क्रीड़ा के लिए कदंब की मेहमाननवाज़ी और मीठी-सुगंधित छाया को चुना.

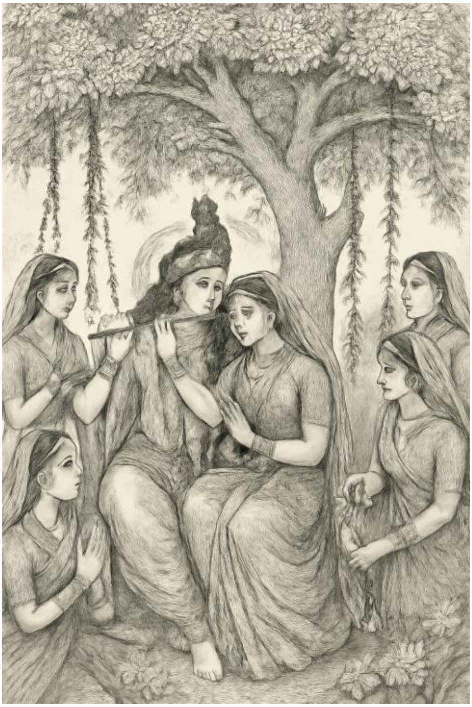

इस प्रेम कहानी ने हिन्दू पौराणिक कथाओं में बहुत वाहवाही लूटी, इतना ही नहीं बल्कि भगवान कृष्ण की ज़िंदगी की कहानी इसी पेड़ से शुरू होती है. उस नटखट कृष्ण से आप सब परिचित होंगे लेकिन उसी कृष्ण की इस प्रेम कहानी ने आज भी लोगों को प्यार का असली मतलब समझाया है. प्यार करने का तरीका, उस तरीके में शिद्दत का भाव और प्यार का संगम आता है भगवान कृष्ण की प्रेम कहानी से.

उन अनोखे पत्तों के नीचे, कृष्ण और राधा अपने प्यार के पलों का आनंद लिया करते थे. पेड़ की शाखाएं उनके दिलों की धड़कनों में झूमा करती थी. कदंब के पेड़ ने उनकी प्रेम कहानी में जादू का स्पर्श जोड़ा, इसके यह नाजुक फूल उनके प्यार के भरोसे की गवाही दिया करती थी. एक लेखक के तौर पर जब मैं किताब के इस पन्ने को लिखता हूँ, मेरी खुद के रोएं खड़े हो जाते हैं. यह प्रेम कहानी नहीं बल्कि असली प्रेमी के दिल की सच्चाई है. इसे अनकही दास्तां भी नहीं कहा जा सकता है लेकिन हाँ इस कहानी

से दो प्रेमी के जोड़ों के बीच में होने वाले प्रेम की शिद्दत का भरोसा लिया जा सकता है.

इस प्रेम कहानी के इतर कदंब के पेड़ की कहानी का एक बड़ा और स्थापित इतिहास भी है. पर्यावरण और उसकी रियासत में कदंब के पेड़ की कहानी बहुत मशहूर है. कदंब का पेड़ देश की समृद्ध जैव विविधता का अभिन्न अंग है. इसकी विस्तृत छतरी पक्षियों, कीड़ों और जानवरों की कई प्रजातियों को छाया और आश्रय प्रदान करती है.

कदंब के पेड़ के नारंगी रंग के फूल गोलाकार गुच्छों में सजे होते हैं. यह न केवल आंखों के लिए एक सुखद अनुभव हैं, बल्कि तितलियों और मधुमक्खियों सहित विभिन्न परागणकों के लिए अमृत का स्रोत भी हैं. इसके हरे-भरे पत्ते नैचुरल वायु शोधक के रूप में कार्य करते हैं, जो प्रदूषकों को छानते हैं और पर्यावरण को ऑक्सीजन प्रदान करते हैं.

लेकिन मुझे जो सबसे अच्छी चीज़ इस पेड़ की समझ में आई, वह है इसकी अनुकूलन क्षमता. यह विशेषता इस पेड़ की सबसे उल्लेखनीय चीज़ है. यह भारत के उपजाऊ मैदानों से लेकर पश्चिमी घाट की धुंध भरी पहाड़ियों तक, विभिन्न पारिस्थितिक क्षेत्रों में पनपता है. विभिन्न प्रकार की मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों में उगने की इसकी क्षमता इसे पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करने में लचीलेपन का प्रतीक बनाती है. यही है इस पेड़ की सबसे बड़ी खासियत, जो इसे सबसे अनोखा और सबसे अलग बनाती है. कदंब के पेड़ की सबसे बड़ी विशेषता यही है, कहानियाँ पेड़ों की सुंदरता बढ़ाती हैं लेकिन यह विशेषता ही है जो इन पेड़ों को सबसे प्रिय बनाती हैं.

हम एक ऐसे युग में जी रहे हैं जब पर्यावरण संरक्षण एक अहम मुद्दा बन चुका है. इसी युग में सबसे ज्यादा जरूरी है कदंब के पेड़ को बचाना. कदंब वृक्ष हमारी प्राकृतिक विरासत की रक्षा करने की आवश्यकता की मार्मिक याद दिलाता है. राधा और कृष्ण की कहानियों में इसका समावेश न केवल एक प्यार का अलंकरण है, बल्कि प्रकृति और मानव अस्तित्व के बीच गहरे संबंध का प्रमाण भी है.

कदंब वृक्ष की विरासत को संरक्षित करना न केवल प्रेम और भक्ति के प्रतीक का सम्मान करना है, बल्कि भारत के पारिस्थितिकी तंत्र का एक

महत्वपूर्ण घटक भी है. इस अनोखे और अनूठे वृक्ष की रक्षा और प्रचार-प्रसार के प्रयास को और आगे बढ़ाना है जिससे आने वाली .पीढ़ियाँ इनके महत्व को समझ पाए.

जब हम कदंब की शाखाओं के नीचे पनपी उस शाश्वत प्रेम कहानी को देखते हैं, तो हमें याद आता है कि प्रकृति के साथ हमारा रिश्ता हमारी सांस्कृतिक और पर्यावरणीय विरासत का एक अभिन्न अंग है. जिस तरह राधा और कृष्ण ने इसकी छाया में प्रेम और सुकून पाया, उसी तरह हम भी कदंब वृक्ष की सुंदरता और लचीलेपन से प्रेरणा पाएं और अपनी प्राकृतिक दुनिया के ताने-बाने में इसकी निरंतर उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए अथक प्रयास करें.

इसकी भव्यता और दिव्यता से प्रेरित होने वाले हर एक आदमी ने यह कविता जरूर पढ़ी होगी. यह कविता अपने आप में इस पेड़ की कहानी का एक मार्मिक प्रदर्शन है.

यह कदंब का पेड़ अगर माँ होता यमुना तीरे
मैं भी उस पर बैठ कन्हैया बनता धीरे-धीरे

ले देतीं यदि मुझे बांसुरी तुम दो पैसे वाली
किसी तरह नीची हो जाती यह कदंब की डाली

तुम्हें नहीं कुछ कहता पर मैं चुपके-चुपके आता
उस नीची डाली से अम्मा ऊँचे पर चढ़ जाता

वहीं बैठ फिर बड़े मजे से मैं बांसुरी बजाता
अम्मा-अम्मा कह वंशी के स्वर में तुम्हें बुलाता

बहुत बुलाने पर भी माँ जब नहीं उतर कर आता
माँ, तब माँ का हृदय तुम्हारा बहुत विकल हो जाता

तुम आँचल फैला कर अम्मां वहीं पेड़ के नीचे
ईश्वर से कुछ विनती करतीं बैठी आँखें मीचे

तुम्हें ध्यान में लगी देख मैं धीरे-धीरे आता
और तुम्हारे फैले आँचल के नीचे छिप जाता

तुम घबरा कर आँख खोलतीं, पर माँ खुश हो जाती
जब अपने मुन्ना राजा को गोदी में ही पाती

इसी तरह कुछ खेला करते हम-तुम धीरे-धीरे
यह कदंब का पेड़ अगर माँ होता यमुना तीरे

सुभद्रा कुमारी चौहान की यह कविता आपको कदंब के पेड़ का ऐसा वर्णन देगी, जिसे आप चाह के भी नहीं सोच पाते. कदंब के पेड़ के बारे में एक बच्चे के मुँह से सुनना बहुत ही अच्छा लगता है. एक विशिष्ट संदेश, जो इस कविता में मिलता है, उसका संस्मरण हम भगवान कृष्ण और इनके इस खास दोस्त कदंब के पेड़ से मिल सकता है.

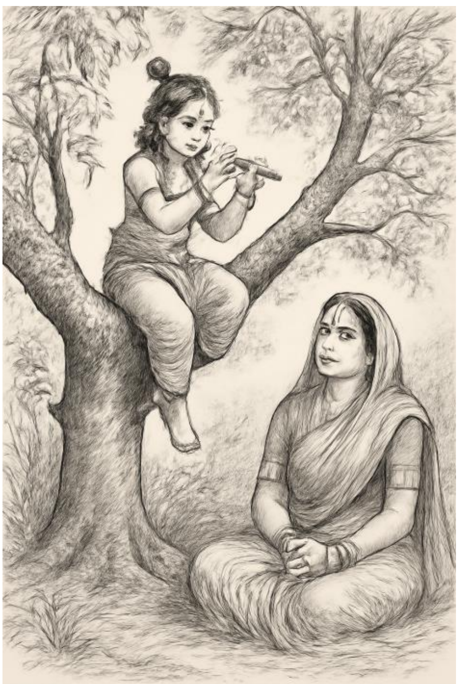

कर्नाटक के राजा और कदंब का साम्राज्य

कदंब का पेड़ बस एक पेड़ ही नहीं बल्कि एक साम्राज्य भी है. शायद दक्षिण भारत का सबसे बड़ा और सबसे पहला साम्राज्य. "कदंब राजवंश" को ही कदंब के पेड़ ने अपना नाम दिया था, जिसकी राजधानी 'बनवासी' थी. यह साम्राज्य कर्नाटक का पहला शासक साम्राज्य था. वसंत उत्सव, 'कदंबोत्सव' हर साल बनवासी में कर्नाटक सरकार द्वारा कदंब साम्राज्य के सम्मान में मनाया जाता है.

एक और रोचक तथ्य यह है कि 'कदंब' फूल अथमल्लिक राज्य का प्रतीक था, जो भारत की एक पूर्ववर्ती रियासत थी, अब ओडिशा का हिस्सा है. औषधीय गुण से भरपूर यह पेड़ हमेशा से सुंदर सजावट का प्रतीक रहा है. भारतीय डाक विभाग ने इस तथ्य को विरासत के तौर पर रखने के लिए डाक टिकट भी जारी किया है.

सिर्फ कृष्ण ही नहीं बल्कि माता दुर्गा को भी बहुत पसंद था कदंब का पेड़. मदुरई के मीनाक्षी मंदिर में इस पेड़ को आज भी सजा कर रखा गया है जिसकी पूजा करने के लिए लोग दूर-दूर से आते हैं. ऐसा लोग भी कहते हैं और माना भी जाता है कि यह पेड़ का इतिहास हर के चीज के साथ जुड़ा हुआ है चाहे वो जैसा भी हो. कुछ इन्हीं मान्यताओं के साथ आगे बढ़ते हैं कदंब के पेड़ की विरासत की ओर. एक ऐसी विरासत जिसका लेखा-जोखा आपको इस किताब के हर एक पन्ने में पढ़ने को मिलेगा.

लोक-गीत और लोक-सांकृति का प्रतीक है कदंब

ब्रज भूमि के कण-कण में बसते हैं भगवान कृष्ण. ब्रज क्षेत्र में कदंब के पेड़ का सबसे आध्यात्मिक और प्रेममय चित्रण मिलता है. यह वृक्ष राधा-कृष्ण लीला का सजीव गवाह माना जाता है. कृष्ण लीला के चित्रण और उसका अनुवाद हर जगह आपको मिलेगा. ऐसी मान्यता है कि बालकृष्ण कदंब के पेड़ पर चढ़कर बाँसुरी बजाया करते थे. राधा-कृष्ण का असीम प्यार और उनका अटूट संगम आपको कदंब के पेड़ की कहानियों से मिलेगा या अगर ऐसे कहें तो राधा-कृष्ण ने इस कदंब के पेड़ में जान डाल

दी. लेकिन कृष्ण से जुड़ी कहानियों में सिर्फ राधा ही नहीं थी बल्कि उनके कहानियों में कालिया नाग भी हुआ करता था.

कालिया नाग मर्दन और श्री कृष्ण से भी जुड़ी एक कहानी है जिसका विवरण बहुत ही रोचक है. **श्रीमद्भागवत पुराण** के दशम स्कंध में वर्णित यह कथा न केवल विषहरण की लीला है, बल्कि कदंब वृक्ष की उपस्थिति इस पूरी घटना को आध्यात्मिक गहराई देती है. आइए आपको यह कहानी बहुत ही संक्षेप में बताता हूँ.

यमुना नदी के कालिन्द क्षेत्र में एक भीषण विषैला नाग "कालिया" अपने पूरे परिवार के साथ रहा करता था. उसका जहर इतना भयानक था कि उसके ज़हर की वजह से वह नदी भी काली हो गई थी और उसके आस-पास के जीव-जन्तु भी मरने लगे थे. एक दिन भगवान कृष्ण अपने बाल-सखाओं के साथ उसी नदी के तट पर खेलने पहुंचे. उनकी गेंद खेलते वक्त नदी में चली गई. जब कृष्ण वह गेंद निकालने नदी के अंदर जाने लगे, तब उनके दोस्तों ने उन्हें रोक दिया.

उनके दोस्तों ने उन्हें रोका और उन्हें बताया कि इस नदी के अंदर कालिया नाग रहता है. लेकिन अब इन बातों का क्या फायदा, यह बालकृष्ण थे. इन्होंने अपने मन में तय कर लिया था कि गेंद तो लानी ही है. बिना किसी की बात सुने वह नदी में कुद पड़े. अब यह बात पूरे गाँव में फैल गई जिससे पूरा गाँव और माँ यशोदा नदी किनारे पहुँच गई. वहाँ कालिया नाग ने भगवान कृष्ण को अपना शिकार बनाने की कोशिश की थी लेकिन लेकिन वह ऐसा कर नहीं पाया. पूरा गाँव तब हैरान हुआ जब उन्होंने यह देखा की भगवान कृष्ण ने ही उस विषैले नाग को अपने वश मे कर लिया था.

भगवान कृष्ण ने उस कालिया नाग को हराने के बाद उसे ब्रज क्षत्रे और यमुना नदी छोड़कर जाने का आदेश दिया. मान्यताओं के अनुसार भगवान कृष्ण ने उस नाग को यह भी कहा था कि जाते वक्त तुम पीछे मुड़ कर मत देखना नहीं तो तुम पत्थर के हो जाओगे. लेकिन कालिया नाग भी बहुत ही स्वाभिमानी था, वह वापस तो जाने लगा लेकिन कुछ दूर आगे जाते ही उसने पीछे मुड़ कर देखा और वहीं पर पत्थर का बनकर रह गया.

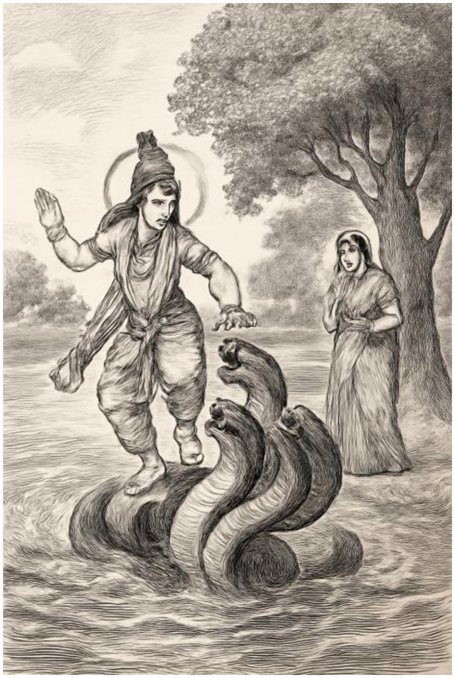

अब आप सोच रहे होंगे इस किताब का इस कहानी से क्या लेना-देना है. यह जो हुआ, इन सबका प्रमुख साक्षी यही कदंब का पेड़ था. कदंब का पेड़ उस साहर का आधार बना जहां से श्री कृष्ण ने यह संकल्प लिया कि चाहे कुछ भी हो जाए वह इस नदी को कालिया नाग मर्दन मुक्त करके ही मानेंगे. कुछ वैष्णव संप्रदायों में यह भी कहा जाता है कि कदंब वृक्ष **कृष्ण का भक्त** था — और वह जानता था कि उस पर चढ़कर भगवान एक पवित्र कार्य करने जा रहे हैं. इस वृक्ष को **"नीलकंठ के बाद दूसरा विषहरण साक्षी"** माना जाता है — नीलकंठ ने विष पिया और कदंब ने विषम जल में उतरते प्रभु को सहारा दिया.

प्रेम संगीत और ऋतु का साक्षी है या कदंब का पेड़

ब्रज की संस्कृति में रासलीला केवल नृत्य नहीं है — यह **प्रेम, समर्पण और आत्मा के ईश्वर से मिलन** की सबसे सुंदर प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति

है. और कदंब वृक्ष इसमें एक **स्थल, साक्षी और सहयोगी** की तरह उपस्थित होता है.

रासलीला और कदंब का मिश्रण

कदंब के पेड़ और रासलीला का एक बहुत अनोखा संबंध है. यस "रास" शरद पूर्णिमा की रात, चंद्रमा की शीतल रोशनी में होता है. यह तब होता है जब कृष्ण बाँसुरी बजाते हैं और गोपियाँ उनके संग नृत्य करती हैं. लोककथाओं में ऐसा वर्णन है कि कृष्ण हमेशा कदंब के पेड़ के नीचे ही बाँसुरी बजाया करते थे. कृष्ण जब बाँसुरी बजाते हैं और गोपियाँ उनके मधुर तान में झूमती हैं तब इस कार्य को रासमण्डल कहते हैं. कृष्ण हमेशा से चंचल थे, उनके झूले हमेशा कदंब की डाल पर टंगे हुए रहते थे.

अच्छा बस इतना ही नहीं बल्कि कई लोकचित्रों में कदंब के पेड़ का वर्णन हमेशा इन गोल फूलों से हुआ करता था. कई चित्रकला हैं जिसमें कदंब के पेड़ की शाखाएं इस्तेमाल होती हैं.

यूँ ही कहानियों में नहीं बसा हुआ हूँ मैं, मेरे साथ जुड़ी हैं लोककथाएं, मेरे साथ जुड़ी है लोकचित्रकला और मेरे अंदर वो बात है जो नहीं कर पाता है मुझे किसी से अलग.

कदंब के पेड़ की कहानी का सारांश बहुत ही अनमोल है. इसकी कहानी जीविका से जुड़ी हुई है. अपनी कहानियों से ही यह पेड़ लोगों को जीने का तरीका सिखा देता है. आज भी कदंब के पेड़ लोगों के एक त्योहार के रूप में सजा हुआ है जिसका जश्न बहुत ही धूम-धाम से मनाया जाता है.

कदंब और लोकपर्व

कदंब का पेड़ समाज के बहुतायत लोगों के बीच फेमस है. इसे लोग बस देखने के लिए नहीं बल्कि इसकी पूजा करने के लिए भी लगाते हैं. भारत देश बहुत से विभिन्न त्योहारों का समूह है, एक ऐसा समूह जिसकी आदत सबको है और मानना भी सबको है.

बिहार और झारखंड भारत का एक अभिन्न हिस्सा है. कई तरीकों, विशेषताएं समेटे यह दो प्रदेश हमेशा से कदंब के पेड़ के प्रति बहुत ही

सजीव रहा है. बिहार और झारखंड में कदंब सप्तमी मनाई जाती है, जिसमें महिलाएं कदंब के पेड़ की पूजा कर अपने परिवार के समृद्धि की कामना करती है.

वही देश के दक्षिण हिस्से कर्नाटक मे कदंबउत्सव भी बहुत जश्न से मनाया जाता है. कदंबउत्सव हर वर्ष का सांस्कृतिक महोत्सव है जो उत्तर कर्नाटक और उत्तर कन्नड़ के बनवासी जिलों में मनाया जाता है. यह वही जगह है जो कदंब वंश की पहली राजधानी थी. आमतौर पर यह उत्सव फरवरी या मार्च के महीने में मनाया जाता है. एक छोटे से संक्षेप में कदंब राजवंश के बारे में जान लीजिए. कदंब राजवंश दक्षिण भारत का पहला स्थानीय हिन्दू राजवंश था जिसने 4वीं सदी ईस्वी में सत्ता संभाली थी. इस राजवंश की स्थापना मौर्यशर्मा ने की थी जिसने बाद में इस राजवंश को गोवा, कर्नाटक और उसके आस-पास के क्षेत्रों मे फैलाया.

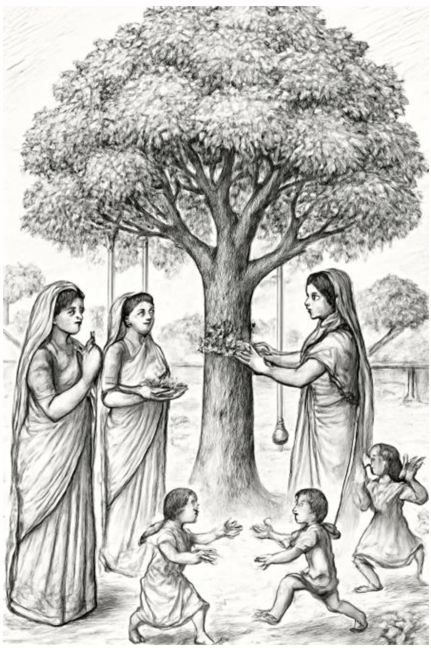

कदंबों ने कन्नड़ भाषा और साहित्य को **राजकीय मान्यता** दी और मंदिर स्थापत्य व ग्रंथमाला में योगदान दिया. बनवासी, जोकि कदंब राजवंश की

राजधानी हुआ करती थी, आज भी एक शांत सा कस्बा है जोकि तुंगा नदी के किनारे स्थित है. इसी कस्बे में है मधुकमेश्वर मंदिर जोकि कदंब वास्तुकला का प्रतीक है. कदंबउत्सव के समय इस शहर को बहुत ही बेबाकी से सजाया जाता है, विशेष रूप से **दीपों, झंडों, पारंपरिक कलाकृतियों** से यह कस्बा भर जाता है.

कदंब राजवंश में कदंब को राज वृक्ष माना गाया है, और मूल रूप से इस वृक्ष की पूजा की जाती है. पर्यावरण संरक्षण के संदेश के साथ इस वृक्ष का वृक्षारोपण भी होता है ताकि इस ऐतिहासिक वृक्ष की विरासत बची रहे. कदंबोत्सव कर्नाटक की उस ऐतिहासिक और सांस्कृतिक स्मृति को पुनर्जीवित करता है, जो कदंब वंश की भूमि, भाषा, परंपरा और प्रकृति से जुड़ी हुई है. यह उत्सव आधुनिक पीढ़ी को अपनी जड़ों से जोड़ने का सुंदर प्रयास है.

कदंब एक वृक्ष नहीं, विरासत है

कदंब का वृक्ष सिर्फ एक वनस्पति नहीं है — वह एक जीवंत परंपरा, एक मौन साक्षी, और एक सांस्कृतिक चेतना है. उसके तनों में इतिहास की सांसें बसती हैं, उसकी छाया में राधा-कृष्ण का प्रेम, ग्रामीण जीवन की लोक-धुनें, और धरती की नमी समाई होती है.

यह वह वृक्ष है, जो मिट्टी को पकड़े रहता है, और साथ ही हमारे दिलों को भी. यह वह वृक्ष है जिसकी जड़ें मिट्टी में नहीं, हमारी स्मृतियों में हैं.

कभी वह श्रीकृष्ण का साथी बना, तो कभी माँ की गोद में छुपे शरारती बालक का स्वप्न. कभी वह औषध बना, कभी आश्रय, और कभी वह कविता बन गया — सुभद्राकुमारी चौहान की कलम में, लोकगीतों के सुर में.

लेकिन अब समय है कि हम इस वृक्ष को सिर्फ कहानी में नहीं, धरती पर भी जीवित रखें.

हमें इसे सिर्फ स्मृति का नहीं, भविष्य का वृक्ष बनाना है.

कदंब की यह कहानी हमें यह सिखाती है कि अगर एक पेड़ इतना कुछ दे सकता है — तो हमें भी कुछ लौटाना चाहिए.

कदंब वृक्ष का यह अध्याय केवल एक पेड़ की कहानी नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति, पर्यावरण, इतिहास और मानवीय भावनाओं का संगम है. इसमें कदंब को प्रेम, भक्ति, पर्यावरण संरक्षण और सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्रस्तुत किया गया है. कदंब का वृक्ष कृष्ण और राधा की अमर प्रेमकथा का साक्षी है, जिसने ब्रज भूमि की रासलीला, लोकगीतों और लोककथाओं में अमिट छाप छोड़ी है. यह केवल पौराणिक कथाओं में ही नहीं, बल्कि ग्रामीण जीवन, लोकपर्वों और राजवंशों की विरासत में भी गहराई से जुड़ा है — कदंब राजवंश इसका ऐतिहासिक प्रमाण है.

इस वृक्ष की पर्यावरणीय महत्ता भी उतनी ही गहरी है. इसकी गहरी जड़ें मिट्टी को कटाव से बचाती हैं, इसकी छाया जैव विविधता को सहारा देती है, और इसकी पत्तियाँ व फूल परागण करने वाले जीवों के लिए जीवनदायी हैं. यह वायुमंडल में कार्बन चक्र को संतुलित कर ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन की गति को धीमा करता है. औषधीय दृष्टि से भी कदंब अत्यंत उपयोगी है—इसकी छाल, पत्ते और फूल अनेक बीमारियों के उपचार में काम आते हैं और आज भी ग्रामीण भारत में घरेलू उपचार के रूप में प्रयुक्त होते हैं.

कदंब की कहानी यह दर्शाती है कि एक पेड़ कैसे मात्र प्राकृतिक संसाधन न रहकर समाज और संस्कृति के ताने-बाने का हिस्सा बन सकता है. यह वृक्ष इतिहास में राजवंशों का प्रतीक, आध्यात्मिकता में प्रेम और भक्ति का आधार, और वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण का संदेशवाहक है. राधा-कृष्ण की लीलाओं से लेकर कर्नाटक के कदंबोत्सव और बिहार-झारखंड की कदंब सप्तमी तक, यह वृक्ष जीवन के अनेक रूपों में हमारे साथ है.

अंततः, यह अध्याय हमें यह सिखाता है कि कदंब केवल एक अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि भविष्य की जिम्मेदारी भी है. हमें इसे सिर्फ कहानी के पन्नों में नहीं, बल्कि धरती पर भी संजोकर रखना होगा. जिस तरह यह वृक्ष अपने प्रेम, छाया, औषधीय गुणों और सांस्कृतिक महत्ता से हमें देता आया है, उसी तरह हमें भी प्रकृति को लौटाना चाहिए. कदंब एक जीवित परंपरा

है—जिसकी जड़ें केवल मिट्टी में नहीं, बल्कि हमारी स्मृतियों और आने वाली पीढ़ियों के सपनों में हैं.

प्रेम का महुआ

इंग्लिश में The Tree of Love क्या कुछ ऐसा भी होता है या यह सिर्फ कहानियाँ हैं? अगर कहानियाँ हैं तो इन कहानियों की उपज कहाँ से होती है? क्या कोई ऐसी कहानियाँ होती हैं जो हमेशा से लोगों को प्रेरित करती आई हैं?

"उठो, जागो और तब तक मत रुको जब तक तुम अपने लक्ष्य को हासिल नहीं कर पाए". यह स्वामी विवेकानंद ने कहा था, आज उनकी बात सही लगती है. उन्होंने सही कहा था जो हार सोचता है, उसको हार ही हासिल होती है. लेकिन जो प्रत्येक दिन जीत सोचता है जो हर दिन यह समझता है, जो हर दिन अपने लक्ष्य के लिए मेहनत करता है, उसे कभी हार नहीं मिलती है.

ऐसे ही होते हैं यह पेड़, यह कभी भी ये नहीं सोचते हैं कि हम हार रहे हैं या हम हार सकते हैं और यही इनकी पहचान है, यही इनकी सबसे बड़ी अच्छाई है. जीवन कभी भी छोटे ख्वाब पर खत्म नहीं होता है, यह सपने और आदमी की खुद की सोच ही उसे उसके जीत तक लेकर जाती है.

मैंने आज की शुरुआत इससे इस वजह से की है क्योंकि आज मैं बात करूंगा मोहब्बत के पेड़ की. एक ऐसा पेड़, जिसे हर जगह प्यार के पेड़ के नाम से जाना जाता है. आदिवासी है, लेकिन सबके नज़रों के सामने जरूर रहा है. जंगल में अपनी अलग पहचान बनाए रखा है लेकिन शहर में लोग इसे जरूर पहचानते हैं. कठिन है इसका जीवन लेकिन तब भी तन के खड़े रहना इसकी विशेषता है.

इस पेड़ की छाल से लेकर इसके फल तक का उपयोग हर जगह होता आया है. इस पेड़ की मधुरता ही इसका सबसे बड़ा फल है जो इसे हमेशा सर्वोपरि रखता है. पेड़ की कहानी और उसकी शुरुआत बहुत निराली

नहीं हो सकती है लेकिन तब भी इसकी कहानी में हर वो व्यंग है, हर वो बात है जो इसे हमेशा सबसे आगे रखने मे मदद करता है.

प्यार, मधुरता और स्नेह का प्रतीक यह पेड़ हमेशा से ज्यादा आपको लुभा सकता है. इसकी कहानी में हर वो चीज है जो शायद आपके पास ना हो लेकिन यह तो सच है कि इसकी कहानी और इसकी विशेषताएं हर जगह इस्तेमाल हुई हैं. कवियों और शायरों के लिए यह पेड़ एक कहानी ही नहीं बल्कि उनके ग्रंथों के लिए उनका व्याकरण है.

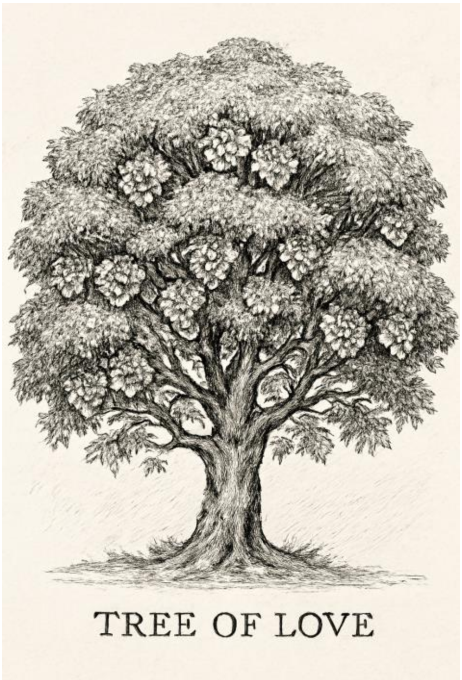

चलिए आपको इस पेड़ का एक छोटा सा इन्ट्रोडक्शन देता हूँ:

यह पेड़ भारतीय वन क्षेत्रों में पाया जाने वाला एक बहुपयोगी और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण वृक्ष है. इसकी पहचान इसकी भीनी-भीनी सुगंध वाली फूलों से होती है, जो न केवल अपने स्वाद के लिए प्रसिद्ध हैं, बल्कि पारंपरिक जीवनशैली में भी इसका खास स्थान है. इसके फूलों

से बना पेय कई जनजातीय समुदायों के लिए न केवल एक परंपरा है, बल्कि सामाजिक मेल-जोल का भी माध्यम है. यह वृक्ष गर्मी के मौसम में फूलता है और इसकी छांव ग्रामीण जीवन के लिए राहत का स्रोत होती हैं.

इस पेड़ के पत्ते, छाल, फूल और बीज — सभी किसी न किसी रूप में उपयोगी हैं. इसकी छाल औषधीय गुणों से भरपूर होती है, जिसका उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में होता आया है. इसके बीजों से तेल निकाला जाता है जो खाना पकाने और त्वचा पर लगाने के लिए उपयोग में आता है.

इस पेड़ की सबसे खास बात यह है कि यह केवल एक वनस्पति नहीं, बल्कि एक भावना है — प्रेम, सहयोग और प्रकृति के साथ सामंजस्य का प्रतीक. यह वृक्ष पीढ़ियों से ग्रामीण और आदिवासी जीवन का अभिन्न हिस्सा रहा है और आज भी लोककथाओं, गीतों और त्योहारों में इसकी महत्ता बनी हुई है.

अगर अभी भी नहीं समझ में आया तो चलिए मैं आपको बताता हूँ इस पेड़ का नाम और इसकी असल कहानी.

इस वृहद पेड़ का नाम है **"महुआ"**. भारत के अनेक भागों में ज़्यादातर मध्य भारत, झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा और उत्तरप्रदेश के वन क्षेत्रों में यह पेड़ बहुतायत में पाया जाता है. इन सब इलाकों में यह बहुत ही महत्वपूर्ण वनस्पति संपदा है. इसे स्थानीय जनजातीय जीवन का अभिन्न अंग माना जाता है. यह वृक्ष गर्म और शुष्क जलवायु में बहुत अच्छे से पनपता है तथा इसकी उम्र 60 से 100 वर्षों तक हो सकती है.

इस पेड़ का वैज्ञानिक नाम Madhuca Longifolia है. 15-20 मीटर तक की ऊंचाई का यह पेड़ मार्च और अप्रैल के महीने में फलता है. इस पेड़ की पत्तियां बड़ी और मोटी होती हैं, इसका आकार अंडकार यानी ओवल शैप का होता है. शुरुआत में इनके पत्तियों का रंग हल्का हरा होता है, बाद मे यह रंग गहरा हरा हो जाता है. आमतौर पर इनकी पत्तियां बड़ी होती हैं और इनकी पत्तियों पर मोम जैसा एक लेप लगा रहता है जो इसे कठोर और टिकाऊ बनाता है.

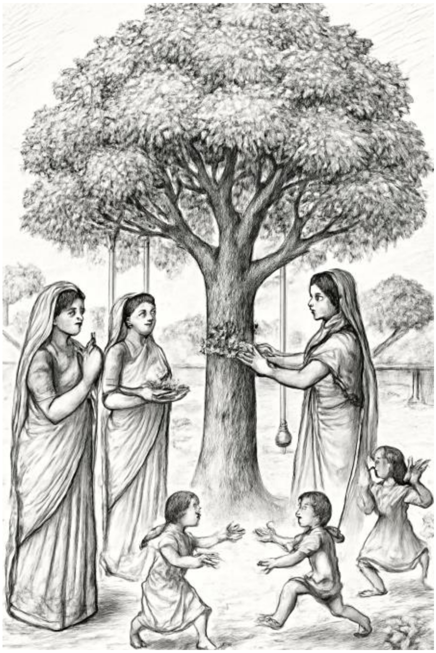

इनकी पत्तियां एक ही डंठल पर उगती है. यह वृक्ष **पर्णपाती (deciduous)** होता है, यानी एक समय के बाद इसकी पुरानी पत्तियाँ झड़ जाती हैं और नई पत्तियाँ आती हैं. महुआ की पत्तियों का विशेषकर इस्तेमाल पत्तल और दोने बनाने में होता है. पत्तल और दोने बनाने वाले कारीगर इतने बारीक होते हैं कि वह इन पत्तियों को आपस में सिल कर एकऐसा आकार देते हैं, एक ऐसी कारीगरी करते हैं जिससे इन पत्तियों की पहचान और बढ़ जाती है. कई ऐसी भी जगह है जहां पर महुआ के पेड़ की पत्तियों का इस्तेमाल पशुचारे के रूप में भी होता है. ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी महुआ के पेड़ की बहुत जान-पहचान है, क्योंकि यह सिर्फ एक पेड़ नहीं बल्कि लोगों की हर आम जरूरतों में उनका साथी रहा है.

चूंकि इसे मोहब्बत का पेड़ कहा गया है तो इसके बारे में कुछ अच्छी बातें भी जान लेनी चाहिए. महुआ का पेड़ पूर्वी उत्तरप्रदेश में बेहद लोकप्रिय रहा है लेकिन कभी यह पेड़ बहुत ज्यादा लाइमलाइट में नहीं आ पाया है. ऐसे में सबसे ज्यादा जरूरी है यह कि हम इस पेड़ की उन विशेषताओं

पर ध्यान दें जिसके बारे में बहुत बातें नहीं होती हैं या उनके बारे में बहुत कहानियाँ भी प्रचालित नहीं हैं. महुआ के पेड़ की कहानी बहुत दूर से नहीं बल्कि बहुत नजदीक से बहुत दूर समझ आती है. इस पेड़ ने लोगों को दवाइयाँ दी, इस पेड़ ने लोगों को रोजगार दिया और साथ ही इस पेड़ ने लोगों को उनकी कला का प्रचलन बढ़ाने में भी मदद की.

चलिए आज मैं आपको महुआ के पेड़ की अधूरी प्रेम कहानी से रूबरू कराता हूँ. मैं एक पेड़ हूँ, गाढ़ी छाँव वाला एक पेड़, फूलों की भीनी खुशबू लिये वर्षों से इस जंगल में एक किनारे खड़ा हूँ. लोग मुझे पहचानते हैं मेरी मिठास से, मेरी अनेकों विशेषताओं से लेकिन कम ही लोग जानते हैं कि मैं प्रेम का साक्षी भी हूँ, और बहुत बार प्रेम का प्रतीक भी हूँ.

यह कहानी राजू और चम्पा की है- जो कभी ज़िंदगी मे पहली बार मेरे ही पेड़ की छाँव में मिले थे.

राजू हर सुबह नदी से पानी लाता और मेरी जड़ों मे डाल जाता चुप-चाप. मेरी जड़ों में पानी डालने में उसकी आँखों में एक अलग ही चमक रहती थी, वह चमक हमेशा किसी का इंतज़ार किया करती थी. फिर एक दिन, चम्पा आई — फूल चुनने, पत्ते तोड़ने और थोड़ी देर मेरी छांव में बैठने. उसका आँचल फूलों से भरा था, और चेहरा किसी कविता जैसा.

वह दिन था जब मैंने राजू के आँखों की चमक को दूसरे की आँखों में समाहित होते देखा. चम्पा के चेहरे पर एक छोटी सी मुस्कान थी, राजू के आँखों की चमक चम्पा की मुस्कान से मेल जरूर खा रही थी लेकिन यह एक अलग बात है कि वह दोनों पहली बार एक-दूसरे को देख रहे थे. उस दिन पहली बार मैंने उन दोनों को एक साथ हँसते देखा.

फिर तो रोज़ का सिलसिला बन गया — चम्पा मेरी छांव में गुनगुनाती, राजू दूर से देखता, और धीरे-धीरे वो भी पास आ बैठता. मेरी टहनियों पर उनके नाम खुदे हुए थे, और मेरी जड़ों के पास उनकी चूड़ियों की आवाज़ अब भी गूंजती है. यह हर रोज़ की कहानी हो गई थी, दोनों की आँखों में एक-दूसरे के प्रति प्रेम भावना उमड़ती दिख रही थी और इसी के साथ दोनों हर एक दिन एक-दूसरे के करीब आते जा रहे थे. लेकिन हर एक कहानी पूरी होती है यह जरूरी भी तो नहीं होता है....

एक दिन, सब बदल गया...

राजू नहीं आया. चम्पा ने इंतज़ार किया, फिर आँखों में आँसू लिए चली गई. मैंने देखा, उस दिन मेरे सारे फूल ज़मीन पर गिर पड़े थे — जैसे आसमान भी रो रहा हो. वीरान उस जंगल में उस दिन सभी पक्षियाँ रो रहे थे, सभी बेहाल सी तस्वीर लिए बैठे थे. ऐसा क्या हुआ होगा राजू के साथ जो वह उस दिन नहीं आया, आखिर क्यों हुआ ऐसा? हर दिन एक कश-म-कश में बिता जा रहा था लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ जिससे वह दोनों वापस जुड़ पाए.

चम्पा की आँखों में आँसु था लेकिन राजू की आँखों की चमक उसके दिल में समाहित हो चुकी थी. राजू उस दिन खून के आँसू रो रहा था लेकिन उस दिन वह उस रास्ते से अनजान था. कभी किसी ने बड़ा सही कहा है:

किसी की याद में एक फकीर उसे जरूर कहता कि तुम्हें किसी की याद रुलाएगी, इस ज़िंदगी मे इतना दम कहाँ जो सच्चे प्यार को मिटा सकें.

वो दोनों फिर कभी नहीं लौटे. लेकिन मैं अब भी खड़ा हूँ — वही पेड़, वही छांव, वही खुशबू. मेरे फूलों में आज भी उस अधूरी मुलाक़ात की मिठास है.

मैं महुआ हूँ — वो वृक्ष, जो हर प्रेमी की गवाही देता है, और हर अधूरी कहानी को अपने भीतर सहेज लेता है.

शायद इसलिए मुझे लोग **प्रेम का वृक्ष** कहते हैं...

क्योंकि मैं जानता हूँ — सच्चा प्रेम हमेशा लौटता है, कभी हवा में, कभी यादों में, कभी मेरे फूलों में.

इस कहानी पर एक छोटी सी कविता मैंने लिखी है, जो हर समय अमर रहेगी उन दोनों की यादों में जिसे इतिहास भी नहीं भूल सकता क्योंकि वह प्रेम कहानी पेड़ की टहनियों सी मजबूत भी है और हमेशा एक धरोहर की तरह खड़ी खड़ी रहेगी.

"मैं महुआ हूँ..."

छांव में मेरी पहली बार,
वो दोनों चुपचाप मिले थे.

नज़रों में हल्की सी शरम,
मन में कुछ शब्द सिले थे.

हर सुबह वो पानी लाता,
हर सांझ वो गीत सुनाती,
मेरे फूलों की महक में,
चुपके से चाह बस जाती.

टहनी पर नाम खुदे उनके,
जड़ में चूड़ियाँ छनकती थीं,
मैं खड़ा रहा एक साक्षी बन,
जहाँ प्रेम की बातें पलती थीं.

फिर एक दिन वो ना आया,
और वो आई—पर रोती थी,
उसके आँचल में फूल नहीं,
बस टूटी हुई यादें होती थीं.

उस दिन मेरे सारे फूल,
बिन मौसम झर गए थे,
मानो मेरी टहनियाँ भी,
उस बिछड़न से डर गए थे.

वो नहीं लौटे, पर हर वर्ष,
बसंत में मैं फिर से खिलता हूँ,
हर प्रेमी की तन्हा साँसों में,
मैं धीरे से झिलमिलाता हूँ.

मैं महुआ हूँ, प्रेम का वृक्ष,
कहानियाँ मेरी छाल में हैं,
कुछ पूरी, कुछ रह गई अधूरी,
पर सब सच्ची मिसाल में हैं.

यह कविता महुआ के पेड़ से जुड़ी उस कहानी का संस्मरण है जो हमेशा से ज्यादा लोगों के अंदर जिंदा रहेगी. हर एक इंसान के लिए उसकी प्रेम

कहानी बेहद अनोखी होती है और बहुत ही स्पेशल भी होती है. लेकिन ऐसी कहानियाँ जिसका अंत अधूरा हो, उन कहानियों की गवाही कोई नहीं दे पाता है. ऐसे में महुआ का पेड़ ऐसी छोटी से लेकर बड़ी कहानियों तक का संस्मरण भी देता है और उसकी गवाही में हमेशा खड़ा रहता है. महुआ का पेड़ हमेशा से लोगों की प्रेम कहानी की गवाही देता है.

महुआ के पेड़ के नीचे प्रेम की छाँव मिलती है. एक ऐसी छाँव जो प्रेम का साक्षी है, जो हर एक प्रेम कहानी की गवाही देता है. झारखंड के कई हिस्से में एक ऐसी भी लोककथा प्रचलित है जो यह कहानी बार-बार दोहराती है. एक प्रेमी और प्रेमिका हमेशा एक पुराने महुआ के पेड़ नीचे मिला करते थे. उनके परिवार ने उनकी शादी से इनकार कर दिया जिसके बाद उन दोनों ने उसी पेड़ के नीचे अपनी ज़िंदगी त्याग कर दी. जिस महुआ के पेड़ के नीचे वे मिलते थे, वहाँ आज भी वसंत में फूल झरते हैं तो उसकी महक से प्रेम जागता है. गांव के लोग आज भी कहते हैं, "महुआ प्यार का साक्षी है."

महुआ का पेड़ प्राकृतिक वैभव का प्रतीक है. इसके सुगंधित फूलों के गुच्छे, जो नाजुक बादलों की याद दिलाते हैं, मन को मोह लेते हैं और इसके प्राकृतिक आवास के आकर्षण में चार चाँद लगा देते हैं.

छत्तीसगढ़ की जनकथा महुआ के श्राप की कहानी बताता है

एक ऐसा भी समय था जब महुआ के पेड़ को काटने की मनाही थी. उस समय के एक जमींदार ने जबरदस्ती महुआ के पेड़ को काट दिया क्योंकि वह पेड़ उसके हवेली के रास्ते में आ रहा था. कहते हैं और ऐसा लोग मानते भी हैं कि उस दिन के बाद से आजतक कभी उसकी जमीन पर उपज नहीं हुई. गाँव वालों ने उस दिन के बाद से कहानी भी बना दी जिसमें उन्होंने बताया कि इस पेड़ में देव आत्मा का वास था जो प्रकृति की रक्षा करता था.

महुआ को लेकर कहानियाँ हर जगह से आती हैं. लेकीन ज़्यादातर कहानियाँ आती हैं छत्तीसगढ़ और झारखंड की तरफ से. कहानियाँ हमेशा से अनमोल भी होती है और अनुकूल भी होती है. कुछ कहानियाँ का सारांश होता है, कुछ कहानियाँ अड़बंगी तरीके से बस लिख दी जाती है या बता दी जाती है. कहानियाँ जरूरी भी होती हैं. किसी चीज के बारे में अगर जानना हो तो उससे जुड़ी उसकी कहानियों को सुनो, यह कहानियाँ आपको किसी भी चीज के हर एक पहलू के बारे में बता जाती है.

अग्नि के राख में जन्मा: महुआ

छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र में बहुत चर्चित महुआ के पेड़ से जुड़ी कई सारी अनोखी कहानियाँ हैं. महुआ का पेड़ इस क्षेत्र में आदिवासी संस्कृति और प्राकृतिक पूजा का प्रतीक है. यहां गोंड, मुरिया, हल्बा जैसी जनजातियाँ रहती हैं जो अपने पुरखों की कहानियों, जंगलों और पेड़ों को **देवत्व** का दर्जा देती हैं.

प्रलय की आग

बस्तर क्षेत्र की एक बहुत पुरानी कहानी है, और कहानी की शुरुआत धरती माता के क्रोध से शुरू होती है. एक समय की कहानी है जब धरती माता

इंसानों से बहुत गुस्साई हुई थी. ऐसा इस वजह से हुआ था क्योंकि उस समय इंसानों ने बहुत सारे पेड़ काटे, जंगलों को जलाया गया जिससे बहुत सारे देवी-देवताओं का अपमान हुआ. चारों ओर आग ही आग थी – **एक महाप्रलय**.

जंगल राख बन गया, न पक्षी बचे, न जानवर, न मनुष्य.

राख में जीवन की चिंगारी

जब सब कुछ खत्म हो गया, धरती शांत हो गई, तब एक देवता, जिसे आदिवासी लोग 'बूढ़ा देव' कहते हैं वह प्रकट हुए. **"हे धरती, अब तू फिर से जीवन पैदा कर. पर यह जीवन सीख ले — विनाश से ही निर्माण होता है."**

फिर उस राख से **एक हरा अंकुर फूटा.**

वह कोई आम अंकुर नहीं था — वह था **महुआ** का पौधा.

वह सबसे पहले उगा, सबसे पहले फूला, और उसकी महक ने फिर से धरती को जीवंत कर दिया.

महुआ के फूलों से पक्षी लौटें, उसके छाँव के नीचे जानवर आना शुरू किए, और मनुष्य ने फिर से जीवन शुरू किया. इसी वजह से महुआ को प्रलय के बाद पहला जीवन कहा जाता है.

बस्तर में आज भी कई जनजातियाँ इस मान्यता के तहत एक **"पहला फूल अनुष्ठान"** करती हैं:

- जब महुआ का पहला फूल झरता है, तो उसे **जमीन से उठाकर आग में अर्पित** किया जाता है.
- यह संकेत है कि – "हमने जीवन का पहला उपहार स्वीकार किया, और इसे देवता को लौटाया."

कुछ गाँवों में इस समय **महुआ गीत** गाए जाते हैं, जैसे:

"राख से जो आया, वह जीवन है,

महुआ तू देवों का आशीर्वाद है."

कुछ ऐसी ही मान्यताओं के साथ जुड़ी हुई हैं महुआ के पेड़ की कहानी और इन्हीं कहानियों में छुपी है इसकी विशेषता. महुआ का पेड़ सिर्फ एक पेड़ नहीं बल्कि रोजगार का एक पात्र है.

गरीबों का मेवा

महुआ के पेड़ से निकलने वाले फूल गरीबों के लिए बहुत प्रिय होते हैं. इन फूलों की मिठास से ही बनती है गरीबों के घर में खुशी. महुआ के पेड़ का फल लोगों के लिए अतिप्रिय होता है. ग्रामीण जीवन की कल्पना महुआ के पेड़ के बिना नहीं हो सकती है. ग्रामीण जीवन की कहानी और उसकी दास्तान जुड़ी रहती है महुआ से. महुआ का फल गरीबों का मेवा है. यह फल हमेशा से ज्यादा गरीबों का सप्रेमी रहा है.

महुआ के फल को गरीबों का मेवा कहना सिर्फ एक कहावत नहीं है बल्कि ग्रामीण और आदिवासी भारत के सांस्कृतिक और आर्थिक सच्चाई को दर्शाता है. महुआ का फल ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में बहुत आसानी

से मिल जाता है और इसके पोशाक तत्व के साथ इसमें औषधीय तत्व भी होते हैं. यह बेहद सुलभ तरीके से उपलब्ध हो जाता है. गरीबों के लिए यह सूखा मेवा होता है जिसे बड़े चाव से लोग खाते हैं.

आजीविका का साधन: महुआ के फूलों और बीजों को बेचकर कई परिवार अपना पेट भरते हैं. यह **कम लागत में ज़्यादा लाभ** देने वाला वन उत्पाद है.

खाद्य सुरक्षा: जब बाजार में खाने के सामान की कमी हो, तब महुआ से बना लड्डू, रोटी, हलवा, और यहाँ तक कि शराब भी पेट भरने और शरीर को गर्म रखने में सहायक होता है.

संवेदनशीलता का प्रतीक: ये फल दिखाता है कि किस तरह एक गरीब, संसाधनों के अभाव में भी **प्राकृतिक साधनों से संतुलित जीवन** जी सकता है.

ग्रामीण जीवन में बैल का प्रयोग बहुत तरीकों से होता है. ग्रामीण जीवन में लोगों के लिए बैल रखना उनके संभ्रांत होने का प्रतीक माना जाता था. बैल

का होना लोगों के लिए सबसे बड़े साधन के रूप में देखा जाता था. बैल का होना लोगों के लिए बहुत बड़ी बात हुआ करती थी, यह प्रचलन बहुत सालों से चला आया था लेकिन आधुनिकता की कहानी में बैल की जगह अब दूसरे किसी और ने ले ली है.

बैल को रखना बड़ी बात हुआ करती थी, क्योंकि इन्हें पालना और उसके साथ उनका पोषण बहुत जरूरी हुआ करता था. बैल की कीमत भले कम हो लेकिन उसका रख-रखाव बहुत महंगा हुआ करता था. बैल के लिए भी महुआ का पेड़ बहुत जरूरी था. महुआ के फल से ही इनका पोषण होता आया है. .हुआ की मिठास और उसकी खुशबू इतनी ज्यादा होती है कि 2-3 किलोमीटर के भीतर कोई महुआ का पेड़ हो, उसकी महक से पूरा गाँव चहक उठा करता था. एक महुआ के पेड़ से लोगों को यह मालूम चल जाए कि इस क्षेत्र में जन-जीवन की अच्छी सुविधा है. इनकी कुछ विशेषताओं के साथ चलता है महुआ का पेड़. इसी वजह से ऐसा कहा गया है कि महुआ के पेड़ के बिना ग्रामीण जीवन की कल्पना अधूरी है.

महुआ का पेड़ और पर्यावरण

महुआ का पेड़ ग्रामीण जीवन का चित्रकार है. महुआ की कहानी कभी पूरी नहीं हो सकती क्योंकि यह दुनिया की रीत है, हमेशा एक लेखक की कहानी अधूरी ही रह जाती है. वैसे ही महुआ भी है जिसकी कहानी कभी पूरी नहीं हो सकती है लेकिन आज भी महुआ के बारे एक ऐसा तथ्य है जिसपर बात करना बहुत ज़रूरी है. कहानियाँ बनती नहीं हैं, इन्हें बनाया जाता है.

महुआ के पेड़ की कहानी में पर्यावरण की भूमिका बहुत अहम होती है. जो भी पेड़ होते हैं, वह किसी न किसी तरह पर्यावरण के लिए प्रतिबद्ध ज़रूर होते हैं चाहे वह किसी भी तरह का पेड़ हो.

इसकी बहुपयोगिता के साथ-साथ यह जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र को भी सहेजने में योगदान देता है.

महुआ का पेड़: पर्यावरण के रक्षक

1. मिट्टी की उर्वरता बनाए रखना

महुआ के पेड़ की पत्तियाँ गिरने के बाद जब सड़ती हैं, तो वे मिट्टी में प्राकृतिक रूप से जैविक खाद बन जाती हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता और नमी बनाए रखने में मदद मिलती है.

2. जल संरक्षण में योगदान

महुआ के घने पत्ते और छाया ज़मीन को तेज़ धूप से बचाते हैं, जिससे वाष्पीकरण की दर कम होती है और भूजल स्तर बनाए रखने में मदद मिलती है. यह विशेष रूप से उन क्षेत्रों में अहम होता है जो जल संकट से जूझ रहे हैं.

3. कार्बन अवशोषण (Carbon Sequestration)

महुआ का पेड़ एक लंबी उम्र वाला वृक्ष है जो अपने जीवनकाल में बड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करता है. यह जलवायु परिवर्तन के खिलाफ लड़ाई में मददगार हो सकता है.

4. जैव विविधता को बढ़ावा

महुआ के पेड़ पर पक्षी, मधुमक्खियाँ, तितलियाँ और कई अन्य कीट रहते हैं जो परागण (pollination) में सहायता करते हैं. इसके फूल और फल अनेक जानवरों और पक्षियों के भोजन का स्रोत हैं.

5. भूमि क्षरण रोकना

महुआ की गहरी जड़ें मिट्टी को मजबूती से पकड़ती हैं जिससे कटाव नहीं होता और भूमि क्षरण की संभावना घटती है, खासकर पहाड़ी या शुष्क क्षेत्रों में.

स्थानीय पारिस्थितिकी और आदिवासी जीवन में भूमिका

- **प्राकृतिक संसाधन संरक्षण:** आदिवासी समुदाय महुआ के फूल, फल, बीज, छाल और लकड़ी का परंपरागत रूप से उपयोग करते हैं, जिससे बिना किसी रासायनिक संसाधन के जीवनयापन होता है.
- **फूलों से बनी शराब और खाद्य पदार्थों के ज़रिए जीविका:** यह न केवल जीविकोपार्जन का जरिया है, बल्कि इसके उत्पादन में किसी भी प्रकार का प्रदूषण नहीं होता.
- **पारंपरिक ज्ञान और सतत विकास:** महुआ पर आधारित जीवनशैली प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर चलती है, जो सतत विकास के आदर्श मॉडल के रूप में देखी जा सकती है.

खतरे और संरक्षण की आवश्यकता

हाल के वर्षों में महुआ के पेड़ों की संख्या में गिरावट देखी गई है — वनों की कटाई, शहरीकरण और भूमि उपयोग परिवर्तन इसके मुख्य कारण हैं. यह न केवल आदिवासी संस्कृति पर प्रहार है बल्कि पर्यावरणीय असंतुलन का संकेत भी हैं.

इसलिए जरूरी है कि:

- महुआ के वृक्षों का **संवर्धन और पुनर्वनीकरण** किया जाए.
- इसे **पर्यावरणीय योजना** में शामिल किया जाए.
- स्थानीय समुदायों को **संरक्षण का भागीदार** बनाया जाए.

महुआ का वृक्ष केवल प्रकृति की एक जैविक कृति नहीं है, यह एक जीवंत कथा है — एक ऐसी कथा जो पीढ़ियों से लोककथाओं, प्रेम कहानियों, सामाजिक संघर्षों, पर्यावरणीय चेतनाओं और सांस्कृतिक पहचान के रूप में हमारे जीवन का अभिन्न अंग रही हैं. जिस प्रकार कोई ग्रंथ केवल उसके पन्नों से नहीं बल्कि उसके अर्थों और संदर्भों से समझा जाता है, उसी प्रकार महुआ को केवल उसके फूलों और छांव से नहीं, बल्कि उसके पीछे छिपे

संवेदनात्मक, सांस्कृतिक और पारिस्थितिक ताने-बाने से समझा जा सकता है.

महुआ, प्रेम का प्रतीक है, लेकिन यह प्रेम केवल दो व्यक्तियों के मध्य भावनात्मक आकर्षण तक सीमित नहीं है — यह प्रेम है मिट्टी से, जंगल से, जनजातीय संस्कृति से, परंपराओं से, प्रकृति से और सबसे बढ़कर — अस्तित्व से. इसका प्रत्येक भाग — पत्तियाँ, फूल, फल, बीज, छाल — जीवन के किसी न किसी रूप को पोषित करता है. इसकी छांव केवल शरीर को नहीं, बल्कि आत्मा को भी शांति प्रदान करती है. इसकी मिठास केवल जीभ पर नहीं, जीवन के अनुभवों में बसती है.

पर्यावरणीय विमर्श में महुआ की भूमिका

आज जब जलवायु परिवर्तन, पारिस्थितिक असंतुलन, जैव विविधता की क्षति और जंगलों के अंधाधुंध दोहन जैसे मुद्दे मानव अस्तित्व के सामने सबसे बड़ी चुनौती बनकर खड़े हैं, तब महुआ जैसे वृक्ष हमें याद दिलाते हैं कि समाधान आधुनिक मशीनों या कृत्रिम योजनाओं में नहीं, बल्कि हमारे पारंपरिक ज्ञान और प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व में निहित है. महुआ के माध्यम से जल संरक्षण, मृदा उर्वरता, कार्बन अवशोषण और जैव विविधता की रक्षा का कार्य सहज रूप से संपन्न होता है.

यह वृक्ष प्राकृतिक आपदा के बाद जीवन के पुनर्जन्म का प्रतीक भी बनता है. छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र की कहानी में राख से उत्पन्न महुआ का पौधा यह संदेश देता है कि "विनाश के बाद भी निर्माण संभव है." यह विचार आज के समय में और अधिक प्रासंगिक हो जाता है, जब पृथ्वी पर मानव जनित विनाश अपनी चरम सीमा पर है.

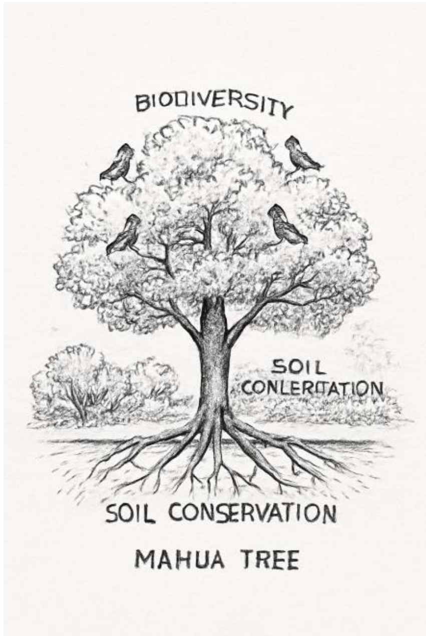

सांस्कृतिक और लोककथात्मक परतें

महुआ भारतीय जनजातीय और ग्रामीण समाज की आत्मा में बसता है. झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा और उत्तर प्रदेश के वनांचलों में यह न केवल आर्थिक आजीविका का आधार है, बल्कि लोकगीतों, त्योहारों, विवाहों, प्रेम कथाओं और देवी-देवताओं की पूजा में भी इसका स्थान अत्यंत पवित्र है.

गांवों में महुआ के नीचे प्रेमी युगल मिलते हैं, बुजुर्ग दादी-नानी लोककथाएँ सुनाती हैं, बच्चे इसके फल इकट्ठा हैं और महिलाएं इसकी पत्तियों से दोने-पत्तल बनाकर अपनी गृहस्थी चलाती हैं. यही वह वृक्ष है जिसने न जाने कितने प्रेमियों की गवाही दी है, न जाने कितनी अधूरी कहानियों को अपने भीतर समेटे रखा है, और न जाने कितने आंसुओं को अपनी जड़ों में समाहित किया है.

प्रेम और प्रतीकात्मकता

"मैं महुआ हूँ" — यह पंक्ति एक वृक्ष का आत्म-परिचय नहीं, बल्कि एक भावनात्मक उद्घोषणा है, जो प्रकृति के साथ जुड़ाव और प्रेम की उस पराकाष्ठा को दर्शाती है, जिसमें प्रतीकों से परे जाकर वृक्ष एक जीवित पात्र बन जाता है. महुआ के फूल, केवल पेय या मिठाई बनाने की सामग्री नहीं हैं, वे प्रेम की गवाही हैं, और कभी-कभी बिछड़न की भी.

राजू और चम्पा की कहानी महुआ के तले प्रेम की खिलती-टूटती यात्रा को दर्शाती है. यह कहानी न केवल साहित्यिक कल्पना है, बल्कि समाज में घटित असंख्य प्रेम प्रसंगों का प्रतीक है, जो समय, समाज और परिस्थितियों से हार गए — लेकिन महुआ ने उन्हें कभी भुलाया नहीं.

रोज़गार, जीवन और आत्मनिर्भरता

महुआ न केवल भावनाओं का केंद्र है, बल्कि यह आत्मनिर्भरता और जीविका का एक सशक्त स्रोत भी है. इसके फूलों, बीजों और पत्तियों से लाखों ग्रामीण परिवारों की आजीविका चलती है. महुआ पर आधारित लोक उद्योगों का संवर्धन 'वोकल फॉर लोकल' जैसे अभियानों का स्वाभाविक अंग हो सकता है. यह वृक्ष गरीबी से लड़ने का हथियार है, खाद्य सुरक्षा का विकल्प है, और जीवन के संकट में एक आत्मनिर्भर साथी भी.

भविष्य की ओर दृष्टि

अब जब हम सतत विकास की अवधारणा पर जोर दे रहे हैं, तो हमें महुआ जैसे वृक्षों की ओर न केवल जैविक संपदा के रूप में, बल्कि एक सांस्कृतिक उत्तराधिकारी के रूप में भी देखना होगा. महुआ के वृक्षों का कटाव केवल एक वृक्ष की हानि नहीं, बल्कि एक पूरी सभ्यता के अनुभव, एक दर्शन और एक भावनात्मक-सामाजिक ढांचे की क्षति है.

हमें महुआ को बचाने की आवश्यकता है — न केवल इसके फल, फूल या छाया के लिए, बल्कि उस संपूर्ण जीवनशैली के लिए जिसे यह पोषित करता है. यह वृक्ष हमें सिखाता है कि विनम्र रहकर, दूसरों को देते हुए

और अपने अंदर सहनशीलता और मिठास को बनाए रखते हुए भी महान बना जा सकता है.

एक जीवन-दर्शन का नाम: महुआ

महुआ वह है जो प्रेम की छाँव देता है, भूख में मेवा बनता है, ठंड में शराब बनकर गर्मी देता है, बीमारी में दवा बनता है, और कथा-कहानी में अमर चरित्र बनकर उभरता है. महुआ केवल वृक्ष नहीं, वह एक विचार है — वह विचार जो प्रकृति से जुड़ाव, सांस्कृतिक आत्म-गौरव और मानवीय संवेदनाओं का प्रतीक है.

यदि हमें अपने अस्तित्व को बचाना है, अपनी जड़ों से जुड़ना है और प्रकृति के साथ टिकाऊ संबंध बनाना है, तो हमें महुआ जैसे वृक्षों की ओर फिर से लौटना होगा — न केवल भौतिक रूप से, बल्कि भावनात्मक और वैचारिक रूप से भी.

मैं महुआ हूँ...
जिसकी शाखाओं में कहानियाँ हैं,
जिसकी छांव में स्मृतियाँ हैं,
और जिसकी जड़ों में जीवन है.

देव वृक्षः देवदार

मैं तिब्बत, अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान, अमेरिका, फ़्रांस और इटली का नाम सुनते ही आपको याद आ जाता हूँ. हालाँकि मैं विदेशी नहीं हूँ, लेकिन मेरी शाखाएँ दुनिया के लगभग हर कोने में फैली हुई हैं. भारत में मैं 1584 से रह रहा हूँ. मेरा पहला घर हिमाचल प्रदेश के एक छोटे से ज़िले में था. जैसे-जैसे लोग मुझे जानने लगे, मैं धीरे-धीरे उनके आकर्षण का केंद्र बन गया और प्रसिद्ध होता चला गया. मेरा जन्म लाहौल-स्पीति की शांत घाटियों में हुआ, और वहीं की ठंडी, पवित्र धरती से मुझे गहरा लगाव हो गया. वहाँ की ठंडी हवाओं और ऊँचे पहाड़ों के बीच मैं पला-बढ़ा और अब भी वहीं अपनी जड़ें जमाए हुए हूँ.

लोगों के विशेष अनुरोध पर मैं उत्तराखंड की हरी-भरी वादियों में भी पहुँच गया. आज भी मैं वहाँ अपनी विशालकाय शाखाएँ फैलाए खड़ा हूँ, आपके जीवन का एक अहम हिस्सा बनकर.

मैं हूँ देवदार का पेड़

एक ऐसा पेड़ जिसे देवताओं का प्रिय कहा जाता है, जिसका धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व बहुत गहरा है. मेरी लकड़ी को पवित्र माना जाता है और इसकी मजबूत और दीमक-प्रतिरोधी विशेषताओं के कारण यह आपके घरों की सजावट और निर्माण में बड़े काम की चीज़ है. शायद आपके घर में मेरी लकड़ी का इस्तेमाल दरवाजों, खिड़कियों, या सजावटी फर्नीचर के रूप में हो रहा हो, लेकिन आप शायद यह न जानते हों कि वह लकड़ी मेरी है.

अब चूँकि आप मेरे बारे में जानना चाहते हैं, तो मैं आपको अपने जीवन की कुछ खास बातें बताता हूँ. मेरा कद बहुत ऊँचा है, और मैं 40 से 60 मीटर तक लंबा हो जाता हूँ. पहाड़ों में रहने वाले हम पेड़ों के लिए ऊँचाई बहुत जरूरी है, क्योंकि सूरज की रोशनी हमें जीवित रहने के लिए चाहिए.

पहाड़ों की ढलानों पर जहाँ मैं खड़ा हूँ, वहाँ दूसरे पेड़ों के बीच ऊँचाई की होड़ होती है. हमें लंबा होना पड़ता है ताकि हम सूरज की किरणों तक पहुँच सकें और अपने भोजन का निर्माण कर सकें. अगर मैं ऊँचा नहीं हुआ, तो मेरी जड़ें कमजोर हो जाएँगी और मैं धीरे-धीरे मुरझाने लगूँगा.

यह हमारे लिए एक प्रकार की प्रतियोगिता है. जैसे आप लोग अपनी पढ़ाई और करियर के लिए मेहनत करते हैं, वैसे ही हम पेड़ों के बीच ऊँचाई पाने की दौड़ होती है. अगर आप इसे नहीं समझ पा रहे हैं, तो ज़रा सोचिए कि आपको पनीर की कोई खास डिश बनानी है, और आपने सारी सामग्री तैयार कर ली है, लेकिन आखिरी वक्त में पनीर ही नहीं मिला! मेरे लिए सूरज की रोशनी वैसे ही जरूरी है, और अगर मैं इसे नहीं पाऊँगा, तो मेरा जीवन संकट में पड़ जाएगा.

मेरी पत्तियाँ भी मेरी खास पहचान हैं. ये सुई जैसी दिखती हैं—लंबी, पतली, और नुकीली, जो मेरी पूरी संरचना को एक अलग और अनोखा रूप देती हैं. लेकिन घबराइए मत, ये पत्तियाँ आपको कभी चुभेंगी नहीं. मेरी पत्तियाँ मुझसे बहुत प्यार करती हैं, और यह मेरे अस्तित्व के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारणों में से एक हैं. उनका सुईनुमा आकार मेरे लिए ढाल का काम करता है.

क्या आप जानते हैं कि मेरी पत्तियाँ ऐसी क्यों हैं? चलिए, मैं आपको इसके पीछे का विज्ञान बताता हूँ.

मेरी पत्तियाँ लंबी और पतली होती हैं ताकि उनका सतह क्षेत्र (surface area) कम हो. इसका मतलब है कि ठंडे और शुष्क वातावरण में, मेरी पत्तियों से पानी कम उड़ता है और वे ज्यादा नमी को अपने अंदर बनाए रखती हैं. यह नमी मुझे सर्दियों के कठिन मौसम में जीवित रहने में मदद करती है. जब ठंडी हवाएँ चलती हैं या जब तापमान जमने के करीब पहुँच जाता है, तो मेरी पत्तियाँ सूखती नहीं हैं. इसके अलावा, मेरी पत्तियों पर एक हल्की मोम की परत होती है, जो ठंड से बचाने में मदद करती है. इस परत के कारण मेरी पत्तियों पर पानी या बर्फ नहीं टिकता, और वे जल्दी से सूख जाती हैं.

ठंड के मौसम में जब बर्फ गिरती है, तो मेरी पतली पत्तियों पर बर्फ ज़्यादा देर तक नहीं ठहरती. बर्फ मेरे ऊपर थोड़ी देर में ही पिघल जाती है, जिससे मेरी शाखाओं पर भारी वजन नहीं पड़ता और वे टूटने से बच जाती हैं. मेरी पत्तियों का यह सुईनुमा आकार मुझे न सिर्फ ठंड से बचाता है, बल्कि मुझे भारी बर्फबारी के दौरान भी मजबूती से खड़ा रहने में मदद करता है.

मुझे अपनी शाखाओं और पत्तियों पर गर्व है. आप सोच सकते हैं कि पहाड़ों की ऊँचाइयों पर जहाँ ठंड बेहद तेज़ होती है और हवाएँ बर्फ जैसी ठंडी होती हैं, वहाँ मैं कैसे जीवित रहता हूँ. इसका राज़ मेरे सुईनुमा पत्तों और मजबूत शाखाओं में छिपा है. मेरा कद ऊँचा होता है ताकि मैं सूरज की रोशनी को अच्छे से प्राप्त कर सकूँ और मेरी पत्तियों का आकार ऐसा होता है कि ठंड का मुझ पर असर कम से कम हो.

मेरी लकड़ी भी उतनी ही अद्‌भुत है जितनी मेरी पत्तियाँ. इसे नमी और दीमक से बचाव के लिए जाना जाता है. लोग मुझे सदियों से पवित्र मानते आए हैं और मेरी लकड़ी का इस्तेमाल मंदिरों, घरों, और अन्य धार्मिक स्थलों के निर्माण में करते हैं. इसका कारण सिर्फ मेरी दीमक-प्रतिरोधी क्षमता ही नहीं है, बल्कि मेरी लकड़ी की वह खास महक भी है, जो उसे विशेष बनाती है.

मेरी लकड़ी से बने फर्नीचर न सिर्फ सुंदर होते हैं, बल्कि लंबे समय तक चलते हैं. मेरी लकड़ी को मौसम की मार से बचाने के लिए कोई खास देखभाल की जरूरत नहीं होती, और इसलिए यह आपकी रोजमर्रा की ज़रूरतों में एक अहम हिस्सा बन गई है. चाहे वह घर के दरवाजे हों, या मंदिरों में इस्तेमाल होने वाली लकड़ी, आप मुझे हर जगह देख सकते हैं. मेरी मजबूत और टिकाऊ लकड़ी ने मुझे आपके जीवन का एक स्थायी हिस्सा बना दिया है.

तो, अगली बार जब आप मुझे देखें, मेरे इन गुणों को याद रखें—मैं सिर्फ एक पेड़ नहीं हूँ, मैं देवदार का पेड़ हूँ. मैं प्रकृति का एक अद्भुत उपहार हूँ, जो सदियों से आपके साथ खड़ा हूँ, आपके जीवन और पर्यावरण का एक अभिन्न हिस्सा बनकर.

मेरी जरूरत ही मुझे आप के लिए खास बनाती है. अब देखिए थोड़े से आकड़ें पर जब हम बात करते हैं तब हमें यह समझ आता है कि भारत मे कुल 3 ट्रिल्यन से ज्यादा पेड़ हैं. यह एक बहुत बड़ी संख्या होती है लेकिन अभी देश के लिए कम है. 21वीं सदी में हम जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, जैसी बड़ी परेशानियों से गुजर रहे हैं.

मेरी मजबूत, सुगंधित और दीमक-प्रतिरोधी लकड़ी मुझे विशेष बनाती है. मेरी पत्तियां सुई जैसी होती हैं, और मेरी ऊँचाई 40 से 60 मीटर तक पहुँच सकती है. सैकड़ों सालों तक जीवित रहने वाला मैं, हिमालय की ऊंचाइयों में पनपता हूँ, जहाँ मेरी छांव और सुगंध से पक्षी, जानवर, और इंसान सभी राहत पाते हैं.

भारत में हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, और जम्मू-कश्मीर के पहाड़ी क्षेत्रों में, मैं केवल एक पेड़ नहीं हूँ, बल्कि आपकी सांस्कृतिक धरोहर और पर्यावरण का अभिन्न हिस्सा हूँ.

लेकिन सिर्फ पत्तियों से ही नहीं...

आप सब जानते होंगे कि हमारी छाल ही हमारी उम्र बताती है, ऐसे में मेरी उम्र जानने के लिए मेरी छाल के बारे में जरूर जानिए. अक्सर लोग मुझमें और चीड़ में कन्फ्यूज़ रहते हैं. इसी वजह से आज मैं आपको अपने बारे पूरी जानकारी दूंगा.

चालिए तो कहानी और जानकारी की शुरुआत मैं खुद अपने नाम से करता हूँ. मैं फिर से आपको अपना परिचय देता हूँ: मेरा नाम देवदार है और मेरा गोत्र सेड्रस है. हिमालय में लोग मुझे देवदार के नाम से जानते हैं. मुझमें और चीड़ में फर्क करने के लिए आपको हमारी पत्तियों को गौर से देखना होगा. मेरी पत्तियां गुच्छे में ही होती हैं लेकिन वह छोटी होती हैं. मेरी पत्तियों का आकार सुई जैसा होता है. वहीं मेरा खुद का आकार शंकु जैसा होता

है. मेरी छाल चिकनी होती है लेकिन समय के साथ वह खुरदुरी हो जाती है. औसतन मेरी लंबाई 40-60 मीटर हो जाती है.

चीड़: ये मेरे दोस्त हैं, मेरे साथ ही हिमालय की वादियों में रहते हैं. मेरा नाम देवदार और मेरा गोत्र पिनस है. प्रमुख रूप से हमारी हिमालयन ब्लू पाइन बहुत फेमस है. चीड़ की भी पत्तियां पतली लंबी और सुई के आकार जितनी होती है, लेकिन इन पत्तियों के गुच्छे छोटे होते हैं. चीड़ के पेड़ की छाल मोटी और दरारें वाली होती हैं. आमतौर पर इन पेड़ों की लंबाई 35-40 मीटर तक होती हैं.

हम चूँकि बात मेरी उम्र की कर रहे थे तो वह आपको ऐसा पता लग सकती है जब आप मेरी छाल काटेंगे तो उसके ऊपर आपको कई सारे चक्र बने मिलेंगे. जितने चक्र होंगे उतनी मेरी उम्र होगी. मेरी औसतन उम्र करीब 200 साल तक होती है. जी हाँ आपने सही पढ़ा, मैं बहुत पुराना हूँ, और मैंने आपके कई पीढ़ियों को देखा है.

थोड़ा मेरी लकड़ी के बारे मे भी जानिए...

मेरी लकड़ियाँ बेहद मजबूत और दीमक-रोधी होती हैं. मेरी खुशबू और मेरी मजबूती मुझे मानव-उपयोगी बनाती है.

मेरी लकड़ियों की सबसे महत्वपूर्ण खासियत यह है कि यह लकड़ियाँ पानी के संपर्क में आकर सड़ती नहीं है और यही कारण है कि मुझे ज़्यादातर निर्माण कार्यों में इस्तेमाल किया जाता है. मेरी लकड़ियों से आपके घर में फर्निचर बनते हैं जो आपके घर की शोभा बढ़ाने में कभी पीछे नहीं हटते हैं. लकड़ी से बन सकती हर चीज मेरी मजबूती का प्रचार आपको मिल ही जाएगा.

मैं जानता हूँ आप यह सोच रहे होंगे कि अपना प्रचार करने के लिए यह बावला कुछ भी बोलता चला जा रहा है. तो आप नहीं मानेंगे, चलिए मैं आपको अपनी बातों का सबसे बड़ा साक्ष्य देता हूँ.

मेरे पेड़ की लकड़ी हिमालय के क्षेत्रों में बहुत से विशाल हिन्दू धर्म के मंदिर भी बने हैं. यह धार्मिक संरचनाएं मेरी लकड़ी की मजबूती के उल्लेखनीय उदाहरण हैं.

- **हिडिंबा देवी मंदिर मनाली (हिमाचल प्रदेश)**

  16वीं शताब्दी में बनाया गया मंदिर मेरी मजबूत लकड़ी का साक्ष्य है. 1533 में राजा बहादुर सिंह द्वारा बनवाया गया यह मंदिर पूरी तरीके से देवदार की लकड़ी से बना है. इसकी छतें शंकुधारी आकार की हैं जोकि हिमालय की वास्तुकला का प्रतीक बताया जाता है.

- **शंकराचार्य मंदिर (जम्मू-कश्मीर)**

  लगभग 370 ईस्वी में इस मंदिर को राजा गोपादित्य ने बनवाया था जिसके बाद राजा ललितादित्य ने इसका जीर्णोद्धार करवाया. इस मंदिर का निर्माण मुख्य रूप से पत्थरों से किया गया है लेकिन इसकी छत और अंदर की सजावट में देवदार की लकड़ी का इस्तेमाल किया गया है.

- **त्रिलोकीनाथ मंदिर, लाहौल और स्पीति (हिमांचल प्रदेश)**

  हिमाचल प्रदेश के लाहौल और स्पीति में स्थित यह मंदिर मेरे जन्मस्थान पर बनवाया गया था. इसके निर्माणकर्ता हमेशा से अज्ञात रहे हैं लेकिन कयास ऐसा लगाया जाता है कि यह मंदिर 10-11वीं शताब्दी में बनवाया गया था.

  इस मंदिर को प्रमुख रूप से हिन्दू और बुद्ध धर्म की परंपराओं का संगम माना जाता है. मंदिर के अंदरूनी हिस्से में देवदार की लकड़ियों का खास इस्तेमाल किया गया है.

- **नगर शैली के मंदिर (उत्तराखंड)**

  इस धाम के मंदिरों को कत्यूरी के राजाओं ने 7वीं शताब्दी से लेकर 12वीं शताब्दी तक बनवाया था. इसी धाम के मंदिरों में बेहद विख्यात रूप से देवदार की लकड़ियों का इस्तेमाल किया गया है. यह लकड़ियाँ न तो केवल मजबूती प्रदान करती हैं बल्कि उस मंदिर की प्राकृतिक सौंदर्यता भी बढ़ाती हैं.

- **वशिष्ठ मंदिर, कुल्लू (हिमाचल प्रदेश):**

  यह मंदिर का निर्माण ऋषि वशिष्ठ के सम्मान में हुआ था. ऐसा भी माना जाता है कि उस समय के राजाओं ने इस मंदिर का निर्माण कराया था. यह मंदिर गरम पानी के झरने के पास है और यह पूरा मंदिर देवदार की लकड़ी से बनाया गया है. इसकी वास्तुकला और इसके निर्माण में इस्तेमाल हुई यह लकड़ियाँ इसे विशेष बनाती है.

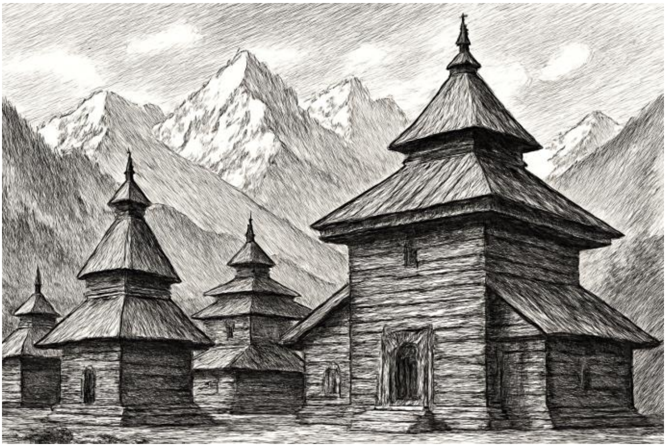

मेरी छाल और मेरा जीवन

मेरे प्रभावशाली रूपों के बारे में आप समझ तो चुकें ही होंगे, लेकिन मेरी असल कहानी आपको मेरी छाल की जानकारी से पता चलेगी. मेरी छाल रचनात्मक और रासायनिक गुणों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है. मेरी छाल पर्यावरण, जीवविज्ञान और मानव उपयोग के लिए कई तरीकों से महत्वपूर्ण है. मेरी छाल की संरचना की जानकारी मेरा पहला केंद्र बिन्दु है. मेरी छाल का रंग आमतौर पर गहरा भूरा या भूरा लाल होता है. मेरी छाल मोटी, खुरदुरी और बहुत सारे दरारों वाली होती है. मेरी छाल समय के साथ मोटी होती जाती है. हमारी प्रकृति में होने वाली अलग-अलग परिस्थितियों से मेरी छाल मेरी सुरक्षा करती है. करीब 2 से 5 सेन्टमीटर की मेरी छाल हर परिस्थिति में रक्षा करने को तैयार रहती है.

अच्छा सिर्फ इतना ही नहीं बल्कि मेरी छाल के अंदर एंटी-फंगल और एंटी-बैकटीरियल गुण होते हैं, जो पेड़ को फंगल और कीड़ों से बचाने में मदद करती है. मेरी छाल की मोटाई मुझे अत्यधिक ठंड, बारिश और तेज हवाओं से बचाती है और मुझे कई परत में सुरक्षा प्रदान करती है. अच्छा पहाड़ों में हमें खाने के लिए नमी की जरूरत बहुत पड़ती है जिसकी वजह से हमारी छाल मोटी होती है और नमी बनाई रखती है जिससे हम भी सुरक्षित रहते हैं और हमाराखाना भी सुरक्षित रहता है.

मेरे रसायनिक गुण मुझे सभी पेड़ों से अलग बनाते हैं. मेरे बारे में बहुत सारी बातें होती रहती हैं लेकिन अगर मैं आपको सच बताऊँ तो मुझे जटिल होना बहुत जरूरी है जिसका सबसे बड़ा कारण है हमारी जमीन. असल में ऐसा इस वजह से बोल रहा हूँ क्योंकि हमारी जमीन पर कई सारी घटनाएं होती रहती हैं जैसे जमीन का नीचे गिरना, बर्फ पड़ना, अत्याधिक बारिश होना: इतना ही नहीं बल्कि जो हमारा औसत तापमान है उससे अगर एक-दो डिग्री भी ज्यादा तापमान चला जाता है तो हमें कई सारी दिक्कतों का सामना करना पड़ता है. ऐसे हालातों में हमारे लिए बहुत जरूरी है कि हम अपना ही नहीं बल्कि हम जिस समाज में रहते हैं उसका भी हमें ध्यान देना जरूरी है. हमारे रसायनिक गुण हमें सबसे अलग बनाते हैं.

- सबसे पहले मेरे छाल में आपको टैनिन्स (Tannis) की मात्रा खूब मिलेगी. इससे हमारी छाल सड़ती नहीं है और हमें कीट-संक्रमण से भी बचाती है. सरल शब्दों में समझें तो इसमें केमिकल में ऐन्टिसेप्टिक गुण होते हैं जोकि पेड़ में कीड़े लगाने से बचाता है.

  यह टैनिन्स सिर्फ हमारे लिए ही फायदेमंद नहीं है बल्कि यह आम जनता के लिए भी जरूरी है. इसके ऐन्टिसेप्टिक गुण मानव उपचार में घाव भरने के काम आते हैं.

- फ्लेवोनोइड्स: यह पेड़ के लिए एंटीऑक्सीडेंट्स के तौर पर काम करते हैं. यह एंटीऑक्सीडेंट्स पेड़ की कोशिकाओं को डैमेज होने से बचाती है. इतना ही नहीं बल्कि इस फ्लेवोनोइड्स का इस्तेमाल मानव उपचार में लोगों की रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में इस्तेमाल की जाती है. आम आदमी के लिए यह एंटीऑक्सीडेंट्स उनके दिल और उनकी त्वचा के लिए बहुत जरूरी होता है.

अब हम आते हैं अपनी सबसे बड़ी विशेषता पर. आपको बताऊँ इतने साल के जीवन ने हमें बस यही सिखाया है कि अगर आपको अपने जीवन में आगे बढ़ना है और स्वस्थ रहना है तो आपको अपने साथ अपने आस-पास का भी ख्याल रखना पड़ता है. और इसी मूल उद्देश्य से जब मैं आगे

बढ़ता हूँ तब मुझे यह बताने में बहुत खुशी होती है कि मैं अपनी जन्मभूमि के लिए हर रोज़ मेहनत करता हूँ.

मेरे पर्यावरणीय गुण

मेरी छाल और मेरी लकड़ियों की सबसे खास बात यह है कि हम प्रकृति में कार्बन स्टोरेज करते हैं. कार्बन को स्टोर करने से ग्लोबल वार्मिंग नहीं होती है. मेरी छाल के बारे में तो आप सभी ने पढ़ ही लिया होगा; बस यही काफी है, मेरी छाल जैसे-जैसे टूटकर मिट्टी पर गिरती है और उसमें मिलती है वैसे ही उसके अंदर के सारे पोषक तत्व मिट्टी में मिल जाते हैं और इससे मिट्टी की गुणवत्ता में भी सुधार आता है.

मेरी सबसे बड़ी खासियत यह है कि मैं आपके लिए हवा को शुद्ध करता हूँ. मेरी अंदर वो गुण है जिससे मैं प्रकृति में होने वाली सभी हानिकारक हवाओं को अपने अंदर समा लेता हूँ. आप तो जानते ही हैं कि मैं कार्बनडाइऑक्साइड हवाओं से अपने अंदर अवशोषित करता हूँ और आपको ऑक्सीजन देता हूँ. लेकिन इसके साथ-साथ मैं वातावरण से हानिकारक गैस जैसे सल्फर डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन डाइऑक्साइड गैसों को छानने का काम करता हूँ. मेरी सुईनुमा पत्तियां प्रकृति से धूल और प्रदूषकों को फँसाने में मदद करता है. अंत: मेरी यह कोशिश रहती है कि आपके लिए और समाज के लिए हवा की गुणवत्ता बेहतर रहे.

अच्छा मेरे अंदर एक और गुण है. मैं जलवायु को नियंत्रित करने के लिए मेहनत करता हूँ. जैसा कि आप जानते हैं मैं वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करता हूँ. आप सभी जानते हैं कि पिछले 15 सालों से जलवायु परिवर्तन का प्रभाव बहुत ज्यादा बढ़ता जा रहा है जोकि हमारे आने वाली पीढ़ी के लिय खतरा बनती जा रही है, ऐसे में जब भी मैं कार्बन डाइऑक्साइड को अपने अंदर लेता हूँ तब मेरे अंदर यह सुकून रहता है कि जलवायु को नियंत्रित रखने में योगदान दे रहा हूँ. इसके साथ ही मैं प्रकृति के जल चक्र को बनाए रखने में मदद करता हूँ. मेरे जंगल वाष्पीकरण करके जल चक्र बनाए रखने में मदद करते हैं.

आमतौर पर मेरी जड़ें मिट्टी से 10-15 फुट नीचे तक जाती हैं. इतनी गहराई के साथ-साथ मेरी जड़ें लैटरल तरीके से जमीन में चारों ओर 20-25 फुट फैलती हैं. ऐसे में मेरे लिए मिट्टी को बांधे रखना बहुत आसान हो जाता है. मिट्टी के नीचे मेरे इतने बड़े फैलाव की वजह से मेरी जड़ों से मिट्टी तक सारे पोषक तत्व पहुँच जाते हैं. अच्छा मेरी बड़ी जड़ों की वजह से मैं मिट्टी को भूस्खलन से भी रोक लेता हूँ. बाढ़ ग्रसित क्षेत्रों में मेरे लंबे जड़ की वजह से पानी के बहाव को भी मैं आसानी से रोक लेता हूँ. मेरी छाल और मेरी पत्तियां बहुत धीमें जलती हैं जिसकी वजह से जंगल में आग के प्रसार को बहुत बढ़ावा नहीं मिलता है.

इतनी लंबी-चौड़ी बातों के बाद आप यह तो समझ ही गए होंगे कि मेरे पर्यावरणीय गुण बहुत सारे हैं, इसीलिए मैं खुद अपने आप को समाज का एक अहम हिस्सा भी मानता हूँ. मेरी खुद की कहानी मुझे बहुत प्रेरणादायी लगती है. हर रोज मेरी यही कोशिश रहती है और यह मेरा खुद का संकल्प है कि मैं समाज के लिए कैसे काम कर सकता हूँ.

मेरे शिव से मेरा वास्ता

हम सभी के लिए शिव भगवान देवता के रूप में सर्वोपरी हैं. आप सब शिव की पूजा करते हैं, उनकी साधना करते हैं. शिव जी की बात ही निराली है. एक ऐसे भगवान, जिनके त्रिशूल पर टिका है दुनिया का सबसे पुराना शहर बनारस, जिनकी तीसरी आँख अगर खुल जाए तो प्रलय आ जाए, जिनके भक्त ही उनके नशे में हों, उसके बारे में मेरा कहना बहुत मायने नहीं रखता है.

देवदार और शिव का रिश्ता ऐतिहासिक भी है और गहरा भी. अच्छा मैं आपको बताऊँ संस्कृत में मुझे 'देवदारु' के नाम से जाना जाता है और इसका मतलब है "देवताओं का वृक्ष". विशेष जानकारी के लिए बता दूँ आपको, चूँकि भगवान शिव को देवो का देव माना जाता है और मेरा उनका बेहद खास संबंध है इसकी वजह से उनकी हर तपस्या स्थलों पर मैं बहुतायत में पाया जा हूँ.

मेरे जंगलों में भगवान शिव का निवास हुआ करता था. यही मेरी गंभीरता का कारण है. अब आप तो इतने समझदार हैं ही जो समझ सकते हैं कि आखिर कैसे मैं आप सबके लिए बहुत पवित्र हूँ. शिव पुराण और अन्य ग्रंथों में मेरे जंगलों को भगवान शिव का निवास कहा गया है. आपको मैं बताऊँ, जब भगवान शिव हिमालय में ध्यानमग्न होते थे तब मेरा परिवार एक साथ मिलकर उन्हें चारों तरफ से घेर लिया करते थे जिससे हम उनकी सुरक्षा कर सकते थे.

मेरी लकड़ियाँ भगवान शिव को बहुत पसंद थी जिसकी वजह से आज भी उनके कई ऐसे मंदिर हैं जिनका निर्माण मेरी लकड़ियों से ही हुआ है जैसे अमरनाथ, केदारनाथ. भगवान शिव मुझे ऊर्जा का स्वरूप मानते थे, जिसकी वजह से शिव जी के हवन में मेरी लकड़ियों का इस्तेमाल होता है जोकि सकारात्मक ऊर्जा प्रायोजित करता है.

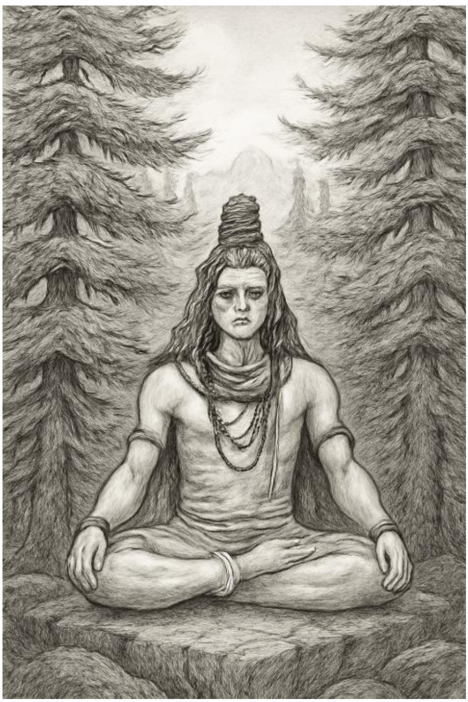

भगवान शिव को ध्यान और तपस्या का प्रतीक माना जाता है, उनके साथ मेरा जुड़ाव इतना अच्छा रहा है कि उनके कई गुण मेरे अंदर भी आ गए हैं जिसकी वजह से लोग मुझे भी जानने लगे. मेरे पेड़ों और परिवार के सदस्यों को शांति, ध्यान और आध्यात्मिकता से जोड़ा जाता है. ऐसा माना जाता है कि मेरे अंग से निकलने वाली खुशबू ध्यान और साधना में लोगों की सहायता करते हैं.

अच्छा मैं आपको अपने और शिव के बारे में एक जरूरी चीज तो बताना ही भूल गया. आपको मालूम ही होगा कि भगवान शिव की जटाओं में माँ गंगा विराजमान हैं और उनकी जटाओं से ही जल प्रवाहित होता है. वैसे ही मेरी शाखाएं भी लहरदार होती हैं जो शिव की जटाओं की तरह दिखती हैं. जिस तरह भगवान शिव की जटाएं संसार को जीवनदायिनी गंगा प्रदान करती हैं, वैसे ही मैं भी पर्यावरण को सुंदर और स्वच्छ बनाने में मदद करता हूँ.

अब आप तो समझ ही गए होंगे आखिर कैसे मैं भगवान शिव के दास बनके जीवन भर रहा हूँ, हमेशा से मेरे अंदर अपने वातावरण को साफ और आध्यात्मिक रखने की योग्यता थी. यही कारण रहा कि भगवान शिव ने मेरे जंगलों को ही चुना और तमाम ऋषि-मुनि ने मेरे पेड़ की छाँव में या मेरे जंगलों में ही अपनी साधना पूरी की. इसीलिए मैं कभी आपको पता नहीं चलने देता हूँ लेकिन मेरे अंदर यह सारी चीजें हैं जिससे किसी भी आदमी का मन शांत होता है, एक सौम्य और साफ वातावरण देने में मदद करता हूँ.

अब मैं ये कह सकता हूँ कि आपने मुझे हर एक परिपेक्ष्य में जान लिया है और पहचान भी लिया. मेरी इस कहानी से अब आप आसानी से मुझे ढूंढ पाएंगे. लेकिन अभी मेरा अंत नहीं हुआ है, मेरी एक छोटी ही कहानी बची हुई है जो मुझे आपसे थोड़ा दूर ले जा सकती है... .

मेरा पाकिस्तानी संबंध

यही है मेरी आखरी कहानी का शीर्षक. मेरा जन्म भारत का है लेकिन मैंने अपना घर पाकिस्तान में भी रख रखा है. सभी की तरह मुझे वहाँ से बहुत

प्यार मिलता है और मेरी स्थिति ऐसी रही कि वहाँ पर लोगों में मुझे उस देश का राष्ट्रीय वृक्ष भी घोषित कर रखा है.

जी हाँ आपने सही पढ़ा, मैं पाकिस्तान का राष्ट्रीय वृक्ष हूँ. मेरे जंगल पाकिस्तान के खैबर पख्तूनख्वा, गिलगिट-बालूचिस्तान और आज़ाद कश्मीर के क्षेत्रों में बहुतायत में हैं. पाकिस्तान में लोग 'दियार' के नाम से जानते हैं. मेरे अंदर पाकिस्तान और भारत की सामान सांस्कृतिक विरासत है. मेरा इस्तेमाल मंदिरों में भी हुआ है और मस्जिदों में भी. अमरनाथ में शिव जी के मंदिर निर्माण में भी मेरा इस्तेमाल हुआ है और सिंध में स्थित शाहजहाँ मस्जिद के भी निर्माण में मेरा ही इस्तेमाल हुआ है. ऐसे में मैं अपने आपको बहुत भाग्यशाली मानता हूँ कि चाहे कुछ भी हो, किसी भी हाल में मैं पर्यावरण, आदमी और जानवरों तक के काम में आता हूँ. जैसे अभी तक मेरी ज़िंदगी बीती है, वैसे ही आगे भी बीतेगी, तो चाहे कुछ भी हो जाए, ऐसा मैं हमेशा आपको इज्जत और आप सबकी इच्छाओं को अपने लिए सर्वोपरि रखूँगा.

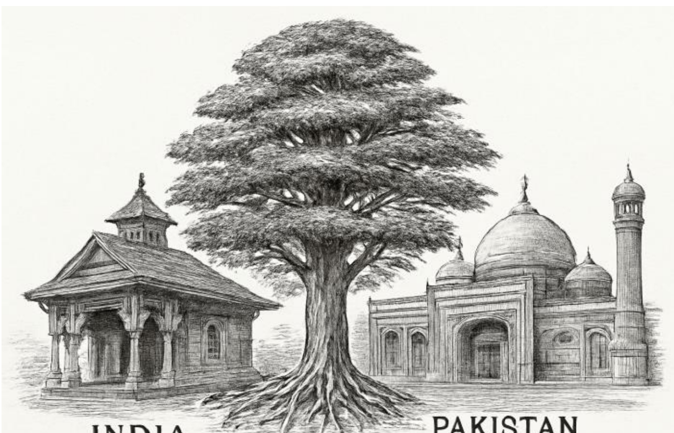

अंत में:

मैं, देवदार का पेड़, केवल एक वृक्ष नहीं हूँ, बल्कि प्रकृति का वह प्रहरी हूँ, जिसने सदियों से मानव सभ्यता को संरक्षण दिया है. मेरे अस्तित्व में केवल हरियाली नहीं, बल्कि इतिहास, आध्यात्मिकता और पर्यावरण के प्रति एक

गहरी प्रतिबद्धता छिपी हुई है. हिमालय की ऊँचाइयों में, जहाँ ठंडी हवाएँ बहती हैं और बर्फ की चादरें धरती को ढक लेती हैं, मैं मजबूती से खड़ा रहता हूँ—निरंतर, अडिग और स्थिर. मेरी जड़ें गहरी हैं, मेरी शाखाएँ विस्तृत हैं, और मेरा उद्देश्य हमेशा से प्रकृति और जीवन के बीच एक सेतु बनाना रहा है.

मेरी छाया में ऋषि-मुनियों ने ध्यान लगाया, योगियों ने शांति प्राप्त की, और यात्रियों ने विश्राम किया. मेरी लकड़ी से मंदिरों के दरवाजे बने, घरों की छतें बनीं और नावें बनीं, जिनसे लोगों ने नए किनारों की तलाश की. मेरी पत्तियों और छाल से औषधियाँ बनीं, जिनसे बीमारियों का उपचार हुआ. मैं केवल एक वृक्ष नहीं, बल्कि एक संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र का अभिन्न अंग हूँ, जो हवा को शुद्ध करता है, मिट्टी को स्थिर रखता है, जल स्रोतों को संजोता है और धरती के तापमान को संतुलित करता है.

परंतु आज, मेरे अस्तित्व पर खतरा मंडरा रहा है. विकास और औद्योगीकरण के नाम पर मुझे काटा जा रहा है, मेरे जंगल सिमट रहे हैं, और मेरी हरियाली धीरे-धीरे विलुप्त हो रही है. जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, और आधुनिक जीवनशैली की लालसा ने मुझे एक ऐसे मोड़ पर ला खड़ा किया है, जहाँ मैं अपनी ही रक्षा की उम्मीद कर रहा हूँ. यदि मेरी छाया विलुप्त हो गई, तो नदियाँ सूख जाएँगी, पहाड़ कमजोर हो जाएँगे, और हवा अपनी शुद्धता खो देगी.

फिर भी, मैं आशावान हूँ. जब भी कोई नया पौधा रोपता है, जब भी कोई जंगलों के संरक्षण की बात करता है, जब भी कोई मेरे नीचे बैठकर ध्यान करता है—मैं उस उम्मीद को महसूस करता हूँ. मेरी कहानी केवल अतीत का हिस्सा नहीं है, बल्कि भविष्य की धरोहर भी है.

इसलिए, जब भी आप मेरी ओर देखें, मेरी शाखाओं की ओर देखें, मेरी छाल को छूएँ, या मेरी खुशबू महसूस करें, याद रखें—मैं सिर्फ एक पेड़ नहीं, बल्कि जीवन, परंपरा, और पृथ्वी की आत्मा का प्रतीक हूँ. मेरा संरक्षण सिर्फ मेरी रक्षा नहीं, बल्कि मानवता और पृथ्वी के उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम है.

यह अध्याय देवदार वृक्ष की कथा, उसकी पहचान, विशेषताओं, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय महत्त्व, तथा उसकी चुनौतियों और भविष्य को गहराई से प्रस्तुत करता है.

देवदार केवल एक वृक्ष नहीं, बल्कि हिमालय की पहचान और प्रकृति का प्रहरी है. इसकी ऊँचाई, सुईनुमा पत्तियाँ, मजबूत दीमक-रोधी लकड़ी और लंबी आयु इसे विशेष बनाते हैं. यह वृक्ष न केवल ठंड और कठिन मौसम में जीवित रहता है, बल्कि अपने स्वरूप से जलवायु को नियंत्रित करता है, मिट्टी को स्थिर रखता है, जल स्रोतों का संरक्षण करता है और हवा को शुद्ध करता है. इसकी छाल में पाए जाने वाले रसायनिक गुण जैसे टैनिन और फ्लेवोनोइड्स, पेड़ और मानव दोनों के लिए औषधीय लाभ प्रदान करते हैं.

सांस्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से, देवदार का शिवजी से गहरा संबंध है. इसे 'देवदारु' यानी देवताओं का वृक्ष कहा जाता है. प्राचीन मंदिरों, विशेषकर हिमालयी वास्तुकला में, इसकी लकड़ी का प्रमुख उपयोग हुआ है—अमरनाथ, केदारनाथ और मनाली का हिडिंबा मंदिर इसके प्रमाण हैं. यह वृक्ष न केवल हिंदू, बल्कि बौद्ध और मुस्लिम स्थापत्य में भी सम्मानित है, जिससे इसकी साझा सांस्कृतिक विरासत झलकती है.

पर्यावरणीय दृष्टि से, देवदार कार्बन स्टोरेज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, प्रदूषक गैसों को अवशोषित करता है, जलवायु को संतुलित रखता है और जैव विविधता के लिए आवास प्रदान करता है. इसकी गहरी और फैलावदार जड़ें भूस्खलन और बाढ़ को रोकने में सहायक होती हैं. जंगल की आग के प्रसार को रोकने में भी इसकी छाल और पत्तियाँ मददगार होती हैं.

हालाँकि, आज इसके अस्तित्व पर खतरा मंडरा रहा है. वनों की कटाई, औद्योगीकरण, जलवायु परिवर्तन और मानवीय लालसा ने इसके जंगलों को सिकोड़ा है. यदि इसे नष्ट होने दिया गया, तो नदियों का सूखना, पहाड़ों का कमजोर होना और हवा की गुणवत्ता का बिगड़ना तय है.

इसके बावजूद, देवदार आशावान है. जब कोई नया पौधा लगाया जाता है, जब जंगल संरक्षण की पहल होती है, जब कोई इसकी छाया में बैठकर ध्यान करता है—यह वृक्ष भविष्य की एक नई उम्मीद महसूस करता है. इसकी कहानी केवल अतीत का गौरव नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक चेतावनी और प्रेरणा है.

अंततः, देवदार पृथ्वी की आत्मा का प्रतीक है—इतिहास, आध्यात्मिकता, पर्यावरण और जीवन का संगम. इसका संरक्षण केवल एक वृक्ष की रक्षा नहीं, बल्कि संपूर्ण मानवता और पृथ्वी के उज्ज्वल भविष्य की गारंटी है. इसलिए, इसकी शाखाओं को देखते समय, छाल को छूते समय, या इसकी खुशबू महसूस करते समय याद रखना चाहिए कि यह वृक्ष हमारी परंपरा, जीवन और प्रकृति के संतुलन का जीवंत प्रमाण है.

कड़वी छाँव का पीपल

एक भयावह मंज़र

24 मार्च 2020 की सुबह भारत के हर एक बच्चे को भी याद होगी. एक दिन पहले ही देश में जनता कर्फ्यू लगा था और सुबह 5 बजे से अगले 21 दिन तक के लिए देश में सम्पूर्ण लॉकडाउन लग गया था. हमारा देश पूरी दुनिया की तरह कोरोनावायरस की चपेट में था, लोग अपने-अपने घरों में कैद हो चुके थे. अब जीना था तो घर में रहना जरूरी था.

दिन और रातें अब दोनों ही लोगों के लिए लंबे हो रहे थे. लोगों के पास घर में रहने के अलावा कोई चारा नहीं था. कोरोनावायरस अब लोगों को अपनी चपेट में लेने से कतरा नहीं रहा था. शहर की सड़के अब दहशत से भरी हुई थीं. सांस लेने के लिए अब हवा की नहीं बल्कि मास्क की जरूरत थी.

इसी दौर में एक ऐसा भी समय आया जब ऑक्सीजन सिलिन्डर की लड़ाई होने लगी थी, किसी ने आपदा को अवसर बनाया तो किसी के लिए आपदा ने पूरे परिवार का विध्वंस होते हुए देखा है. समय के साथ आगे बढ़ते-बढ़ते हम यह भूल जाते हैं कि जो हमारी जड़ें हैं, वो ज़िंदगी भर हमारे किसी न किसी काम जरूर आएंगी. पीपल के पेड़ों पर लटके घंट देखकर ऐसा लगता कि मानो यह कोई मिट्टी का मटका नहीं बल्कि हर उस आदमी की जुबान है जिसकी जान ऑक्सीजन की कमी से गई है. घंट को बांधते समय परिवार वालों की आँखों में आँसू और आंसुओं में खोई हुई एक उम्मीद दिखा करती थी.

बड़े आश्चर्य की बात है कि हम पीपल के पेड़ को जटिल बोलते हैं, ऐसा पेड़ जो कार्बन डाईऑक्सीडेब लेता है और उसकी जगह सिर्फ और सिर्फ ऑक्सीजन देता है, आखिर वो जटिल कैसे है? पीपल के पेड़ में भगवान विष्णु का वास होता है और इसीलिए इसकी पूजा की जाती है. भगवान

विष्णु मोक्ष के दाता हैं. जटिल तो हम इंसान हैं जो पीपल के पेड़ को नहीं लगाना चाहते क्योंकि वह हमारे घर की जगह खा जाएगा.

हम स्वार्थी हैं. शायद ये कहना हम सबके लिए सही होगा. जब कोरोनाकाल में पीपल के पेड़ पर बंधे घंट लोग देखा करते थे तो उसमें कुछ ऐसे थे जो मरने वालों के आकड़ें का अंदाज लगाया करते थे. कोरोना काल के बाद शायद ही कोई एक इंसान होगा जिसने पीपल का पेड़ अपने आँगन में या अपने हाथों से लगाया होगा.

ऑक्सीजन की महामारी थी, और लोगों के चेहरों पर उदासी लेकिन जैसे ही वैक्सीन आई उसके बाद हर वो इंसान जो उदास था, परेशान था, वो अपनी रोजमर्रा की ज़िंदगी में वापस व्यस्त हो गया. हम इतने स्वार्थी कैसे हो जाते हैं?

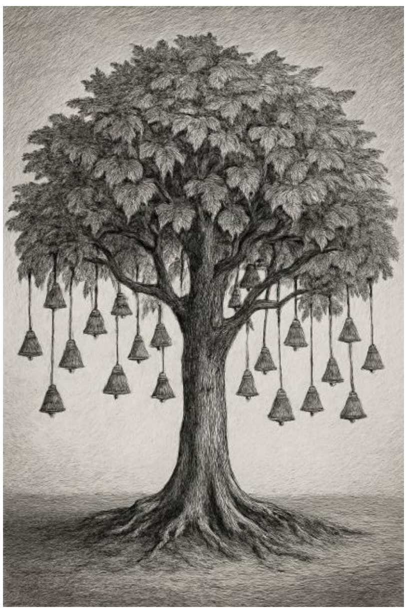

समय चलता रहा और हम हर एक दिन इस बात को लेकर आगे बढ़ते चले गए कि आखिर अगर ऐसे त्रासदी फिर से आती है तब हम अपने लिए क्या करेंगे...?

आपको एक कहानी सुनाते है...

सभ्यता की शुरुआत से ही पीपल का वृक्ष पूजनीय रहा है, और इसके धार्मिक महत्व के अलावा औषधीय गुणों की एक विस्तृत श्रृंखला है. 'अश्वत्थ' पीपल के पेड़ का दूसरा नाम है. हिन्दू धर्म में इस पेड़ को पवित्र वृक्ष के रूप में पूजा जाता है. वासुदेव, चैतन्य, World Tree पीपल के पेड़ के कुछ नाम हैं. हिन्दू पौराणिक कथाओं के अनुसार भगवान ब्रह्म पीपल की जड़ों में रहते हैं, भगवान विष्णु पीपल के पेड़ के तने में, और भगवान शिव पीपल के पेड़ की पत्तियों मे विराजमान हैं.

छान्दोग्य उपनिषद और अथर्व वेद के अनुसार पीपल के पेड़ का आध्यात्मिक महत्व भगवान का स्वर्ग है. हिन्दू धर्म में यह माना जाता है कि शनिवार के दिन भगवान विष्णु अपनी अर्धांगिनी माता लक्ष्मी के साथ वृक्ष पर निवास करते हैं. हिंदुओं की इसी मान्यताओं के कारण लोग हर शनिवार को पीपल के पेड़ की जड़ों को पानी देना उचित मानते हैं.

ब्रह्म पुराण में यह भी माना गया है कि भगवान विष्णु का जन्म पीपल के पेड़ के नीचे हुआ था जिसकी वजह से यह वृक्ष भगवान विष्णु का प्रतिनिधित्व करता है.

मान्यताओं में यह भी एक मान्यता है कि भगवान विष्णु, ब्रह्म देवता, और भगवान शिव पीपल के पेड़ के नीचे अपने परिषद रखा करते थे जिसकी वजह से इसकी पवित्रता और बढ़ जाती है. सीधे शब्दों मे समझ जाए तो यह एकमात्र ऐसा पेड़ है जिसमें एक साथ तीन भगवानों का वास है तने पर भगवान विष्णु, जड़ मे ब्रह्मा, और पत्तियों मे भगवान शिव एक साथ रहा करते थे.

इतनी पवित्रता के बावजूद आज भी पीपल के पेड़ को लेकर सभी लोगों के अंदर एक अजीब से भावनाएं रहती हैं. उस साल पीपल के पेड़ पर लटके सारे घंट ने यह साबित कर दिया था कि जीवन के शुरू होने से लेकर उसके खत्म होने तक पीपल के पेड़ का अटूट महत्व सभी की ज़िंदगी में रहता है.

पीपल के पेड़ का महत्व न सिर्फ लोगों के लिए ही महत्वपूर्ण रहा बल्कि इस पेड़ ने भगवान के साथ-साथ उन सभी जीव-जंतुओं का ख्याल रखा है जिनके होने से यह धरती में इकोलॉजिकल बैलन्स बना रहता है. पीपक का पेड़ खुद में एक एंटी-बायोटिक की तरह काम करता है. विशाल, जटिल और लंबे जड़ों से इस पेड़ की पहचान करना बहत आसान है. यह एक बहुत ही छायावादी वृक्ष होता है, जिसकी पत्तियां, तने, और शाखाएं सिर्फ इंसानों के लिए ही नहीं बल्कि प्रकृति के हर एक जीव-जन्तु के लिए काम आते हैं. दिनभर अच्छी मात्रा में ऑक्सीजन पैदा करके अपनी प्रकृति को साफ रखना मानों पीपल की ज़िम्मेदारी है.

यह धरती हमारा घर है, और इस प्रकृति में बसा हर एक जीव-जन्तु हमारे परिवार का सदस्य. इतने बड़े परिवार में किसी अनबन, किसी का रूठना, किसी को मनाना, यह सब तो चलता ही रहता है. अब ऐसे में किसी बड़े का रहना बेहद जरूरी होता है, जोकि घर के महत्वपूर्ण फैसले ले सकें, जोकि घर में सबको समझा सकें. कुछ ऐसा ही दायित्व मिला है पीपल के पेड़ को. प्रकृति को साफ रखना, परिवार में हर एक आदमी की जरूरतों को समझना, यह सारे काम पीपल के हैं. जैसे माँ-बाप भगवान का स्वरूप होते हैं, वैसे ही पीपल का पेड़ भी प्रकृति में हम सबके लिए भगवान का स्वरूप ही है. कुछ इसी तरह हम सब के लिए पीपल घर का सबसे बुजुर्ग होता है जिसके अनुभवों से हम सभी को जीवन के अलग-अलग पहलुओं का दीदार होता है.

पीपल का पेड़ प्रकृति के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण संकेत है. इसके गहरे जड़ों की वजह से इसकी प्रणाली में मिट्टी को रोकने की ताकत बहुत है. इसके गहरे जड़ की वजह से मिट्टी उपजाऊ तो होती है और उसके साथ-साथ सॉइल इरोशन भी रुकता है. अब ऐसे में क्या यह सही है कि किसी भी व्याख्या के चक्कर में हम अपने घरों से पीपल के पेड़ को निकाल दें?

अगर कायदे से देखें तो हम सभी का पीपल के पेड़ के साथ एक अनोखा रिश्ता होता है, जिसे जाने-अनजाने में हम सब याद रखते थे. मेरी इस व्याख्या को अन्यथा न लिया जाए—लड़के जब हॉस्टल में रहते हैं तब उनके अंदर एक अलग सा जोश होता है. यह जोश हर एक चीज को परखता है और उस पर सवाल करने को मजबूर करता है.

यह कहानी कुछ ऐसे ही लड़कों की है. हॉस्टल में संडे का दिन था. बॉय्ज़ हॉस्टल में कोई अपने कपड़े धो रहा था, कोई अपने गार्डन में लगी चौकी पर बैठे अपने नाखून काट रहा था. इसी दृश्य में कुछ लड़के पीपल के पेड़ की पतली सी टहनी तोड़ कर एक दूसरे से बात कर रहे थे.

"इससे चोट बहुत तेज लग सकती है" और यह बोलते ही फरहान के पैर पर जोर से के डंडा पड़ता है जिससे उसे यह एहसास हो जाता है कि पीपल के पेड़ की पतली सी टहनी से चोट बहुत तेज लग सकती है. हालांकि फरहान के दोस्त ने यह टहनी इस वजह से तोड़ी थी क्योंकि उसे ब्रश करना था. उसका कहना यही था कि "लोग कहते हैं कि दातून करने से दांत मजबूत रहते हैं". अपूर्व यह बोलकर दातून करने लगता है.

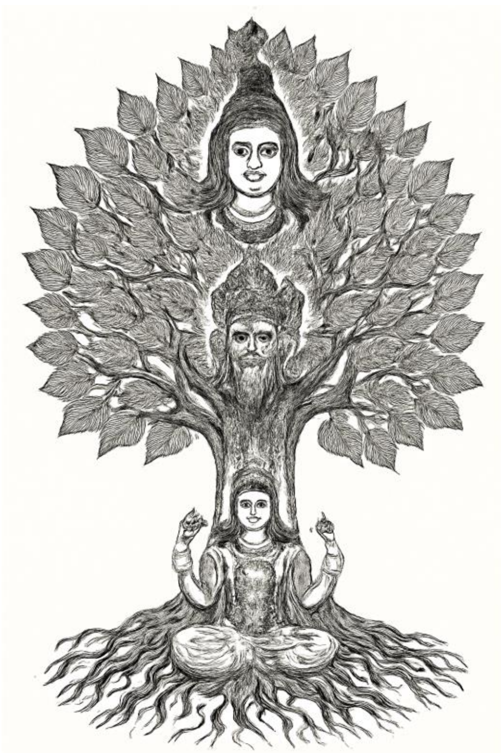

पीपल - एक कहानी और एक मिथक

पीपल एक बहुत ही जटिल और जंगली पेड़ होता है. कही भी किसी भी परिवेश में इसका उगना कोई नई बात नहीं है. यह कहाँ से आ जाता है और इसके साथ ऐसा कैसे हो जाता है, इसके बारे में आज भी हमलोग नहीं समझ पाए. हर एक दिन किसी ना किसी जगह पीपल की एक नई शुरुआत जरूर होती है. हमने हमेशा से एक चीज़ देखी है... जिस चीज से लोग बचना चाहते हैं, उसे धर्म से जोड़ देते है. ऐसा पीपल के साथ बहुत होता है. पीपल के पेड़ पर तरह-तरह के धार्मिक मिथक जुड़े हुए हैं, जिसका सबसे बड़ा कारण इनकी जटिलता और इनका विशाल रूप है.

यह आपने बहुत बार सुना होगा कि लोग रात में पीपल के पेड़ के नीचे बैठने से मना करते हैं. मेरे मन मे यह सवाल हर बार उमड़ आता है कि आखिर ऐसा क्यों वह कहते हैं? पीपल के पेड़ पर अक्सर आप देखे होंगे उसकी पूजा की जाती है, धागे बांधे जाते हैं.

देखिए समय के साथ पीपल का पेड़ और जवान होता है और इसकी सबसे बड़ी अच्छाई यही है कि यह कभी बूढ़ा नहीं होता है. हमेशा तना रहता है और चाहे कुछ भी हो जाए, यह कभी टूटता नहीं है. एक आम इंसान के जीवन में कई बार ऐसी चीजें होती हैं जिससे उसे लगता है कि वह टूट रहा है अंदरूनी तौर पर लेकिन ऐसा पीपल के पेड़ के साथ नहीं होता है. शायद इसीलिए इसके नाम के आगे यह जुड़ा है कि वह आमजन का पेड़ जिसका एक ही मोटो है “पीपल फॉर पीपुल”. यह पेड़ आम आदमी के लिए.

छोटे बच्चों को सुनाई गई कहानियाँ और कोरोना के दौरान इस पेड़ का उस सच का सामना किया है, शायद यह वही कर सकता है जो दिल से बहुत मजबूत हो और हमेशा खड़े रहने का ज़मीर रखता हो. लेकिन अब बहुत हो गया, मैं ही क्यों आपको बताऊँ, ये तो भईया इस पेड़ की कहानी है और यह किताब ही इनके बारे में है तो आइए इन्हीं से सुनिए इनकी खासियत...

चलिए अब जब बारी मेरी है तो सुनिए मुझसे ही मेरी कहानी...

थोड़ा संदर्भ मैं आपको पहले उस जगह के बारे में दूंगा जहां से मेरा जन्म तो नहीं हुआ है लेकिन अब मैं वही का बन गया हूँ. भारत एक बहुत ही प्राचीन बसावट है जिसका जन्म हुआ नहीं लेकिन उसकी वजह से बहुत से लोगों का जन्म हुआ है. मैंने अपने आप को ऋषि-मुनियों के बीच बढ़ते हुए देखा है. वह मेरे नीचे मेरी ही छाँव में बैठ कर शांति साधना करते रहा करते थे. भारत अपनी संस्कृति में बहुत ही प्रगतिशील है, यहाँ पर लोग अपने से ज्यादा अपने गुरु या अपने भगवान पर भरोसा करते हैं. इस देश में मेरा अलग ही महत्व है, ऐसा लोग कहते हैं कि मेरे पास भगवान विष्णु का वास है. ऐसा लोग कहते हैं जिसकी वजह से हर बार या यूं कहें तो हर दिन लोग मेरी पूजा करते हैं. बुद्धिज़्म और जैनिज़्म में भी मेरा बहुत बड़ा योगदान रहा है. मुझे दीर्घायु, बुद्धि और सुरक्षित का प्रतीक माना गया है.

जैसे-जैसे लोग मेरी पूजा करते हैं, वैसे-वैसे मुझे यह समझ में आया है और यह मैं आपको भी समझाना चाहता हूँ कि यह एक तौर से स्पष्ट उदाहरण है कि आखिर कैसे भारत की संस्कृति ने मुझे अपनाया. ये तो मैंने देखा है भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता एक-दूसरे में समाई हुई है. मेरे जन्म के उपरांत भारत में मुझे प्राकृतिक, सामाजिक और धार्मिक संस्करणों की उपाधि मिली है.

मेरे लिए यह बहुत बड़ी बात है लेकिन जीवन के हर एक मोड़ पर, हर एक स्पीड-ब्रेकर पर मुझे भी कई तरह की दिक्कतों का सामना करना पड़ा है. मैं आपको अपनी दिक्कतों से शुरुआत से रूबरू कराता हूँ...

देखिए मेरे लिए सबसे बड़ी चीज है मेरी पैदाइश. मुझे सबसे ज्यादा उसमें दिक्कत होती है क्योंकि मेरे लिए वही बहुत बड़ा चैलेंज है. मुझे आगे बढ़ने के लिए प्राकृतिक नमी की जरूरत पड़ती है जिसके बिना मेरा खुद का जीवन-यापान बहुत मुश्किल में होता है. ऐसा ना मिलने पर मुझे मजबूरन दीवारों के बीच, दूसरे पेड़ के ऊपर, और बहुत ऐसी जगहें जहां पर थोड़ी भी नमी होती है, मैं वहीं पर अपनी जगह बना लेता हूँ. लेकिन चूँकि यह एक दिक्कत है तो इसके बारे में मैं बहुत ज्यादा बात नहीं करता हूँ.

एक और सबसे बड़ी समस्या मुझे तब होती है जब मुझे असाधारण जगह पर अपने-आप को सेटल करना पड़ता है. ऐसा मेरे साथ तब होता है जब

मुझे यह लगने लगता है कि या तो जी लो या तो मर लो. यह हाल वही आदमी के दिमाग जैसा है. जैसे किसी भी सामान्य इंसान के लिए उसका दिमाग ही सबसे बड़ी दवा है, वैसे ही उसके लिए उसी का दिमाग उसकी सबसे बड़ी बीमारी. वैसा ही हाल मेरा भी है. मैंने यह देखा है कि मैं अपनी सोच से इतना जटिल हूँ कि मुझे मरने से डर लगता है, भले ही मेरा पूरा जीवन दूसरे पर आश्रित हो, भले ही जीवन भर मैं विकलांग रह जाऊँ लेकिन मारना मुझे आता नहीं है. ऐसे में जब भी मुझे किसी असाधारण जगह पर अपने जीवन को देखना पड़ता है तब मेरे अंदर मिट्टी के जो पोषक तत्व हैं, उसकी बहुत ज्यादा कमी हो जाती है. लेकिन इसका मतलब ये नहीं है कि मेरे अंदर कुछ बचा नहीं, इसका मतलब ये नहीं है कि मैं पेड़ नहीं हूँ, मैं हूँ वही लेकिन शायद मेरे किसी अंग में कुछ कमी रह गई जिसकी वजह से मैं पूरा नहीं हो पाया हूँ.

मिट्टी मेरे लिए माँ जैसी होती है. जिसे आप धूल समझते होंगे, वो मेरे लिए माँ समान है. जैसे एक बच्चे को जीवन के 6 महीने या साल भर तक माँ के दूध की जरूरत होती है, वैसे ही हमलोगों को ज़िंदगी भर इस मिट्टी की जरूरत होती है. क्योंकि इनकी वजह से ही मैं ज़िंदगी भर ऊंचा खड़ा रहता हूँ, ज़िंदगी भर मुझे इनके बिना कोई नहीं संभालता है. इसीलिए मेरे लिए यह माँ समान है और इनके बिना मेरा कोई अस्तित्व नहीं है. शायद मेरी सोच ही मुझे जिंदा रहने की कुव्वत देती है.

अच्छा बस ऐसा ही नहीं, मेरी जवानी भी कुछ खास नहीं बीतती है. हर रोज से ज्यादा पानी की जरूरत मुझे मेरी युवा अवस्था में होती है. अक्सर करके मिट्टी में नमी ना होने के कारण मेरे जीवन पर तुरंत विराम लग जाता है. कई बार ऐसा होता है कि मरने के बजाय मेरा विकास ही रुक जाता है, जिससे मुझे खुद विकलांग जैसा लगने लगता है. ऐसा ही हमेशा मेरे साथ होता है, मिट्टी और मिट्टी में नमी मेरे लिए पोलिओ-ड्रॉप जैसी होती है. बिना उसके मेरा जीवन किसी काम का नहीं है. कीट, पशुओं का हमला तो हमें अक्सर करके झेलना ही पड़ता है क्योंकि हम खुद जानते हैं बिना उनके हमले के हम यही नहीं सीख पाएंगे कि आखिर जीवन जिया कैसे जाता है.

कुछ चीजें हम सबके जीवन में अति-आवश्यक होती है. जैसे कि, किसी आदमी का गिरना क्योंकि यह माना जाता है कि जब तक आदमी नहीं

गिरता है तब तक वह वापस उठ नहीं सकता है. गिरना ही आदमी को जीवन में सब कुछ सीखा देती है. बिना गिरे शायद ही कोई ऐसा आदमी है जो अपने जीवन में अच्छा कर लेता है. फेल होकर जो पास होता है, उसे पास होने की कीमत मालूम होती है, लेकिन बिना कुछ किए बिना मेहनत के मिली हुई चीज की कोई कीमत नहीं होती है.

मुझे ऐसा लगता है कि मेरे जीवन में हुई समस्याओं के बारे में मुझसे अच्छा कोई नहीं बता सकता है. मेरा वक्तव्य भले ही कोई भी दे सकता है लेकिन मेरे ऊपर बीतने वाले चीजों के बारे में मुझसे ज्यादा अच्छे तरीके से कोई नहीं जानता है. मैं अब इतना समझदार हो गया हूँ कि आगे आने वाली समस्याओं का हल खुद के लिए निकाल सकता हूँ. मेरे जीवन का कोई स्वाद नहीं है. मुझे कोई उगाता नहीं है, मैं स्वयं ही उग जाता हूँ, मेरे पास अब कहने को कुछ नहीं बस इतनी सी गुजारिश है कि ना चाहते हुए भी अगर आप मुझे नज़रंदाज़ करेंगे तो इस प्रकृति में बहुत सारी चीजें खराब हो जाएंगी.

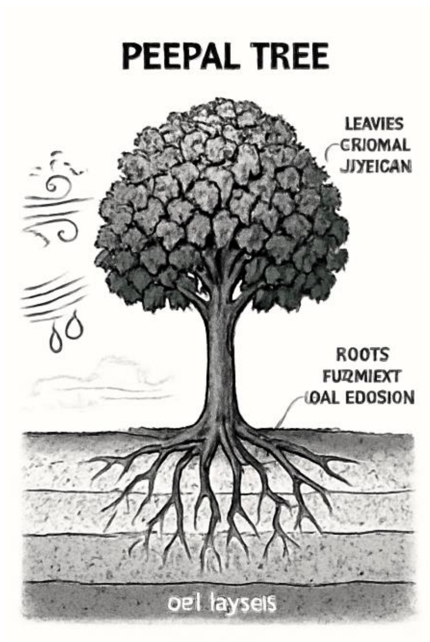

कुछ ऐसी ही कहानियाँ पीपल ही नहीं बल्कि हर एक पेड़ के साथ जुड़ी हुई हैं. कहानियों के मंज़र में आपको कुछ खुशी के गीत मिलेंगे तो कहीं आपको दर्द और करुणा का आभास भी होगा लेकिन उसके बावजूद हम बस यही मानते हैं कि यही तो जीवन है.

एक पीपल यह है जिसके ऊपर लोग अपने पूर्वजों को मुक्ति दिलाने के लिए इनकी पूजा करते हैं तो दूसरी तरफ भी यही पीपल है जिसपर धागा बांध कर औरतें अपने बच्चों और परिवार जनों की लंबी आयु की कामना करती हैं. अब आप सही समझ रहे हैं कि पात्र तो एक ही है लेकिन उसकी कहानियाँ कई सारी हैं, उसके चरित्र कई सारे हैं, उसके बिना लोगों का खुद का जीवन अधूरा है.

किताब के इस अध्याय को पढ़ने के बाद कभी अगर आप पीपल के पेड़ को गूगल करेंगे तो आपको अनेकों-अनेकों प्रकार की कहानियाँ मिलेंगी जैसे 'पीपल के पेड़ को पानी देने से जन्म-जन्म के पाप से हो जाएंगे मुक्त', 'पीपल है भारतीय संस्कृति का अति-प्राचीन पेड़'. ऐसी कहानियाँ, ऐसे संदर्भ हमेशा आपको मेरी कहानी बताने के लिए प्रेरित करेंगे लेकिन समझना बस इतना है कि आखिर अगर पीपल जिंदा हो तो उसकी लंबी आयु के लिए क्या-क्या प्रयास किए जा सकते हैं.

तो इस कहानी में मैंने आपको एक ही पात्र के कई चरित्रों, कई पहलुओं से रूबरू कराया. इस किताब का मकसद ही यही है. जब मैंने यह किताब लिखनी शुरू की थी तब मुझे ऐसा लगा कि इनकी कहानियों पर जोर देना ज्यादा जरूरी है. यह हमारे जीवन की बैसाखी नहीं है बल्कि यह हमारे जीवन की सच्चाई है, ये वो कहानियाँ हैं जिसे हम खुद नहीं पढ़ते हैं.

हाल ही में बॉलीवुड के मशहूर कलाकार मनोज कुमार का निधन हुआ है. खबरों की दुनिया में कुछ ऐसी भी कहानियाँ मनोज कुमार के ऊपर थीं, जिसमें पीपल के पेड़ से जुड़ी कुछ कहानियाँ थीं. खबर कुछ ऐसी थी कि सन् 1958 में मनोज कुमार दिल्ली के एक गाँव में शूटिंग कर रहे थे. गर्मी के उस मौसम में उन्होंने पीपल के पेड़ के नीचे ही बैठकर बाजरे की रोटी खाई और आराम किया. बस इतनी सी कहानी पर गाँव वालों ने उस पेड़ को "मनोज कुमार का पीपल" ऐसा नाम दे दिया था.

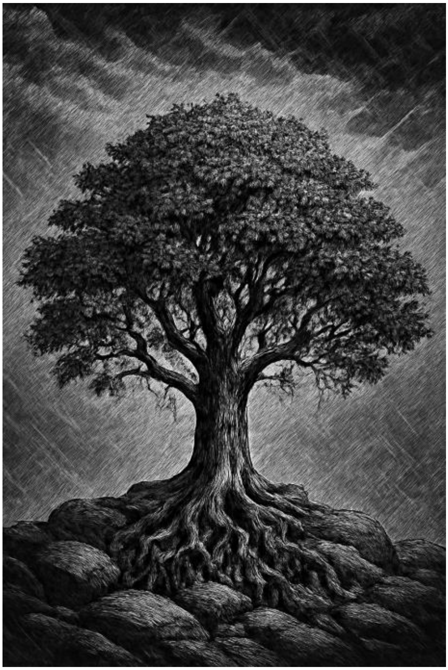

ऐसी कुछ खबरों को पढ़ने के बाद ऐसा तो जरूर लगता है इस धरती पर पैदा हुए सभी लोग कितने भावनात्मक होते हैं, उन्हें उनसे ज्यादा उनके सुपरस्टार प्रेरित करते हैं और उनके अलावा उनका खुद का कोई जीवन नहीं है. उनके लिए उनकी सोच ही सबसे बड़ी चीज होती है, इसी वजह से मेरा खुद का इस किताब में यह प्रयास है कि किसी तरह इन निरी पेड़ों का महत्व हम सबके अंदर बसे और हम भी इन्हें समझना शुरू करें.

आग वन पलाश

पलाश... नाम लेते ही मन में एक चमक-सी पैदा होती है. नाम भले साधारण हो, लेकिन इसकी कहानियाँ और इससे जुड़ी स्मृतियाँ असाधारण हैं. सोचिए, आखिर मुंशी प्रेमचंद ने क्यों अपनी कहानी *"दो बैलों की कथा"* का नाम *हीरा-मोती* नहीं रखा? क्योंकि नाम सिर्फ पहचान नहीं होता — वह भावनाओं का पहला द्वार है. एक आम इंसान के लिए किसी वस्तु या व्यक्ति का नाम सबसे बड़ा आकर्षण होता है. किताबों में भी यही बात लागू होती है — किताब खरीदते समय ज़्यादातर लोग पहले उसका कवर देखते हैं, और अगर कवर व शीर्षक में खिंचाव है, तो वे किताब खरीद लेते हैं. आज के समय में सच यही है — जो दिखता है, वही बिकता है. बिना देखे और बिना आकर्षण के, कोई कुछ नहीं खरीदना चाहता.

पलाश की कहानी भी कुछ ऐसी ही है. इसके पत्तों को शायद बहुत से लोग पहचान न पाएं, लेकिन इसके फूल से हर कोई परिचित है. कहानी में पलाश हमेशा सुंदर लगता है, और इसके फूल इसे और भी अधिक अलंकृत कर देते हैं. ये फूल छोटे नहीं, बल्कि बड़े-बड़े, चटक नारंगी-लाल रंग के होते हैं — मानो सूरज के टुकड़े शाखाओं पर सजे हों. यही फूल वसंत का संदेश लेकर आते हैं, और इन्हीं से होली की शुरुआत भी होती थी — जब लोग इन फूलों को सुखाकर, पीसकर, प्राकृतिक रंग बनाते और एक-दूसरे पर उड़ेलते थे.

पलाश (*Butea monosperma*) फैबेसी (Fabaceae) परिवार का एक मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष है, जिसे ढाक, टेसू, किंशुक, परास और अंग्रेज़ी में "फ्लेम ऑफ द फॉरेस्ट" कहा जाता है. यह भारत, नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका और दक्षिण-पूर्व एशिया के कुछ हिस्सों में स्वाभाविक रूप से पाया जाता है. इसकी ऊँचाई सामान्यतः 12 से 15 मीटर तक होती है और इसका तना सीधा, मोटा तथा खुरदरी भूरे रंग की छाल से ढका होता है. इसकी पत्तियाँ त्रिपत्र होती हैं, अर्थात एक डंठल पर तीन पत्तियाँ

जुड़ी होती हैं. ये पत्तियाँ बड़ी, मोटी और अंडाकार आकार की होती हैं, जिनकी लंबाई लगभग 10 से 20 सेंटीमीटर होती है और सतह थोड़ी खुरदरी होती है.

पलाश के फूल इसकी सबसे विशिष्ट पहचान हैं. ये गहरे नारंगी से लाल रंग के होते हैं और गुच्छों में खिलते हैं. फूलने का समय मुख्यतः फरवरी से अप्रैल के बीच होता है, जब पेड़ की पत्तियाँ झड़ चुकी होती हैं. पत्तियों के बिना, लाल-नारंगी फूलों से लदा यह पेड़ दूर से ऐसा प्रतीत होता है मानो उस पर अग्नि जल रही हो. फूलों का आकार तोते की चोंच जैसा होता है, जो इसे और भी आकर्षक बनाता है.

पलाश का फल चपटा और पतला शेंगा होता है, जिसकी लंबाई लगभग 15 से 20 सेंटीमीटर होती है. पकने पर यह भूरे रंग का हो जाता है और सामान्यतः इसमें एक ही बीज पाया जाता है. इसके तने से एक विशेष प्रकार का गोंद निकलता है, जिसे "कमर कस" कहा जाता है. यह औषधीय और पोषक गुणों से भरपूर होता है. इसकी गहरी और मजबूत जड़ प्रणाली

न केवल पेड़ को स्थायित्व प्रदान करती है, बल्कि मिट्टी के कटाव को भी रोकने में सहायक होती है.

धर्म और पेड़ – पवित्रता का संबंध

हिंदू धर्म की सबसे अद्‌भुत बात यह है कि यहाँ लगभग हर पेड़ को पवित्र माना गया है. इस धर्म में पवित्रता की पहचान कई बार पेड़ों से ही होती है. चाहे यह इसकी विशेषता कहें या इसका नियम, दोनों ही बातें एक साथ सच हैं. किसी भी धर्म को गहराई से समझना हो, तो उससे जुड़े कुछ पेड़ों को समझ लीजिए — वे उसकी पूरी आध्यात्मिक कहानी कह देंगे.

पलाश को हिन्दू धर्म में अत्यंत पवित्र माना गया है. हिन्दू धर्म में पलाश का महत्व बहुत जगह दिया गया है चाहे वह वेद हो, रामायण हो या फिर महाभारत. इसका नाम वैदिक साहित्य, महाभारत, रामायण, पुराण और कई संहिताओं में मिलता है. ऋग्वेद और अथर्व वेद में पलाश का ज़िक्र 'किंशुक' के नाम से होता है. इसे यज्ञ वृक्ष माना गया है क्योंकि किसी भी यज्ञ में अर्पित होने वाली लकड़ी पलाश की टहनियां होती है. हिन्दू मान्यताओं में पलाश को यज्ञ वृक्ष के नाम से जाना जाता है , बहुत ऐसी भी जगह हैं जहाँ इसे ब्रह्मा-वृक्ष भी कहा गया है. इस पेड़ की पत्तियां त्रिपत्र होती हैं यानी तीन पत्तियों का समूह जोकि ब्रह्मा, विष्णु और महेश की संयुक्त शक्तियों का प्रतीक माना गया है. संस्कृत में लिखे गए यह वेद हिन्दू धर्म के सबसे पवित्र स्रोत के रूप में माने जाते हैं.

रामायण हिन्दू धर्म के लिए बहुत ही पवित्र ग्रन्थ है. इस दुनिया में किसी के लिए राम उनके भगवन हैं, वही कई ऐसे भी हैं जो रावण की पूजा करते हैं. रामायण का मानचित्र सिर्फ एक कहानी नुमा नहीं है जोकि बहुत साल पहले कभी हुई होगी बल्कि यह एक ऐसा ग्रन्थ है जिसका सांस्कृतिक ग्रन्थ सबसे मज़बूत है. रामायण ने भारतीय साहित्य, संस्कृति और आध्यात्म को गहराई से प्रभावित किया. यह विष्णु के अवतार भगवान राम और उनकी पत्नी सीता के जीवन और साहसिक कारनामों का वर्णन करता है और धर्म, निष्ठा और बुराई पर अच्छाई की विजय के विषयों पर प्रकाश डालता है. यह महाकाव्य कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच को प्रेरित करता रहता है और इसकी नैतिक शिक्षाएँ दुनिया भर के लोगों को प्रभावित करती हैं.

रामायण के इस महाकाव्य में भी पलाश ने अपनी भूमिका बखूबी निभाई. रामायण में पलाश का उल्लेख कई स्थानों पर किया गया है, विशेषकर वनवास के दौरान और यज्ञ सामग्री के रूप में इसका विवरण देखने को मिलता है. राम-लक्ष्मण और सीता जब वनवास के लिए वन में पहुंचे तब उन्हें सबसे अपने पहले यज्ञ की समिधा के लिए पलाश की लकड़ी ही मिली थी, चूँकि वाल्मीकि द्वारा लिखी गई रामायण में इसका उल्लेख है, तब से किसी भी यज्ञ और हवन में पलाश की लकड़ी का इस्तेमाल करना बेहद पवित्र माना जाता है.

वाल्मीकि ने रामायण में पलाश के फूलों का भी बहुत सुनहरा वर्णन किया है. पलाश के लाल फूल वन को नारंगी रंग की चादर से धक देते हैं जोकि पूरे वन को एक अलग सा दृश्य दे जाता है, मानों ऐसा लगता है कि सूरज का एक टुकड़ा आकर धरती पर गिर गया है. वसंत ऋतु में पलाश से आच्छादित वन मानो अग्नि से दहकते प्रतीत होते थे.

चित्रकूट और पलाश के फूल – रामायण का प्रसंग

अयोध्याकाण्ड का वह प्रसंग अत्यंत रमणीय है जब राम, सीता और लक्ष्मण चित्रकूट की ओर अग्रसर हो रहे थे. प्रातःकाल का समय था, आकाश में उषा की लालिमा फैल रही थी और समूचा अम्बर सुनहरी आभा से रंगा प्रतीत हो रहा था. संध्योपासन और अन्य नित्यकर्मों से निवृत्त होकर तीनों ने चित्रकूट पर्वत की ओर यात्रा आरम्भ की. दूर से जैसे ही चित्रकूट के

ऊँचे-ऊँचे शिखर दृष्टिगोचर हुए, राम ने सीता का ध्यान वन में खिले पलाश के फूलों की ओर आकर्षित किया.

वे बोले – "हे मृगलोचनी! देखो, ये पलाश के फूल जलते अंगारों के समान दीप्तिमान हैं, जिन्होंने सम्पूर्ण वन को अलौकिक शोभा प्रदान कर दी है. ऐसा लगता है मानो ये पुष्पहार लेकर हमारा स्वागत कर रहे हों. हमारे सम्मुख खड़े विल्व और भल्लातक के ये वृक्ष शायद ही कभी किसी मनुष्य के स्पर्श में आए हों."

राम ने लक्ष्मण की ओर मुड़कर कहा – "लक्ष्मण! देखो, इन वृक्षों पर मधुमक्खियों ने कितने विशाल छत्ते बना रखे हैं. वायु के झोंकों से झरते फूलों ने भूमि को ऐसे ढक दिया है मानो उस पर पुष्पों की शैया बिछा दी गई हो. वृक्षों की डालियों पर बैठे तीतर अपनी मधुर ध्वनि से मन को मोह रहे हैं. मेरा विचार है कि चित्रकूट का यह स्थान हमारे निवास के लिए सर्वथा उपयुक्त है. बताओ, तुम्हारा क्या मत है?"

लक्ष्मण, जो सदा अपने बड़े भाई के विचारों का सम्मान करते थे, तुरंत बोले – "प्रभु! मेरा भी यही मत है कि यह स्थान हमारे लिए पूर्णतः योग्य है."

सीता ने भी दोनों के मत का समर्थन किया. इसी तरह चलते-चलते वे महर्षि वाल्मीकि के सुंदर आश्रम तक पहुँचे. राम ने उन्हें प्रणाम किया और परिचय देते हुए कहा – "हम पिता की आज्ञा से चौदह वर्षों के लिए वनवास करने आए हैं."

महर्षि वाल्मीकि ने स्नेहपूर्वक उनका स्वागत किया – "हे दशरथनन्दन! तुम्हारे दर्शन से मैं कृतार्थ हो गया हूँ. जब तक तुम्हारी इच्छा हो, तुम यहाँ रह सकते हो. यह स्थान तुम्हारे निवास के लिए पूर्णतः उपयुक्त है."

राम ने आभार व्यक्त करते हुए उत्तर दिया – "गुरुदेव, यह वन हमें अति प्रिय है, किन्तु मैं नहीं चाहता कि हमारे यहाँ रहने से आपकी तपस्या में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न हो. हम यहीं पास में अपनी पर्णकुटी बनाएंगे."

राम के निर्देश पर लक्ष्मण तुरंत वन में गए और मज़बूत लकड़ियाँ काटकर ले आए. उन्होंने उनसे एक सुंदर और कलात्मक कुटिया तैयार कर दी.

उसके निर्माण पर राम ने उनकी भरपूर प्रशंसा की. तत्पश्चात्, राम और सीता ने गृह-प्रवेश यज्ञ किया और कुटिया में प्रविष्ट हुए.

कुटिया के समीप ही माल्यवती नदी कलकल ध्वनि के साथ बह रही थी, जिसकी धारा चित्रकूट पर्वत के चरणों का स्पर्श करती थी. नदी के दोनों ओर पर्वतों की श्रेणियाँ अपनी नयनाभिराम सुंदरता से मन को मोहित कर रही थीं. इस मनोहारी प्राकृतिक दृश्य ने कुछ समय के लिए राम और सीता को अयोध्या त्यागने का दुःख भुला दिया. विविध रंग-बिरंगे पुष्पों से लदी लताएँ, हरित विटप और पक्षियों का मधुर कलरव, सीता के मन में यह भाव जगा रहे थे कि इस वन में वह राजमहल से भी अधिक सुखी हैं.

पलाश – वन की ज्वाला का रूप

आज की कहानी में जानिए पलाश को, जिसे लोग *वन की ज्वाला* या *Flame of the Forest* कहते हैं. अगर इस पेड़ को सही मायनों में देखना है, तो वसंत ऋतु में देखिए — जब बाकी पेड़ों पर अब तक नई पत्तियाँ नहीं आई होतीं, तब यह पेड़ अपने पूरे शबाब पर होता है. चटक नारंगी फूलों से लदा-फदा, मानो किसी ने जंगल पर रंग बिखेर दिए हों.

जब इसके फूल ज़मीन पर गिरते हैं, तो लगता है मानो सूरज का कोई टुकड़ा धरती पर आकर समा गया हो. यह खिलना उस समय होता है जब पेड़ लगभग नंगे होते हैं और नई पत्तियों के आने की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं. इन फूलों की खूबसूरती ही नहीं, बल्कि इनके सांस्कृतिक, धार्मिक और औषधीय महत्व ने पलाश को भारत की लोककथाओं, त्योहारों और कला में अमर कर दिया है. भारत में इसे कई नामों से जाना जाता है — ढाक, टेसू, किंशुक, केसुध, परास आदि.

कई कवि पलाश के पेड़ को वन की ज्वाला के रूप में स्थापित करने के लिए बहुत मेहनत की है. उनके हिसाब से वसंत ऋतु में जब पलाश के पेड़ पर पत्ते कम और फूल अधिक होते हैं, तो पूरा वन उसके रंगीन फूलों की वजह से सचमुच जलती हुई ज्वाला जैसा प्रतीत होता है. इसे अपने दिमाग में दृश्य के रूप में देखने से ही ऐसा लगता है मानो वह जंगल और उस जंगल के लाल फूल मेरे सामने हों. पलाश के फूल की कहानियां और इनका विवरण बेहद मशहूर है, इसे लेकर कई कहानियां भी लिखी गई हैं और कई कवियों ने भी पलाश के बारे में बहुत लिखा है.

जैसे कि

अमयकान्त ने अपनी पुस्तक "समुद्र से लौटते रेत के घर" में पलाश का उल्लेख किया है. कविता के अंश कुछ ऐसे हैं--

“बंजर-से दिखते पहाड़ों पर

सूखे पेड़ों के बीच खिले हुए हैं पलाश के फूल...

एक चटख़ रंगीन हँसी

चैत्र के दूर तक पसरे सन्नाटे में

कुछ मीठे सुरों की तरह बजते रहते हैं बीच-बीच में पलाश के फूल."

देखिये कितनी सुंदरता से कवि ने अपनी कविता में पलाश के फूलों का उल्लेख किया है. इस कविता में कवि को पहाड़ सूने और बंजर से दिख रहे हैं, पेड़ों पर पत्ते नहीं हैं वातावरण निर्जीव सा दिख रहा है. लेकिन इसी नीरस ज़मीन और वातावरण पर चटक लाल और नारंगी रंग के फूल से सजी ज़मीन दिखाई दे रही है. यह रंगीन फूल उस उदासी भरे वातावरण में एक खुशनुमा पल वापस लेकर आ जाते हैं जोकि अभी इसी सरज़मीं से गायब हैं.

चैत्र (हिंदू पंचांग का महीना) वसंत के अंतिम और ग्रीष्म की शुरुआत का समय होता है. इस समय पहाड़ों और जंगलों में एक प्रकार का शांत, धीमा वातावरण होता है — न ज्यादा बारिश, न हरियाली, बस शुष्कता और स्थिरता. कवि ने इसे "पसरा हुआ सन्नाटा" कहा है, जो वातावरण की निस्तब्धता को दिखाता है.

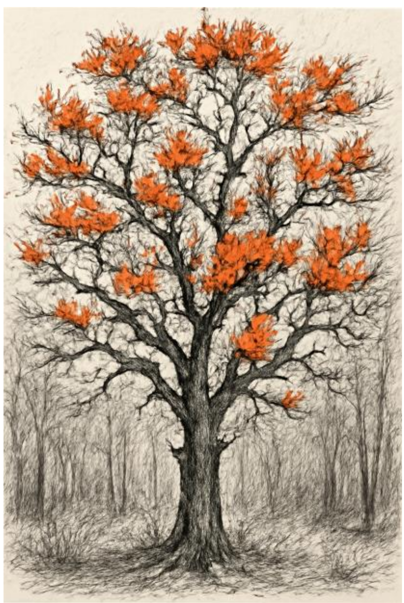

दृश्य की कल्पना

सोचिए — एक जंगल, जिसमें दूर-दूर तक हरियाली नहीं, पेड़ों की शाखाएँ खाली हैं, लेकिन बीच में खड़ा एक विशाल पेड़ नारंगी रंग के फूलों से लदा है. नीचे गिरी पंखुड़ियों ने ज़मीन को एक रंगीन चादर से ढक दिया है. हवा के हल्के झोंके के साथ फूलों की पंखुड़ियाँ उड़ती हैं, और पूरा दृश्य किसी चित्रकार के कैनवस जैसा लगता है. यह दृश्य इतना मनमोहक है कि कोई भी वहाँ खड़े होकर देर तक देखता रह जाए.

त्योहार और परम्पराओं का पलाश

पलाश का सबसे बड़ा त्योहारिक संबंध होली से है. पुराने समय में होली के रंग रासायनिक नहीं होते थे. पलाश के फूलों को तोड़कर, धूप में सुखाया जाता, फिर पीसकर और पानी में भिगोकर एक सुगंधित, चमकीला केसरिया रंग तैयार होता. यह रंग न सिर्फ सुंदर होता, बल्कि त्वचा के लिए भी लाभकारी माना जाता था.

कुछ क्षेत्रों में, वसंत पंचमी और फाल्गुन महोत्सव पर पलाश की टहनियों से मंडप सजाए जाते थे. गाँव के मेले और नृत्य-गीतों में पलाश के फूलों की मालाएँ पहनाई जाती थीं.

पलाश के फूलों का संबंध भारत के कई पर्व-त्योहारों से गहराई से जुड़ा हुआ है. विशेष रूप से वसंत ऋतु और फाल्गुन मास के दौरान यह पेड़ अपने पूरे शबाब पर होता है, और इसके चमकीले लाल-नारंगी फूल मानो उत्सव का ऐलान कर देते हैं. पारंपरिक भारतीय समाज में ऋतु-परिवर्तन को केवल मौसम का बदलाव नहीं माना जाता, बल्कि उसे उत्सव, पूजा और सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ जोड़ा जाता है. ऐसे में पलाश का खिलना लोगों के लिए शुभ संकेत और आनंद का अवसर बन जाता है.

आज की होली और पुराने समय की होली में अब बहुत सारे फर्क आ गए हैं. पहले होली के रंग फूलों से बनाए जाते थे जिसके, लेकिन मैं वीरान होकर फिर वही कहता हूँ, आधुनिक होड़ से जुडी जनसँख्या अब अपनी ही पुरानी चीज़ें भूलती जा रही हैं. वह समय ऐसा था जब होली की शुरुआत फागुन के मौसम की दस्तक से ही शुरू हो जाती थी. घरों की छतों पर

फूल सूखने शुरू हो जाते थे, बच्चे उन्हीं सूखे फुल से अपने रंग बनाया करते थे. कृष्णमूर्ति फाउंडेशन ऑफ़ इंडिया में पढ़ना मेरे लिए भी बहुत बड़ा सौभाग्य ही था. वह एक ऐसा शैक्षिक संस्था था जहाँ पर हमें हर वह चीज़ सिखाई गई जिससे हम न सिर्फ अपनी ज़िंदगी में यादों के पन्नों को बढ़ा सकें बल्कि हमें आज की ज़िन्दगी के साथ-साथ हमारी खुद की पुरानी सभ्यता के साथ जोड़ सकें.

होली की तैयारी हमारे यहाँ फूलों को सूखने से शुरू होती थी. उन्हीं सूखे फूलों से फिर रंग बनाए जाते थे और यह रंग बनाने वाले भी हमलोग ही होते थे. यही लाइफ-स्किल थी जो आज भी हमलोग के अंदर ज़िंदा है और हमें हर वह पुरानी और नई चीज़ करने के लिए प्रेरित करती है जिसे आज आम तौर पर भुला दिया जा चुका है.

पुराने समय में फूलों को तोड़कर धूप में सुखाया जाता, फिर पीसकर पाउडर बनाया जाता या पानी में भिंगोकर चमकीला केसरिया-नारंगी रंग तैयार किया जाता. यह रंग त्वचा के लिए सुरक्षित और औषधीय गुणों से भरपूर होता था. सिर्फ होली ही नहीं बल्कि कई और ऐसे त्यौहार हैं जहाँ पर पलाश के फूलों का उपयोग भी होता है और कई जगह इनकी पूजा भी होती है.

फागुन महोत्सव में भी पलाश के फूलों का विशेष महत्व रहा है. फाल्गुन मास, जो वसंत का अंतिम चरण है, उसमें ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में गाँव की गलियों, चौपालों और घरों की सजावट के लिए पलाश के फूलों का प्रयोग होता था. इन फूलों को माला के रूप में पिरोकर द्वार पर लटकाया जाता, मंदिरों के शिखरों को सजाया जाता और यहाँ तक कि पशुओं की भी सजावट में इनका उपयोग होता. यह न केवल सौंदर्य बढ़ाने के लिए, बल्कि शुभता और समृद्धि के प्रतीक के रूप में किया जाता था. कई जगहों पर फागुन की रातों में गाँव के युवक-युवतियाँ पलाश के फूलों से सजकर पारंपरिक गीत और नृत्य प्रस्तुत करते, जो सामुदायिक मेल-जोल को भी बढ़ाता था.

बसंत पंचमी के अवसर पर भी पलाश का प्रयोग देखने को मिलता है. यद्यपि इस दिन पीला रंग प्रमुख माना जाता है और सरसों के फूल का

महत्व अधिक है, फिर भी कई क्षेत्रों में पलाश के फूल पूजा-अर्चना और सजावट में उपयोग किए जाते हैं. विशेषकर मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और राजस्थान के कुछ हिस्सों में मंदिरों और घरों में वसंत के स्वागत के लिए पलाश की डालियाँ रखी जाती हैं. यह परंपरा पलाश को "ऋतु-परिवर्तन का दूत" मानने की भावना से भी जुड़ी है, क्योंकि यह पेड़ उसी समय खिलता है जब शीत ऋतु विदा ले रही होती है और गर्मी का आगमन हो रहा होता है.

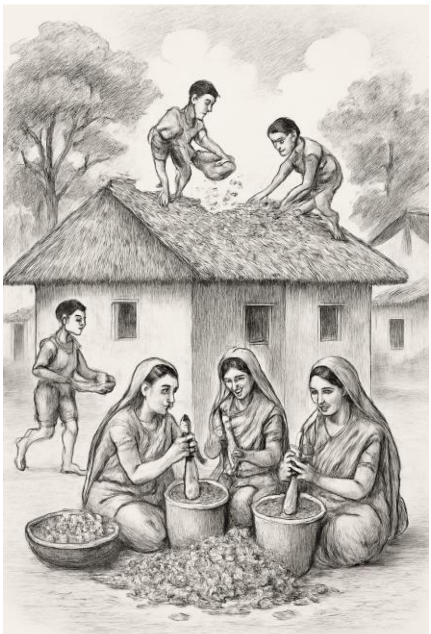

आदिवासी पर्वों में पलाश का महत्व और भी गहरा है. झारखंड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल के जंगलों और जनजातीय क्षेत्रों में इसे प्रेम, जीवन और समृद्धि का प्रतीक माना जाता है. शादी-ब्याह जैसे अवसरों पर पलाश के फूलों से मंडप सजाना एक आम प्रथा रही है. कई आदिवासी समुदाय अपने पारंपरिक नृत्यों में पलाश की मालाएँ और गहनों की तरह गूँथे फूल पहनते हैं. इन फूलों का रंग उत्साह और ऊर्जा का प्रतीक माना जाता है, और यह विश्वास भी है कि ये नकारात्मक ऊर्जा को दूर कर खुशहाली लाते

हैं. कुछ जनजातीय गीतों में पलाश के फूलों को प्रेम के दूत और मिलन के संकेत के रूप में चित्रित किया गया है.

कुछ जगहों पर फसल कटाई के पर्वों में भी पलाश की उपस्थिति देखी जाती है. जब खेतों से धान या गेहूँ की कटाई पूरी होती है और घरों में नया अनाज आता है, तब आँगन में पलाश की डाल या फूल रखकर ईश्वर और प्रकृति का आभार प्रकट किया जाता है. यह रिवाज बताता है कि कैसे पलाश केवल सुंदरता का प्रतीक नहीं, बल्कि जीवन-यापन और सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने का हिस्सा रहा है.

पलाश के फूलों का यह धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व केवल भारत तक सीमित नहीं रहा. नेपाल और बांग्लादेश के कुछ हिस्सों में भी इसे वसंत उत्सव का प्रतीक माना जाता है. किंवदंती है कि देवताओं के उत्सव में पलाश का फूल अनिवार्य रूप से शामिल किया जाता था, क्योंकि इसे अग्नि देव का प्रिय फूल माना गया है. अग्नि देव से संबंध इसकी अग्नि-सी लालिमा और यज्ञ में इसके प्रयोग से भी जुड़ता है.

आज भले ही शहरी जीवन में पलाश के फूलों का सीधा संबंध त्योहारों से कम हो गया हो, लेकिन ग्रामीण इलाकों और जनजातीय क्षेत्रों में इसकी परंपरा अभी भी जीवित है. आधुनिक समय में भी पर्यावरण संरक्षण और प्राकृतिक जीवनशैली की ओर लौटने के साथ लोग रासायनिक रंगों की जगह फिर से पलाश के फूलों से रंग बनाने की ओर आकर्षित हो रहे हैं. यह न केवल स्वास्थ्य के लिए अच्छा है, बल्कि हमारी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ाव भी बनाए रखता है.

इस तरह, पलाश का पेड़ केवल एक वनस्पति नहीं है, बल्कि यह हमारे त्योहारों, हमारी परंपराओं और हमारे सामाजिक जीवन का जीवंत हिस्सा है. चाहे वह होली की रंगीन उमंग हो, फागुन महोत्सव की सामुदायिक खुशी हो, बसंत पंचमी का स्वागत हो या आदिवासी नृत्यों की सजावट — हर जगह पलाश अपनी "वन की ज्वाला" जैसी पहचान के साथ मौजूद रहता है, लोगों को यह याद दिलाते हुए कि प्रकृति के रंग ही जीवन का सबसे बड़ा उत्सव है.

औषधीय महत्व

आयुर्वेद और लोक चिकित्सा में पलाश का उपयोग प्राचीन काल से हो रहा है. इसकी छाल का काढ़ा पेट के रोगों में लाभकारी है. फूलों का लेप त्वचा रोगों में उपयोग किया जाता है. बीज कृमिनाशक (Anthelmintic) गुण रखते हैं. गोंद को कमर कस के नाम से जाना जाता है, जो जोड़ों के दर्द और कमजोरी में उपयोगी है.

पलाश की कहानी में कई ऐसे केंद्र बिंदु हैं जिसके बारे में जानना ज़रूरी भी है ताकि इस पेड़ को सिर्फ इसकी सुंदरता के लिए ही नहीं बल्कि इसकी अच्छाइयों से भी इसे जाना जाए. औषधीय दृष्टि से यह वृक्ष बेहद मूल्यवान है. आयुर्वेद, यूनानी चिकित्सा और लोक उपचार पद्धतियों में इसके फूल, पत्ते, बीज, छाल और गोंद का प्रयोग प्राचीन काल से होता आया है. इसके विभिन्न अंगों में जीवाणुरोधी, सूजन-रोधी, कृमिनाशक और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले गुण पाए जाते हैं.

फूलों के औषधीय गुण

पलाश के फूल चमकीले नारंगी-लाल रंग के होते हैं, जिनमें औषधीय तत्व भी मौजूद हैं. इन फूलों का लेप त्वचा के रोग जैसे खुजली, फोड़े-फुंसी और संक्रमण में लाभकारी माना जाता है. पारंपरिक होली में फूलों से तैयार प्राकृतिक रंग न केवल त्वचा के लिए सुरक्षित होते थे, बल्कि उनमें जीवाणुरोधी गुण भी पाए जाते हैं. फूलों का अर्क आंखों की लालिमा और थकान कम करने में उपयोगी है. साथ ही, फूलों का काढ़ा मूत्रवर्धक (Diuretic) प्रभाव रखता है, जो मूत्र संबंधी विकार और जलन में आराम देता है.

पत्तियों के औषधीय गुण

पलाश की पत्तियों में एंटी-इंफ्लेमेटरी गुण होते हैं, जो सूजन और जोड़ों के दर्द को कम करने में सहायक हैं. गर्म की गई पत्तियों को प्रभावित स्थान पर बांधने से सूजन और दर्द में राहत मिलती है. ताज़ी पत्तियों का रस या लेप घाव और कटने-छिलने की जगह पर लगाने से संक्रमण कम होता है

और घाव जल्दी भरते हैं. पारंपरिक रूप से पत्तों का उपयोग पत्तल और दोना बनाने में भी होता है, जो भोजन को स्वच्छ और सुरक्षित रखते हैं.

बीजों के औषधीय गुण

पलाश के बीज कृमिनाशक (Anthelmintic) माने जाते हैं और आंतों के कीड़े नष्ट करने में उपयोगी हैं. बीजों का पेस्ट त्वचा के रोग जैसे दाद, खुजली और सफेद दाग (Leucoderma) में लगाया जाता है. बालों की देखभाल में भी बीजों का पेस्ट या तेल सिर की त्वचा के संक्रमण और रूसी को कम करने में सहायक है.

छाल के औषधीय गुण

पलाश की छाल का काढ़ा दस्त और पेचिश में लाभकारी माना जाता है. इसे पानी में उबालकर पीने से बुखार और शरीर की गर्मी में भी आराम मिलता है. छाल का उपयोग रक्त शोधन के लिए किया जाता है, जिससे त्वचा संबंधी रोगों में भी लाभ मिलता है.

गोंद (कमर कस) के औषधीय गुण

पलाश के पेड़ से प्राप्त गोंद, जिसे "कमर कस" कहा जाता है, हड्डियों को मज़बूत करने और कमर तथा घुटनों के दर्द में विशेष रूप से लाभकारी है. दूध के साथ इसका सेवन शरीर को ताकत देता है और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है. प्रसव के बाद महिलाओं को शक्ति और ऊर्जा प्रदान करने के लिए कमर कस के लड्डू बनाए जाते हैं, जो पारंपरिक चिकित्सा का हिस्सा हैं.

पलाश के फूलों का काढ़ा गले के संक्रमण और खांसी में राहत देता है. इसके बीज और फूल दोनों में एंटी-फंगल और एंटी-बैक्टीरियल गुण पाए जाते हैं. यह वृक्ष किडनी की सफाई और मूत्र मार्ग के संक्रमण (Urinary Tract Infection) में भी सहायक माना जाता है.

अब सोच लीजिये यह पेड़ हमलोग के लिए कितना ज़रूरी है, ऐसे इंसान नहीं हो सकते कभी. पेड़ एक है लेकिन उसके हर एक अंग किसी भी आम इंसान के लिए फायदेमंद हैं.

पर्यावरण में भूमिका

पलाश सूखे और बंजर इलाकों में भी आसानी से उग जाता है. इसकी गहरी जड़ें मिट्टी को बाँधती हैं और कटाव रोकती हैं. यह अनेक पक्षियों, मधुमक्खियों और तितलियों का घर है. इसके फूलों का रस मधुमक्खियों के लिए अमृत है और इसके बीजों से पक्षी भोजन पाते हैं.

परागणकर्ताओं के लिए जीवनदायिनी भूमिका

पलाश के फूल शहद जैसे मीठे रस (नेक्टर) से भरपूर होते हैं. ये फूल मुख्य रूप से फरवरी से अप्रैल के बीच खिलते हैं, जब जंगलों में फूलों की कमी होती है. इस समय मधुमक्खियाँ, तितलियाँ, भौंरे और कई प्रकार के पक्षी इन फूलों से भोजन प्राप्त करते हैं. यह केवल उनके जीवन का सहारा नहीं है, बल्कि इससे आसपास के अन्य पौधों का भी परागण होता है. इस प्रकार, पलाश अप्रत्यक्ष रूप से फसल उत्पादन और पौधों की प्रजातियों के संरक्षण में मदद करता है.

मिट्टी संरक्षण और उर्वरता

पलाश के पेड़ की जड़ें गहरी और मजबूत होती हैं, जो मिट्टी को पकड़कर कटाव से बचाती हैं. यह विशेष रूप से उन क्षेत्रों में उपयोगी है, जहाँ ढलान या बंजर ज़मीन होती है. इसके अलावा, यह फैबेसी परिवार का सदस्य है, जिसका अर्थ है कि इसकी जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले सूक्ष्मजीव रहते हैं. ये सूक्ष्मजीव वायुमंडल से नाइट्रोजन लेकर मिट्टी में मिला देते हैं, जिससे भूमि की उर्वरता बढ़ती है और आसपास के पौधों को भी लाभ मिलता है.

जैव विविधता का आश्रय

पलाश केवल परागणकर्ताओं को ही नहीं, बल्कि कई अन्य जीवों को भी आश्रय देता है. इसकी शाखाओं पर पक्षी अपने घोंसले बनाते हैं, तो तने पर कवक और लाइकेन पनपते हैं. इसकी छाया में कई छोटे पौधे और झाड़ियाँ सुरक्षित रूप से उग पाती हैं. इस प्रकार, यह एक छोटा-सा पारिस्थितिक तंत्र बनाता है, जिसमें अनेक जीव-जंतु और पौधे परस्पर जुड़े रहते हैं.

वन पुनर्जीवन में योगदान

पलाश का एक विशेष गुण यह है कि यह कम उपजाऊ और सूखी मिट्टी में भी आसानी से उग जाता है. यही कारण है कि इसे बंजर और क्षतिग्रस्त भूमि पर लगाया जाता है, ताकि वहाँ धीरे-धीरे हरियाली लौट सके. जब यह पेड़ वहाँ पनपने लगता है, तो इसकी छाया और पत्तियों से मिट्टी में नमी और जैविक पदार्थ बढ़ते हैं, जिससे अन्य पौधों को भी बढ़ने का अवसर मिलता है. इस तरह यह वन पुनर्जीवन (Forest Regeneration) की प्रक्रिया में एक अग्रणी भूमिका निभाता है.

जलवायु संतुलन में भूमिका

अन्य वृक्षों की तरह पलाश भी वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करता है और ऑक्सीजन छोड़ता है, जिससे वायु की गुणवत्ता सुधरती है और जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद मिलती है. इसके अलावा, पत्तियों का मौसमी झड़ना और फिर से उगना स्थानीय तापमान और आर्द्रता को संतुलित करने में मदद करता है. सूखे क्षेत्रों में यह पेड़ गर्मी को कम करने और हवा में नमी बनाए रखने में सहायक होता है.

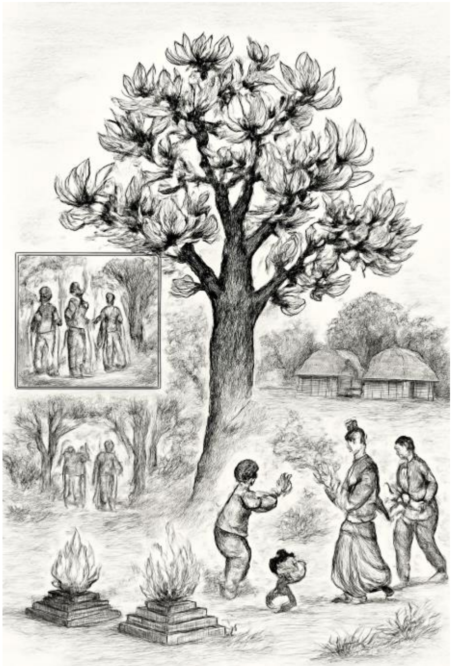

प्राकृतिक रंग और पर्यावरण संरक्षण

पलाश के फूलों से निकलने वाला प्राकृतिक रंग सदियों से होली और अन्य पारंपरिक आयोजनों में इस्तेमाल होता रहा है. यह रंग पूरी तरह से बायोडिग्रेडेबल और त्वचा के लिए सुरक्षित है. आधुनिक समय में, जब रासायनिक रंग पर्यावरण और स्वास्थ्य दोनों के लिए हानिकारक साबित हो रहे हैं, पलाश का यह गुण और भी महत्वपूर्ण हो जाता है. इसका प्रयोग न केवल पर्यावरण को प्रदूषण से बचाता है, बल्कि जल स्रोतों में रसायनों के फैलाव को भी रोकता है.

पानी और मिट्टी के चक्र में योगदान

पलाश का पर्णपात (पत्तियों का गिरना) प्राकृतिक खाद के रूप में मिट्टी को पोषण देता है. पत्तियाँ गलकर मिट्टी में जैविक पदार्थ (Humus) बनाती हैं, जिससे पानी सोखने की क्षमता बढ़ती है. इससे भूजल पुनर्भरण में मदद

मिलती है. यह विशेष रूप से सूखे और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में जल संरक्षण के लिए उपयोगी है.

सांस्कृतिक और पर्यावरणीय जुड़ाव

पलाश का पर्यावरणीय महत्व इसके सांस्कृतिक जुड़ाव से भी गहराई से संबंधित है. होली, फागुन महोत्सव और आदिवासी उत्सवों में इसका प्रयोग केवल एक परंपरा नहीं, बल्कि एक पर्यावरण-संरक्षण का तरीका भी है. जब लोग पलाश के फूलों से रंग बनाते हैं या इसे सजावट में प्रयोग करते हैं, तो वे अनजाने में पर्यावरण-मित्र (eco-friendly) विकल्प चुनते हैं.

साहित्य और कला में पलाश

पलाश का स्थान हिंदी, उर्दू और बांग्ला साहित्य में अत्यंत विशेष है. अनेक कवियों ने इसे 'वसंत का दूत' कहा है. प्रसिद्ध कवि सुमित्रानंदन पंत, रामधारी सिंह 'दिनकर' और महादेवी वर्मा ने अपने काव्य में इसके रंग और रूप का प्रभावशाली उपयोग किया है. चित्रकला में भी, विशेषकर

बंगाल और मध्य प्रदेश की लोककला में, पलाश के फूल अक्सर प्राकृतिक उत्सव और जीवन-ऊर्जा के प्रतीक के रूप में उभरते हैं.

यदि लिखने का मन हो, तो यह निश्चित है कि पलाश न आपको छोड़ेगा, न मुझे. अनेक महान कवियों और साहित्यकारों ने पलाश पर असंख्य कविताएँ और रचनाएँ लिखीं हैं, और इसे अपने सृजन का अभिन्न अंग बनाया है. कवियों के लिए पलाश का फूल एक ऐसा सदाबहार विषय है, जिसका प्रयोग वे बार-बार, हर नए पन्ने पर कर सकते हैं.

उदाहरण के तौर पर, कवि सुमित्रानंदन पंत की कविता **"पलाश"** में उन्होंने इसके फूलों का वर्णन आग के धधकते अंगारों की तरह किया है. कविता के कुछ अंश इस प्रकार हैं—

मरकत वन में आज तुम्हारी नव प्रवाल की डाल
जगा रही उर में आकुल आकांक्षाओं की ज्वाल!

...

शत-शत पुष्पों की, रंगों की रत्नच्छटा, पलाश,
प्रस्तुत नहीं कर सकती यह वैभव, पुष्कल उल्लास!

इस कविता में पंत ने पलाश के फूल को जीवन की तीव्रता, सौंदर्य और क्षणभंगुरता का प्रतीक माना है. इसका अग्नि-सा लाल रंग जोशीले उत्साह, प्रेम और गहरी भावनाओं का रूपक बन जाता है. कवि के अनुसार, जैसे पलाश के फूल कुछ समय के लिए अपनी अग्नि-सी आभा से चारों ओर को आलोकित करते हैं और फिर मुरझा जाते हैं, वैसे ही मानव जीवन के जोश, यौवन और भावनाओं के क्षण अत्यंत सुंदर होते हैं, किंतु स्थायी नहीं.

कवि ने प्रकृति के चक्र, संघर्षों के बीच भी नवीकरण की शक्ति और कठिनाइयों के बावजूद चमकते रहने के साहस को रेखांकित किया है. पलाश के लाल फूल केवल सुंदरता ही नहीं बिखेरते, बल्कि यह संदेश भी देते हैं कि जीवन अस्थिर होते हुए भी उसे पूरी तरह जीना चाहिए और हर क्षण के मूल्य को समझना चाहिए.

वर्तमान समय में पलाश

शहरीकरण की दौड़ में पलाश के पेड़ों की संख्या कम हो रही है. जहाँ पहले गाँव की गलियों और खेतों की मेड़ पर पलाश के पेड़ आम थे, वहाँ अब कंक्रीट की दीवारें और भवन खड़े हैं. फिर भी, कई जगह इसे फिर से लगाने के प्रयास हो रहे हैं — क्योंकि यह न सिर्फ सुंदर है, बल्कि पर्यावरण के लिए भी अनमोल है.

वाराणसी से सोनभद्र जाते समय जहाँ से विंध्य की पहाड़ियां दिखाई पड़ती हैं, वही से आपको कई सारे पलाश देखने को मिलेंगे. ढाक, टेसू या पलाश की कहानी उन्हीं महान हस्तियों की कहानी जैसी है जिसने आम जनता और अपनी संस्कृति के लिए किया तो बहुत कुछ लेकिन पाया बहुत कम. और इसी रिजल्ट के साथ इन्होंने अपना हौसला कभी नहीं खोया, उसी के साथ आगे बढ़ते चले आए और यक़ीनन हमेशा आगे बढ़ते भी रहेंगे.

गाछ : पीड़ा, प्रेम, पुनर्जन्म और पूजा – बंगाल की आत्मकथा

एक वृक्ष की बात

गहरा सन्नाटा, जिसमें गाछ की छाया, धूप, उसकी जड़ें, उसकी शाखाएं— सब मिल जाते हैं. एक वृक्ष, जो जीवन देता है और शरण भी, जिसकी छाया में बच्चा खेलता है, बुजुर्ग सुस्ताता है, कलाकार रचता है, और माँ अपने शिशु को आत्मिक शांति का पाठ पढ़ाती है. बंगाल की संस्कृति में यह गाछ सिर्फ़ पेड़ नहीं, साक्षात जीवन है.

उसकी हर जड़, हर छाल, हर पत्ता अतीत का गवाह है. मिट्टी की गंध उसमें अपने इतिहास की कहानियाँ लेकर आती है. बहती हुई हुगली नदी के किनारे, जब गाछ के तले परिवार बैठता है, तो वहाँ सिर्फ़ एक शांत वातावरण नहीं, पीढ़ियों की कहानी हवा में तैरती है.

गाछ के तने पर उंगलियों की छाप, शाखाओं पर चिठ्ठियां, हवा में आशाओं की मिठास बसी है. यह पेड़ केवल भोजन का साधन नहीं, यह भूख का साथी, दुख का रक्षक और भक्ति का केंद्र है. एक बहुउद्देशीय जीवन, जहाँ प्रत्येक मौसम की धड़कन धूल और पत्तियों में छुपी रहती है.

अंग्रेजों की कड़वी प्रेम कहानी – बंगाल के पानी में जहर

कितनी विडंबना है! एक प्रेम कहानी, जिसने बंगाल को रोग दे दिया. यूरोप का एक गवर्नर, हिंदुस्तान का कलेक्टर – वॉरेन हेस्टिंग्स – और एक जर्मन युवती, मैरियन. उनकी प्रेमगाथा बंगाल में नदियों, तालाबों, पोखरों में पानी का भरोसा, जीवन का स्पंदन छीन लेती है.

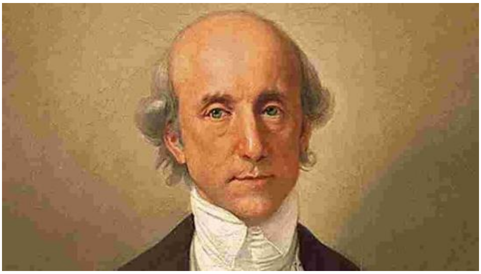

1769, वसंत ऋतु – समुद्र के तपते पानी में प्रेम का अलौकिक प्रवास. वॉरेन हेस्टिंग्स, उम्र के उस पड़ाव पर, जब मनुष्य जड़ें तलाशता है, एक कलाकार की पत्नी मैरियन से प्रेम कर बैठता है. जहाज के सूने दिनों में, अंग्रेज गवर्नर और जर्मन युवती के बीच संबंध बनता है. पहली बार बंगाल की धरती पर प्रेम का स्वाद एक विदेशी पौधे के रूप में उतरता है.

मैरियन को उपहार देने के लिए वॉरेन हेस्टिंग्स दक्षिण अमेरिका से जलकुंभी लेकर आए. वह एक सुंदर, बैंगनी फूलों वाली बेल थी – पानी पर तैरती, लेकिन अपने साथ विनाश लेकर आती. जलकुंभी, जिसे बंगाली में 'कोचुरी पाना' कहा जाता है.

इस बेल ने बंगाल के नदियों, तालाबों, झीलों को गला दिया. किलोमीटर-किलोमीटर पानी की सतह पर जलकुंभी की मोटी चादर बिछ जाती. सूर्य

का प्रकाश रुक जाता, पानी में ऑक्सीजन की कमी हो जाती, मछलियाँ मर जातीं. खेत, गाँव, जीवन सब बेजान हो गया.

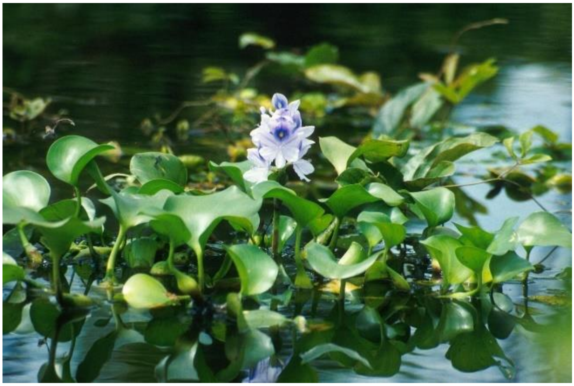

लोगों ने प्यास बुझाने के लिए उसी पानी का सहारा लिया जिसमें धीरे-धीरे जलकुंभी का जहर फैल रहा था. गाँवों की हरी-भरी धारा गई, तालाब रह गए सिर्फ़ नाम के लिए. अंग्रेज चले तो गए, लेकिन एक पौधा, एक प्रेम-कथा, एक पर्यावरणीय आक्रोश छोड़ गए.

प्रेम कभी-कभी बहुत निर्दोष लगता है; पर उसका परिणाम जानना असंभव. मैरियन की यही बेचैन मुस्कान बंगाल में, पीढ़ियों के लिए प्रलय बन गई.

'प्यारी को दिए गए फूल की सुर्ख छाया में गाँव घुटता रहा,

नदी पर बिछी बेल का हर पत्ता संताप में ढलता रहा.

जलकुंभी की झील में एक प्रेम कहानी का ज़हर उतरता रहा.'

जलकुंभी का महाकाव्य: मौत की बेल, बंगाल की पीड़ा

- 19वीं शताब्दी के अंत तक, बंगाल की नदियाँ, तालाब, पोखर जलकुंभी के जाल में फँस गए थे.
- इसमें पानी की गुणवत्ता बिगड़ गई, पीने और सिंचाई योग्य पानी की मात्रा घट गई.

- मछली, जिसे बंगाल के भोजन में बेहद अहम माना जाता है, मरने लगी.
- किसान अपने खेत में सिंचाई के लिए पानी पाने की जुगत में निकल पड़े; एक तरफ़ अकाल, दूसरी तरफ़ पानी का संकट.

यह प्रेम कथा, जिसने एक पौधा लाकर बंगाल को समृद्ध दिखाना चाहा, धीरे-धीरे मौत का प्रतीक बन गई. गाँव की स्त्री, जो कभी अपने बच्चों को पोखर से पानी लाकर नहलाती थी, जलकुंभी में फँसकर रो पड़ती थी. 'क्यों आई थी यह बेल हमारी मिट्टी में? इसका प्रेम हमें मिली बीमारी है.'

1943 का बंगाल अकाल: भूख और मौत का संग्राम

कीचड़ में पैर धँसकर उतरती थी भूख; पानी की सतह पर जलकुंभी की मोटी परत. बंगाल का कालखण्ड 1943—आज भी आँसू से भरा है.

30 लाख से अधिक लोगों की मृत्यु. कोलकाता की सड़कों पर बिछी लाशें, गाँवों की गलियों में मौत की हवा.

"Hungry Bengal" किताब बताती है—एक माँ अपने बच्चे को भूखा देखती थी, तो पेड़ का तना काटकर उसे चबाने को देती थी. बच्चों को पेड़ की जड़ें खिलाई जाती थीं. पेड़, जो खाने के लिए भगवान बने थे.

Noakhali, Bakarganj, Rangpur—हर जगह भूख का तूफान. खेत बिक गए, घर बिक गए, लोगों की पहचान मिट गई. अंग्रेज अफसरों की सड़कों पर भारत के गरीब दम तोड़ रहे थे.

सरकार, युद्ध के बहाने अन्न छीन रही थी.

"कोलकाता की सड़कों पर हर रोज़ 120 से अधिक लाशें मिलतीं,

अंग्रेजी अफसरों की मूर्छित नियति के बावजूद भारत हारता रहा.

अकाल के आँसू ने पूरे Bengal को नंगा कर दिया—भूख, आँसू, मौत."

बंगाल की आत्मा चीख उठी:

"माँ, क्या अब पेड़ भी नहीं बचेगा?

पेड़ का छाल ही भोजन बनेगा?"

माँ के उत्तर में कोई शब्द नहीं था, केवल गाछ की छाया थी.

भूख का प्रतिरोध: पेड़ और मनुष्य

गाछ—वह साथी, जो हर दर्द, हर दुख में हमारे साथ रहा.

पेड़ का तना, उसकी जड़, उसकी अमूल्य छाँव, संकट के समय जीवन की डोर बन गई.

बंगाल में, भूख, मौत, अपमान के बीच, गाछ ने भूखे बच्चों को सहारा दिया.

मिट्टी की गोद में, जब अन्न खत्म हो गया, गाछ का तना अन्न बन गया—पीड़ा में भी जीवन, जीवन में भी करुणा.

लोगों ने पेड़ की जड़ें चबाकर भूख मिटाई; प्रकृति का यह अमूल्य संबंध कभी टूट नहीं सका.

बंगाल का सांस्कृतिक पुनरुत्थान: पूजा का गाछ

वक्त बदला, आज वही बंगाल हर त्योहार में गाछ की पूजा करता है.

दुर्गा पूजा, दिवाली, काली पूजा—हर पूजा में पेड़ों की टहनी, पत्ते अनिवार्य हैं.

माँ दुर्गा का स्वागत सिलापट्टा और केले के पेड़ से होता है.

गाछ के बिना पूजा अधूरी है.

यह पूजा श्रद्धा है, परंपरा है, कृतज्ञता है.

“ग्रीष्म में पेड़ की छाया शीतलता देती है,

रोती माँ को तना सहारा देता है.

जब भूख आई, पेड़ ने अपना तन भोजन बना दिया.

आज पूजा में उसकी टहनी भगवान बन गई.”

गाछ – इतिहास, प्रेम और उपासना की छाया

बंगाल का इतिहास हर मोड़, हर वियोग, हर प्रेमकथा में पेड़ के तने को छूता है.

वाजिद अली शाह हों, रवींद्रनाथ टैगोर हों, लोकगीतों में गाछ की चर्चा मिलती है.

Tagore की कविता ‘Growing Trees’ बंगाल की आत्मा में पेड़ों की गहराई को दिखाती है—

“जीवन को झूमता देखो,

गाछ की छाया में—

संगीत घुल जाता है,

पीड़ा मिट जाती है.”

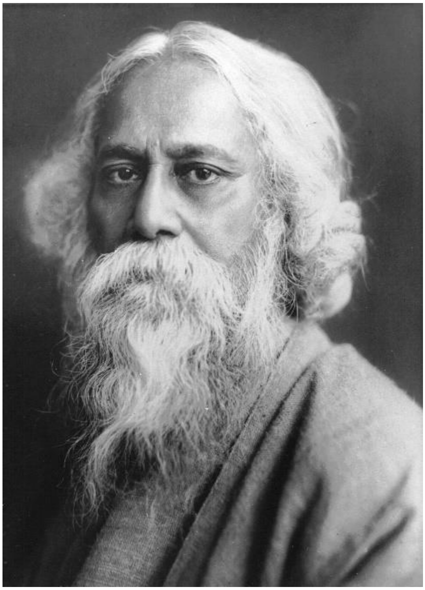

गाछ, हमारी संस्कृति का अंग, बेशुमार धर्म, बेशक प्रेम, अपार पीड़ा का साथी.
कभी जलकुंभी जहर बनकर आया, कभी अकाल में भोजन बना.

हर कहानी में, गाछ का हिस्सा है:

"कहानियाँ बदल जाती हैं,

पर पेड़ की छाया नहीं बदलती.

वह जीवन की संजीवनी है—

भूख में, दर्द में, पूजा में."

गाछ के तने की कहानी – कब्रगाह, मंदिर और आश्रय

"मिट्टी की खुशबू पेड़ों के तने में बसी है,

गाछ की छाया मंदिर की छाया है.

पूजा के गीत में उसके पत्ते भगवान हैं."

बंगाल में कई लोककथाएँ गाछ के बिना अधूरी हैं.

गाछ, किसी का शहीद है, किसी के लिए मंदिर, किसी के लिए कब्रगाह,

“जिसने भूख में सहारा दिया,

जिसने प्रेम में छाया दी,

जिसने पूजा में आत्मा दी.”

अंग्रेजी इश्क़, आकाल और आज – गाछ का महाकाव्य

प्रेम की कहानी, जो मैरियन से शुरू हुई—आज तक बंगाल की आत्मा है.

वह बेल, जो उपहार के रूप में आई, आज भी बंगाल के हर पोखर में मौत की कहानी सुनाती है.

आकाल, भूख, शर्मिंदगी—सब पेड़ की जड़ों में समाई है, पूजा, भक्ति, श्रद्धा, पुर्नव जीवन—सब गाछ की शाखाओं में.

इतिहास बदल गया, पर गाछ का संघर्ष नहीं बदला. आज जब बंगाल का बच्चा पूजा में पत्ते चढ़ाता है, तो उसमें उसकी संघर्ष-गाथा बसी है. अभी

भी पेड़ की छाया बचपन की हँसी है, माँ के आँसू को पोंछती है, दादी की कहानी में जीवन .के हर संघर्ष की व्यापकता होती है.

बंगाल अकाल 1943: और इतिहास की गहराई

अकाल का सबसे बड़ा असर किसान परिवारों पर पड़ा. हजारों किसानों ने अपने खेत पहिले अंग्रेजों को बेच दिए, ताकि परिवार का पेट भर सके. नदी का पानी जहरीला हो गया, क्योंकि जलकुंभी ने तालाबों की शुद्धता छीन ली. अकाल के दिनों में गाँव की औरतें पोखर से टहनी तोड़तीं, छाल को उबालकर बच्चों को खिलाती थीं. कई इतिहासकारों ने लिखा: अंग्रेजों की सामरिक नीतियाँ, युद्ध का बहाना, मार्केटिंग कंट्रोल—सब बंगाल को निराशा, भूख और मौत में झोंकते रहे.

'Hungry Bengal' में लिखा है:

"बच्चे जब भूखे थे, माँ ने पेट काटा,

पेड़ की छाल को संभालकर भोजन बनाया.

मौत की हवा गाँव में घुमती थी,

घर के आँगन में तना चबाने का अभ्यास था.

अकाल में अनुशासन नहीं, केवल दर्द था."

लाखों बच्चों की मौत, सिर्फ़ एक प्रशासनिक अक्षमता नहीं, बल्कि संस्कृति, प्रकृति और जीवन का अपमान था.

गाछ ने उन कठिन दिनों में मंजूरी दी, पेड़ की छाल, जड़ें—सब भगवान बना. अकाल के समय गाछ पूजा का हिस्सा नहीं, बल्कि अस्तित्व का सहारा था.

प्रकृति और मनुष्य का संवाद

गाछ का हर पत्ता, हर जड़, हर छाल मनुष्य से बात करता है. सुख के दिनों में उसकी छाँव शीतलता, परेशानी में उसके तने पर भरोसा. बंगाल के लोकगीत, कविता, कला—हर जगह पेड़ चर्चा में हैं. माँ अपने बच्चे को

गाछ के नीचे जन्म देती है, कवि अपनी कविता वहाँ लिखता है, बुजुर्ग उस तले जीवन के अर्थ खोजता है.

"साँझ के समय, मंदिर की घंटियों के साथ

हर पेड़ पूजा में शामिल होता है.

प्रकृति और मनुष्य का संवाद उसी में है."

आज की पूजा – कल की पीड़ा

आज जब बंगाल में दुर्गा पूजा होती है, तो हर घर, हर मंदिर में गाछ की टहनी चढ़ाई जाती है.

अब यह केवल पूजा का औजार नहीं, बल्कि तकलीफों की स्मृति, अस्तित्व का प्रतीक बन गया है.

हर भोग, हर भक्ति, हर उत्सव में पेड़ की छाया इतिहास गाती है. गाछ की पूजा अब सिर्फ़ परंपरा नहीं, कृतज्ञता है उन दिनों की जब पेड़ों ने भूख मिटाई, जीने का साहस दिया.

"माँ दुर्गा की आरती में वृक्ष का स्पर्श

रोग, भूख, प्रेम सबका संग है.

यह गाछ जीवन है, भूख में भोजन,

आंसू में आशा,

प्यार में प्रलय,

पूजा में शांति.”

अंतिम शब्द

“गाछ: A Literature of Trees” केवल किताब नहीं, यह बंगाल की आत्मा, इतिहास, भूख, प्रेम, और पूजा की संक्षिप्त गाथा है.

माँ के आँसू, बच्चे की मुस्कान, पेड़ की छांव, अंग्रेजी प्रेम की विडंबना, अकाल की हाहाकार सबके बीच गाछ चुपचाप खड़ा है.

कभी वह मौत को चकमा देता है, कभी भगवान बन जाता है.

गाछ ही जीवित, गाछ ही मरता है, गाछ ही पुनर्जन्म देता है.

इस किताब का हर शब्द, हर कहानी, हर आँसू उस वृक्ष को समर्पित है— जिसने जीवन को छू लिया.

यह रचना है उस पीड़ा, उस प्रेम, उस भक्ति, उस जिजीविषा की, जो गाछ से जन्मी.

और अंततः, यह वही आवाज़ है:

"ना सिर्फ़ पूजा में,

ना सिर्फ़ भूख में,

हर जीवन, हर इतिहास में,

गाछ ही है, गाछ ही रहेगा."

यही थी मेरी ओर से गाछ की कहानी: कुछ और पेड़ भी कतार में हैं. यह पुस्तक जल्द लौटेगी कुछ और कहानियों के साथ.